महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya

(A Central University Established by Parliament by Act No. 3 of 1997)

एमएसडब्ल्यू पाठ्यक्रम द्वितीय वर्ष

(सत्र 2014-15 हेतु)

MSW-108

सामाजिक कल्याण प्रशासन, नीति और नियोजन

दूर शिक्षा निदेशालय

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

पोस्ट – हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा – 442001 (महाराष्ट्र)

मार्ग निर्देशन समिति

प्रो. गिरीश्वर मिश्र
कुलपति, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

प्रो. आनंद वर्धन शर्मा
प्रतिकुलपति, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

प्रो. अरबिंद कुमार झा
निदेशक, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

पाठ्यचर्या निर्माण समिति

प्रो. मनोज कुमार
निदेशक – म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. मिथिलेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. शिवसिंह बघेल
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

श्री अमोद गुर्जर
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. शंभू जोशी
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं पाठ्यक्रम संयोजक, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

संपादन मंडल

प्रो. मनोज कुमार
निदेशक – म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. मिथिलेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. शंभू जोशी,
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं पाठ्यक्रम संयोजक, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

इकाई लेखन

खंड-1
डॉ. मिथिलेश कुमार

खंड-2
डॉ. शंभू जोशी

खंड-3
श्री सुशील कुमार पाण्डेय

कार्यालयीन एवं मुद्रण सहयोग

श्री विनोद वैद्य
अनुभाग अधिकारी, दू.शि. निदेशालय

सुश्री शिल्पा एवं श्री प्रवेश कुमार
सहायक, दू.शि. निदेशालय

डॉ. महेन्द्र प्रसाद
सहायक संपादक, दू.शि. निदेशालय

डॉ. मेघा आचार्य
प्रूफ रीडर, दू.शि. निदेशालय

सुश्री राधा
टंकक, दू.शि. निदेशालय

अनुक्रम

क्र.सं.	खंड का नाम	पृष्ठ संख्या
1	खंड 1 समाज कल्याण प्रशासन	4-64
2	खंड 2 सामाजिक नीति	66-119
3	खंड 3 सामाजिक नियोजन	121-173

ज्ञान शांति मैत्री

MSW-108 सामाजिक कल्याण प्रशासन,नीति और नियोजन

खंड परिचय

प्रिय विद्यार्थियों,

एमएसडब्ल्यू पाठ्यक्रम के द्वितीय वर्ष के **प्रश्नपत्र MSW-108 'सामाजिक कल्याण प्रशासन, नीति और नियोजन'** में आपका स्वागत है। इस प्रश्नपत्र को तीन खंडों में विभाजित किया गया है।

पहला खंड समाज कल्याण प्रशासन पर केंद्रित है। इसमें समाज कल्याण प्रशासन की अवधारणा, इतिहास, प्रकृति , सिद्धांत और कार्यक्षेत्र को समझाया गया है। इस खंड में यह भी स्पष्ट किया गया है कि समाज कल्याण संगठन क्या है और समाज कल्याण सेवाओं का प्रबंधन किसप्रकार किया जाता है। अंत में समाज कल्याण प्रशासन और सामाजिक नीति के आपसी संबंधों पर प्रकाश डाला गया है।

दूसरा खंडसामाजिक नीति से संबंधित है। इस खंड में सामाजिक नीति का परिचय, प्रारूप और सिद्धांतों पर प्रकाश डाला गया है। भारतीय संविधान में सामाजिक नीति से संबंधित प्रावधानों का भी उल्लेख किया गया है। इसके अतिरिक्त भारत में विभिन्न सामाजिक नीतियों और पंचवर्षीय योजनाओं में क्रियान्वित सामाजिक नीति का विवरण भी प्रदान किया गया है।

तीसरे खंड में सामाजिक नीति पर प्रकाश डाला गया है। सामाजिक नीति की अवधारणा, अर्थ, परिभाषा, उद्देश्य, प्रक्रिया, सिद्धांत इन सभी का उल्लेख किया गया है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में सामाजिक नियोजन का वर्णन किया गया है। इसके साथ सामाजिक एवं सतत विकास जैसी नवीन अवधारणाओं को भी रेखांकित किया गया है।

खंड 1

समाज कल्याण प्रशासन

इकाई 1

समाज कल्याण प्रशासन : अवधारणाएँ, इतिहास एवं प्रकृति

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 समाज कल्याण प्रशासन की परिभाषा

1.3 समाज कल्याण प्रशासन की विशेषताएँ

1.4 भारत में समाज कल्याण प्रशासन का इतिहास

1.5 समाज कल्याण प्रशासन का स्वरूप

1.6 व्यवसाय के रूप में समाज कल्याण प्रशासन

1.7 सारांश

1.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- समाज कल्याण प्रशासन की संकल्पना अर्थात समाज कल्याण, सेवा, प्रशासन और सामाजिक प्रशासन का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- समाज कल्याण प्रशासन के अर्थ, विशेषता और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को रेखांकित कर सकेंगे।
- समाज कल्याण प्रशासन के प्रकृति की व्याख्या कर सकेंगे।
- एक व्यवसाय के रूप में समाज कल्याण प्रशासन का विश्लेषण सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

सामान्य अर्थ में सामाजिक अभिकरण तथा सरकारी व गैर-सरकारी कल्याण् कार्यक्रमों से सम्बन्धित प्रशासन को समजा कल्याण प्रशासन कहते है। यह समाज कार्य की ऐसी सहायक प्रणाली/अप्रत्यक्ष विधि या सामार्थ्य प्रणाली है जो उन सेवाओं को कार्यान्वित करती है जो व्यक्तिगत समाज कार्य, समूह समाज कार्य और सामुदायिक संगठन के अन्तर्गत प्रदान की जाती है। यह सरकारी संस्थाओं में सामाजिक

अधिनियम को कार्यान्वित करता है तथा लोगों की सेवा में कानूनों नियमों तथा नियंत्रणो का रूपान्तरण करता है।

1.2 समाज कल्याण प्रशासन की परिभाषा

समाज कल्याण प्रशासन का तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया से है जिसके द्वारा समाज कल्याण क्षेत्र की सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र की समाज कल्याण संस्थाओं का प्रशासन व संगठन किया जाता है।उसके अन्तर्गत वे सभी क्रियाएँ आती है जो किसी संस्था के कार्यक्रम को व्यावहारिक रूप देने में सहायता करती है। समाज कल्याण प्रशासन का व्यावहारिक रूप सामान्य प्रशासन प्रथा सन के ही समान है परंतु इसमें बुनियादी भेद यह होता है कि उसमें सभी स्तरोंपर मानवता और जनतांत्रिकता का अधिक से अधिक रूपात करके ऐसे शक्तियों या वर्ग से संबंधित प्रशासन किया जाता है जो बाधित होते है। अत: प्रशासक के लिए विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है। उसके लिए समाज कार्य के तरीके सामाजिक निदान के दंगो, समूह तथा शक्ति की आवश्यकताओं तथा उक्त संस्था से संबंध आदि का ज्ञान आवश्यक होता है।

जॉन सी. किडने (1950) के अनुसार, "सामाजिक सेवाओं में रूपांतरित करने की प्रक्रिया समाज कल्याण प्रशासन है अर्थात दो तरफ प्रक्रिया है –i)जो नीति को ठोस समाज सेवाओं में रूपांतरित करती है, और ii)नीति संशोधन करने में अनुभव का प्रयोग करती हैं।"

वाल्टर ए. फ्राइडलैंडर (1958) के अनुसार, "सामाजिक संस्थाओं का प्रशासन सामाजिक संस्थाओं के सामाजिक विधान के उपबंधों और निजी लोकोपकार और धार्मिक दान के उद्देश्यों को सेवाओं की सक्रियता प्रदान है।"

डनहम के अनुसार, "समाज कल्याण प्रशासन को उन क्रियाओं कलापो में सहायता प्रदान करने तथा आगे बढ़ाने में योगदान देने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो किसी सामाजिक संस्था द्वारा प्रत्यक्ष सेवा करने के लिए अनिवार्य है।"

फिडनई के शब्दों में, "समाज कल्याण प्रशासन सामाजिक स्थितिनीति को समाज सेवाओं में बदलने की एक प्रक्रिया है।"

हेरले ट्रैकर (1971) के शब्दों में, "लोगों के साथ ऐसे तरीकों से कार्य करने की प्रक्रिया है, जो उनकी ऊर्जाओं को मुक्तकरती और जोड़ती है ताकि वे समुदाय की आवश्यक सेवाओं और कार्यक्रमों को प्रदान करने का उद्देश्य पूरा करने के लिए उपलब्ध संसाधनों का प्रयोग कर सकें।"

अमेरिकी समाज कार्य शिक्षण परिषद के अनुसार, प्रशासन उपक्रम में संलग्न व्यक्तियों द्वारा सहमत लक्ष्यों, नीतियों और मास्को के अनुसार सामुदायिक संसाधनों को सामुदायिक सेवा कार्यक्रम आधारित करने की प्रक्रिया है। यह क्रियात्मक है क्योंकि यह भूमिका ओं एवं संबंधों को सइ प्रकारित संचारित करती है कि सम्पूर्ण उत्पाद की वृद्वि हो। इसमें अध्यन निदान तथा उपचार की समस्या समाधान प्रक्रिया निहित है।

राजाराम शास्त्री (1970) के अनुसार, सामाजिक अभिकरण और सरकारी कल्याण कार्यक्रमों से संबन्धित प्रशासन ही सामाजिक कल्याण प्रशासन है। यद्यपि इसकी विधियाँ, प्रविधियाँ, तौर-तरीके आदि भी लोक प्रशासन या व्यापार प्रशासन की तरह ही होते हैं। किन्तु इसमें मूल अंतर यह है कि सभी स्तरों पर मान्यताओं और जनतंत्र का अधिक से अधिक खयाल करते हुये ऐसे व्यक्तियों या वर्ग से संबन्धित प्रशासन किया जाता है जो बाधित होते हैं।

रोजमैरी सेरी (1971) ने समाज कल्याण प्रशासन के लिए निम्न कार्यकलापों का प्रारूप प्रस्तुत किया है–

- **i.** सामाजिक आदेशों को कार्यात्मक नीतियों में परिगति और संगठनात्मक व्यवहार को निर्देशित करने के लिए लक्ष्य।
- **ii.** संगठनात्मक संरचनाओं और प्रक्रियाओं का प्रारूप जिनके माध्यम से लक्ष्य प्राप्त किए जा सकें।
- **iii.** लक्ष्य-प्राप्ति और संगठन के अस्तित्व के लिए सामग्री, कर्मचारी, सेवार्थियों के रूप में संसाधनों को प्राप्त करना।
- **iv.** जरूरी प्रौधोगिकी का चयन और इंजीनियरिंग।
- **v.** संगठनात्मक व्यवहार को इष्टतम बनाना जो अत्याधिक प्रभाविता और दक्षता के लिए हों।
- **vi.** समस्याओं के व्यवस्थित और सतत निवारण को सुगम बनाने के लिए संगठनात्मक कार्यनिष्पादन का मूल्यांकन।

सामान्य तौर पर समाज कल्याण प्रशासन समाज सेवाओं के अन्तर्गत प्रदान की जाने वाली प्रत्यक्ष सेवाओं के विकास संरचना एवं व्यवहारों संबंधित है जिसमें सामाजिक नीति को समाज सेवा में आकारित करने की प्रत्येक गतिविधि सम्मिलित है। यह सामाजिक सेवाओं के दुरूपयोग उपलब्ध तथा पुनरावृत्ति को रोकता है और उसका नियोजित, व्यवस्थित तथा प्रभावी वितरण तथा उपयोग सुनिश्चित करता है जिससे उपलब्ध संसाधनों से उच्चतम संभव प्राप्त हो सके।

ज्ञान शांति मैत्री

1.3 समाज कल्याण प्रशासन की विशेषताएं

उपरोक्त तथा अन्य परिभाषाओं के अध्ययन तथा विश्लेषण से समाज कल्याण प्रशासन के अर्थ से संबंधित निम्नलिखित सर्वमान्य तत्व स्पष्ट होते है-

- समाज कार्य के अन्तर्गत प्रत्यक्ष सेवा प्रदान करने के सन्दर्भ में जो क्रिया-कलाप सम्पन्न होते है अथवा ऐसे क्रिया कलाप जो संबंध करते है उन्हें समाज कल्याण प्रशासन की संज्ञा दी जाती है।
- समाज कल्याण प्रशासन वह प्रक्रिया है जो सामाजिक विधानों पर आधारित सामाजिक नीतियों को सामाजिक सेवाओं में परिवर्तित कर देती है।

- समाज कल्याण प्रशासन निजी परोपकार एवं धार्मिक दान की भावनाओं को सामाजिक सेवाओं में परिवर्तितकरने की प्रक्रिया है।
- संस्था को सेवा सम्बन्धी लक्ष्यों की पूर्ति की दिशा में मानवीय संबंधों को निर्देशित करने की कला को प्रशासन कहा जाता है।
- यह सामाजिक अधिदेश को क्रियाशील लक्ष्यों तथा नीतियों को अनुवाछित करने के लिए संगठनात्मक व्यवहार को निर्देशित करता है।
- यह उन संगठनात्मक संरचनाओं तथाप्रक्रियाओं की रूप रेखा बनाता है जिनसे लक्ष्योंकी प्राप्ति की जा सकती है।
- प्रभावकारिता तथा दक्षता के उन्नपन के लिए संगठनात्मक व्यवहार को अनुकूलित करता है।
- यह समस्या निराकरण को व्यवस्थित तथा अनवरण रूप से प्रोत्साहित करने के लिए संगठनात्मक निष्पादन का मूल्यांकन करता है।

1.4 भारत में समाज कल्याण प्रशासन का इतिहास

समाज कल्याण का भारतीय परम्परागत दृष्टिकोण दया, दान, दक्षिणा, भिक्षा, साम्यभाव, स्वधर्म और त्याग की जरूरतों पर आधारित है, जिसका सार स्वं–अनुशासन, आत्म बलिदान और दूसरों के लिए सोच-विचार है। प्राचीन काल में राजा और राजसी परिवार बाढ़, भूंकपों, आग, सूखे और अन्य प्राकृतिक आपदाओं जैसी आपात स्थितियों में प्रभावित लोगों की मदद करते थे। प्रशासनिक दृष्टिकोण से, भारत में सम्राट अशोक, हर्ष, चंद्रगुप्त मौर्य, अकबर, शेरशाह सूरी और फिरोज तुगलक प्रशासन के युग पुरूष थे जिन्होंने लोगों की सामाजिक जरूरतों का खयाल रखा, ब्रिटिश सरकार ने भी प्रशासनिक तंत्र स्थापित किया जिसका प्रयोजन प्रमुख रूप से कानून व्यवस्था बनाए रखना था। वर्ष 1829 में और 1856 में पारित अधिनियमों द्वारा सती प्रथा पर निषेध लगाने और विधवा विवाह की अनुमति देने के लिए समाज सुधार के कुछ समाधान किए गए। 1947 में हमारे देश को स्वतंत्रता मिलने के बाद सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक संरचना के अनुकूल जरूरी बदलावों के साथ कमोबेश पुराना प्रशासनिक विन्यास जारी रहा। समाज कल्याण के क्षेत्र में, पांचवी पंचवर्षीय योजना के दौरान, भारत सरकार ने महसूस किया कि सरकार अकेले हमारे पूरे देश की असंख्य सामाजिक समस्याओं का खयाल नहीं रख सकती, इसलिए इसने इस प्रक्रिया में लोगों की मदद के लिए स्वैच्छिक संगठनों की मदद प्राप्त करनी चाही। इस कारण अगस्त 1953 में एक अनोखे प्रशासनिक तंत्र को नियोजित किया गया।जिसका नाम केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड था, जो एक स्वायत्त बोर्ड था। इसी प्रकार राज्य स्तर पर समाज कल्याण सलाहकार बोर्ड का प्रमुख प्रयोजन समाज कल्याण के क्षेत्र में कार्य कर रहे स्वैच्छिक संगठनों को वित्तीय और तकनीकी मदद प्रस्तुत करना रहा है।

समाज कल्याण परियोजनाएं, योजनाएं और कार्यक्रम जो सरकार द्वारा संचालित हैं और जिन्हेंकमोबेश रूप में केंद्रीय सरकार द्वारा वित्तपोषित किया जाता है उनके निष्पादन के अलावा, राज्य सरकारें और संघ राज्यक्षेत्र प्रशासन अपने-अपने क्षेत्रों में कल्याण सेवा कार्यक्रम बनाते हैं तथा उनका कार्यान्वयन करते हैं। राज्य सरकार/संघ राज्यक्षेत्र प्रशासन कल्याण सम्बन्धीजिम्मेदारियों और कार्यक्रमों को मुख्य रूप से अपने समाज कल्याण विभाग और स्वैच्छिक संगठनों की सहायता से कार्यान्वित करते हैं। ज्यादातर राज्यों में, या तो समाज कल्याण के लिए पूर्णकालीन सचिव होता है अथवा सचिव का एक प्रमुख विभाग होता है। इस प्रकार, समाज कल्याण योजनाओं का फैलाव एक से अधिक विभागों/निदेशालयों में हैं। कुछ योजनाएं जैसे, वृद्धावस्था पेंशन, विधवा पेंशन और अनुपूरक पोषण कार्यक्रम प्रत्येक राज्य में भिन्न-भिन्न हैं।

1.5 समाज कल्याण प्रशासन का स्वरूप

यह विमर्श का मुद्दा सदैव से रहा है कि समाज कल्याण प्रशासन विज्ञान हैं अथवा कला। समाज कल्याण के दो प्रयोग है, इसका अभिप्राय समाज कल्याण कार्यक्रमों को लागू करने की प्रक्रिया से हैं। यह बौद्धिक चर्चा-परिचर्चा का भी क्षेत्र है। पहला व्यवहार है और दूसरा अध्ययन है। व्यवहार के रूप में समाज कल्याण प्रशासन निर्णायक रूप से एक कला है।

समाज कल्याण प्रशासन एक कला के रूप में

समाज कल्याण प्रशासन को एक कला के रूप में निम्न तर्कों से समझा जा सकता है–

1. **समाज कल्याण प्रशासन को प्राप्त किया जा सकता है**– कला निःसन्देह एक प्राकृतिक उपहार है। संगीत, नृत्य, नाटक अथवा चित्रकारी कला की इस श्रेणी के उदाहरण हैं परन्तु प्राकृतिक उपहार, उचित प्रशिक्षण द्वारा अपनी सर्वोत्तम अभिव्यक्ति प्राप्त कर सकते हैं। दूसरी तरफ, कला के उदाहरण के रूप में बर्तन बनाने वाला कुम्हार भी हैं। ऐसा इसलिए, क्योंकि उनके पास निम्न तत्व मौजूद हैं–
   क) निजी कौशल
   ख) व्यवहारिक जानकारी
   ग) परिणाम-उन्मुख
   घ) सृजनशीलता, और
   च) निपुणता के लिए सतत अभ्यास
2. **यह व्यक्तिपरक प्रकृति का होता है**– एक बढ़ई अपने औजारों से अपने सृजन में सुंदरता का संवर्धन करता है। एक समाज कल्याण प्रशासक ज्ञान और कौशलों का इस्तेमाल करके राष्ट्र का चेहरा परिवर्तित करने के लिए मौजूद मानव और भौतिक संसाधनों का उपयोग करके आश्चर्यजनक

ज्ञान शांति मैत्री

कार्य कर सकता है और कल्याण कार्यक्रम को सफल बनाने की दिशा में उल्लेखनीय भूमिका निभा सकता है।

3. **ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग**– कला व्यवस्थित ज्ञान का व्यावहारिक इस्तेमाल है। यह केवल सिद्धांत नहीं है,अपितु व्यवहार सर्वोत्तम ज्ञान की प्राप्ति अभ्यास से ही हो सकती है। इसी प्रकार समाज कल्याण प्रशासन केवल एक सिद्धांत न होकर, व्यवहारिक उपयोग की वस्तु भी है।

विज्ञान के रूप में समाज कल्याण प्रशासन

विद्वानों का मत है कि ऐसे कुछ विशेष और स्पष्ट सिद्धांत हैं जिन पर समाज कल्याण कार्यक्रमों का दैनिक प्रशासन संचालित हो रहा है। उनका यह तर्क है कि ये सिद्धांत ठोस और विवेकपूर्ण सिद्धांतों पर आधारित हैं जिन्हे सार्वभौम प्रकृति का भी समझा जाता है। कुछ प्रमुख तर्क निम्न हैं–

1. **वैज्ञानिक पद्धतियों का अनुप्रयोग-** समाज कल्याण प्रशासन एक विज्ञान है क्योंकि अध्ययन की वैज्ञानिक पद्धति इस पर लागू होती है, जैसे कि यह अन्य सामाजिक विज्ञानों पर लागू होती है।
2. **आलोचनात्मक जाँच-** आलोचनात्मक जांच और प्रभाग का अध्ययन किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन के लिए प्राथमिक मान्यता होती है, जो कि समाज कल्याण प्रशासन में भी लागू होती है।
3. **सार्वभौम मार्गदर्शी सिद्धांत-** समाज कल्याण प्रशासन के सार्वभौम सिद्धांत विज्ञान की कसौटी में उसकी स्थिति सुनिश्चित करते हैं। यदि हम उसी प्रकार सभी मार्गदर्शी सिद्धांतों को इस्तेमाल नहीं कर सकते हैं तो ये सिद्धांत निश्चय ही समाज कल्याण कार्यक्रमों के उचित कार्यान्वयन में प्रशासक की मदद करते हैं।

तथापि, समाज कल्याण प्रशासन के स्वरूप की विज्ञान के रूप में प्रयोग और उद्देश्यपरकता के आधार पर आलोचना की गई है। इस प्रकार यह एक सटीक विज्ञान नहीं है बल्कि यह यह अपने ही तरीके में विज्ञान है। यह कला भी है क्योंकि इसका जुड़ाव न केवल समाज कल्याण कार्यक्रमों के सामान्य सिद्धांतों के निर्माण से है।

1.6 व्यवसाय के रूप में समाज कल्याण प्रशासन

व्यवसाय एक ऐसा पेशा या वृत्ति है जिसके लिए विशिष्ट ज्ञान, कौशलों और प्रशिक्षण की जरूरत पड़ती है और ये कौशल आत्म-संतुष्टि के लिए नहीं हैं बल्कि ये समाज के व्यापक हितों के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं तथा इन कौशलों की सफलता को मात्र धन के संदर्भ में ही नहीं मापा जाता है। इस प्रकार, सभी व्यवसाय इस अभिप्राय में वृत्तियाँ हैं कि वे आजीविका के साधन प्रस्तुत कराती हैं फिर भी सभी वृत्तियाँ

व्यवसाय नहीं है क्योंकि इनमें से कुछ में व्यवसाय की विशेषताएं नहीं होती। व्यवसाय की विभिन्न विशेषताओं का उल्लेख निम्न किया गया है–

- ज्ञान का संगठित और व्यवस्थित समूह
- ज्ञान के अर्जन की औपचारिक पद्धति
- समिति/संघ के लक्ष्यों के रूप में इसके संघ व्यवसायीकरण समेत अस्तित्व
- नैतिक लक्ष्यों का निर्माण और
- सेवा का ध्येय

ज्ञान का अस्तित्व

समाज कल्याण प्रशासन ने जटिल सामाजिक समस्याओं का प्रभावी तरीके से निवारण करने की जरूरत के प्रत्युत्तर में ज्ञान का विशिष्ट समूह विकसित किया है। भारत में, विद्यार्थियों को समाज कार्य के लगभग सभी पाठ्यक्रम, समाज कल्याण प्रशासन पर पाठ्यक्रम प्रदान करते हैं। इस प्रकार यह ज्ञान के अस्तित्व के रूप में व्यवसाय की जरूरत की आपूर्ति करता है।

ज्ञान का अर्जन (प्राप्ति)

कोई भी व्यक्ति औपचारिक प्रशिक्षण के माध्यम से ज्ञान और अपेक्षित कौशलों को प्राप्त करने के बाद किसी व्यवसाय में प्रवेश कर सकता है। उदाहरणस्वरूप, मात्र औपचारिक रूप से प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति ही विधि, इंजीनियरिंग अथवा चिकित्सा में प्रवेश कर सकते है। इस आधार पर समाज कल्याण प्रशासन भी एक व्यवसाय है क्योंकि समाज विद्यापीठ और लोक प्रशासन विद्यापीठें इस विषय में प्रशिक्षण देने का काम करते हैं।

व्यावसायिक संघ

जो वृत्ति एक व्यवसाय होने की पेशकश करती है, उसका एक संघ होना चाहिए। व्यावसायिकों की इस प्रकार की संस्था व्यवसाय के क्रिया-कलाप को नियंत्रित और विकसित करती हैं। व्यावसायिक संघ उन व्यक्तियों के लिए नियमावली भी निर्धारित कर सकते हैं जो व्यवसाय में प्रवेश पाना चाहते हैं। परन्तु आज भी शीर्ष निकाय के लिए संघर्ष किया जा रहा है जो समाज कल्याण प्रशासन के लिए प्रबंधन और मान्यताओं को विनियमित करेगी जैसे बार काउंसिल आफ इंडिया आदि।

नीति संहिता

प्रत्येक व्यवसाय की एक पृथक नीति संहिता होती है। संहिताएं उस समय उचित मार्गदर्शन प्रस्तुत करती हैं जब अच्छे और बुरे निर्णय के मध्य चुनाव करने की स्थिति पैदा होती है। अतः समाज कल्याण प्रशासन एक व्यवसाय है और इसकी नीति संहिता समाज कार्य व्यवसाय के मूलभूत मूल्योंपर आधारित है जिसमें सभी व्यक्तियों की महत्ता, गरिमा और अनोखेपन के साथ-साथ उनके अधिकार और अवसर सम्मिलित हैं।

सेवा का लक्ष्य

हालांकि सभी व्यसय धन से संबन्धित हैं, तथापि व्यावसायिकों को अपनी व्यावसायिक सेवाओं के लिए शुल्क लेते समय सामाजिक हित का खयाल रखना चाहिए। एक समाज कल्याण प्रशासक, समाज कल्याण कार्यक्रमों को क्रियान्वित करता है, न केवल धन और निजी संतुष्टि के लिए बल्कि समाज के व्यापक हित की पूर्ति के लिए अपने ज्ञान का इस्तेमाल करता है।

उक्त विमर्श के आधार पर यह कहा जा सकता है कि समाज कल्याण प्रशासन को अभी एक व्यवसाय का स्तर प्राप्त करना है। एक स्वतंत्र व्यवसाय बनने के लिए इसे केवल अधिकारियों का नियंत्रण होने के बजाए, सामाजिक स्वीकृति प्राप्त करने, व्यावसायिक प्रतिबद्धता, सरकारी स्वीकृति और व्यावसायिक संघ की जरूरत है ताकि व्यवसाय को नियंत्रित किया जा सके और समाज कल्याण प्रशासन के क्षेत्र में प्रशिक्षित कार्मिकों की हिस्सेदारी सुनिश्चित हो सके।

1.7 सारांश

इस इकाई में हमने समाज कार्य की एक पद्धति जो कि समाज कल्याण प्रशासन है, से परिचित हुए। साथ ही इसकी विशेषताओं, भारतीय संदर्भ में इसके इतिहास और स्वरूप के बारे में संज्ञान किया। हमने यह जाना कि समाज कल्याण प्रशासन की समाज कार्य में क्या भूमिका है और यह समाज कार्य में किस प्रकार सहायता करता है।

1.8 बोध प्रश्न

प्रश्न 1: समाज कल्याण प्रशासन की अर्थ व परिभाषाओं का उल्लेख कीजिये। साथ ही इसकी विशेषताओं पर भी प्रकाश डालिए।

प्रश्न 2: भारत के संदर्भ में समाज कल्याण प्रशासन के इतिहास को प्रस्तुत कीजिये।

प्रश्न 3: समाज कल्याण प्रशासन के स्वरूप को स्पष्ट कीजिये।

प्रश्न 4: एक व्यवसाय के रूप में समाज कल्याण प्रशासन को विश्लेषित कीजिये।

1.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

- चौधरी, डी.पी. (1992) *सोशल वैल्फेयर एडमिनिस्ट्रेशन*, आत्मा राम एंड संस, दिल्ली।
- गोयल, एस.एल. एवं जैन आर.के., *सोशल वैल्फेयर एडमिनिस्ट्रेशन*, खंड 1, दीप एंड दीप पब्लिकेशंस, नई दिल्ली ।
- फ्राइडलैंडर डब्ल्यू.ए. (1955), *इंट्रोडक्शन टू सोशल वैल्फेयर*, नई दिल्ली, प्रेंटिस हाल आफ इंडिया प्राइवेट लि., नई दिल्ली।

● फ्राइडलैंडर वाल्टर ए, (संपा) (1976) *कंसेप्ट्स एंड मेथड्स आफ सोशल वर्क,* प्रेंटिस हाल आफ इंडिया प्राईवेट लि., नई दिल्ली।

● रीड, डब्ल्यू. ई. (1961) *सोशल वैल्फेयर एडमिनिस्ट्रेशन*, कोलंबिया यूनीवर्सिटी प्रेस नई दिल्ली।

● विकेनडेन, ई. (1965), *इन्साइक्लोपीडिया आफ सोशल वर्क*, एन.ए. एस. न्यूयार्क।

● सिंह डॉ. सुरेन्द्र, मिश्र डॉ. पी. डी., *समाज कार्य इतिहास दर्शन एवं प्रणालियाँ,* न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ।

इकाई 2

समाज कल्याण प्रशासन के कार्य, सिद्धांत और कार्यक्षेत्र

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 समाज कल्याण प्रशासन के कार्य

2.3 समाज कल्याण प्रशासन के सिद्धांत

2.4 समाज कल्याण प्रशासन का कार्यक्षेत्र

2.5 सारांश

2.7 संदर्भ एवं उपयोग ग्रंथ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- समाज कल्याण प्रशासन के कार्यों, सिद्धांतों और कार्यक्षेत्र को स्पष्ट कर सकेंगे।
- समाज कल्याण प्रशासन की विषयवस्तु की भी प्रभावी समझ प्राप्त होगी।
- समाज कल्याण के सिद्धांतों की व्याख्या कर सकेंगे।
- समाज कल्याण प्रशासन के कार्यक्षेत्र से संबन्धित विभिन्न दृष्टिकोणों के बारे में भी सूचना प्राप्त कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

स्वास्थ्य, चिकित्सा, शिक्षा, कानून और विनिर्माण, प्रशासन और प्रबंधन के सभी क्षेत्रों में अपेक्षित ढंग से सेवाएं प्रदान करना बहुत ही जरूरी है। चाहे विद्यालय, कॉलेज, अस्पताल अथवा कार्यालय हो, संस्था अथवा संगठन के बेहतर संचालन के लिए नियमनों और प्रशासनिक व्यवहारों का पालन करना लोगों के लिए आवश्यक है। अत: हमारे समाज के दबे-कुचले और वंचित वर्गों के लिए प्रत्येक समाज कल्याण संस्था अपने प्रयोजनों को प्राप्त करने के लिए सफलतापूर्वक कार्य करने हेतु एक तंत्र की स्थापना करती है। यह तंत्र समाज कल्याण प्रशासन के नाम से जाना जाता है।

2.2 समाज कल्याण प्रशासन के कार्य

संस्था द्वारा निर्धारित किए गए प्रयोजनों की प्राप्ति हेतु समाज कल्याण प्रशासन के निम्न कार्य प्रमुख हैं–

1. संस्था के उपयुक्त प्रयोजनों और कार्यक्रमों को तैयार करना।

2. इकट्ठा की गई सूचना का विश्लेषण करना ताकि सामाजिक समस्याओं का निवारण करने के लिए समुचित उपाय प्रस्तुत किए जा सकें।
3. समस्याओं पर नियंत्रण करने और समाज कल्याण संस्था की पहलों को आरंभ करने के लिए उपयुक्त कार्य योजना की पहचान करना, जाँच परख करना और चयन करना।
4. समाज कल्याण संस्था के प्रयोजनों की प्राप्ति के लिए बेहतर तरीके से नीतियाँ, कार्यक्रम और योजनाएं बनाना।
5. समाज कल्याण संस्था के लिए उचित अभिविन्यास और पर्यवेक्षण के साथ उपयुक्त कार्मिकों की पहचान करना जिससे कि वे प्रयोजनों को समझ सकें और संस्था के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कार्यक्रमों का कार्यान्वयन कैसे किया जाता है, इसके बारे में भी जानकारी प्राप्त कर सकें।
6. उन स्वयंसेवियों को प्रोत्साहित करना जो समाज कल्याण संस्था के लक्ष्य और प्रयोजनों में स्वयं को लगा सकें।
7. पर्यवेक्षण के अंतर्गत प्रशासन विभिन्न विभागों को कार्य आबंटित करेगा जो विभिन्न विभागों में दिए गए उस कार्य के लिए जवाबदेह होंगे जिसका समन्वय करना है जिससे कि इष्टतम परिणाम पर्याप्त किए जा सके।
8. नियम, विनियम, व्यवहार और प्रक्रियाओं को निर्धारित किया जाए जिससे कि संस्थामें पूरे कर्मचारियों के बीच एकरूपता और जवाबदेही हो और संस्था के प्रयोजनों को सरलतापूर्वक प्राप्त किया जा सके।
9. संस्था को उचित अभिलेख और रिपोर्ट रखनी चाहिए। संस्था की प्रगति का पता लगाने के लिए इन अभिलेखों और रिपोर्टों को विश्लेषित और व्याख्यायितकिया जाना चाहिए।
10. वित्तीय व्यवहार बहुत किफायती ढंग से और सख्ती से निर्धारित किए जाने चाहिए जिससे कि कोई दुरूपयोग न किया जा सके।
11. प्रत्येक संस्था को कार्य के कुछ मानदंड होते हैं और प्रत्येक समय उन मानदंडों को पूरा करने के काम का निर्धारण किया जाना चाहिए।
12. एक प्रमुख सूत्र जो संस्थाको संगठित रखता है, वह संप्रेषण है। संस्था के सभी क्षेत्रों से संप्रेषण स्पष्ट और सुचारू होना आवश्यक है, चाहे यह विभाग से विभाग तक क्षैतिज हो अथवा ऊपर से नीचे अथवा नीचे से ऊपर की ओर हो। संस्था के पास समुदाय के लोगों के साथ खुला संचार माध्यम भी होना आवश्यक है।
13. समाज कल्याण प्रशासन को यह भी देखना चाहिए कि संस्था में संस्था के विभिन्न विभागों के भीतर और संस्था में विभिन्न स्तरों पर सही समन्वय हो। जब संस्था पूर्णरूप से कार्य करती है तो इसके प्रयोजनों को पूरा करना सबसे ज्यादा प्रभावी हो जाता है।

ज्ञान शांति मैत्री

14.संस्था के कार्यक्रमों की जांच-पड़ताल करनेव मूल्यांकन करने तथा संपूर्ण कार्य का आकलन करने में समाज कल्याण प्रशासन की जरूरी भूमिका होती है।

2.3 समाज कल्याण प्रशासन के सिद्धांत

विभिन्न विद्वानोंने समाज कल्याण प्रशासन के विभिन्न –विभिन्न सिद्धान्त बताएँ है। आर्थर डनहम ने समाज कल्याण प्रशान के 13 सिद्धान्तो का सुझाव दिया है। डी. पाल चौधरी ने इसके 10 सिद्धान्त बताए है। उपरोक्त तथा अन्य विद्वानों के विचारों के अध्ययन एवं विश्लेषण से समाज कल्याण प्रशासन के निम्नलिखित सिद्धान्त स्पष्ट होते हैं-

1. **सेवारत होने का सिद्वान्त-** वह सिद्वान्त जिसके अनुसार सभी प्रकार के कार्यजाने के हित के लिए होते है तथा जनता को सर्वोपरि मानकर किये जाने चाहिए, प्रशासन जनता के हित में सेवारत रहता है, सेवारत होने का सिद्वान्त कहलाता है। चूँकि व्यावहारिक रूप में इन सेवाओं की प्रकृति अत्यधिक जटिल होती है इसलिए प्रशासन आज चाहे जिस स्तर का हो अधिकारी बन गया है तथा जनता सेवक हो गयी है। इससे समाज कल्याण के मार्ग में अनेकानेक बाधाएँ उत्पन्न हो गयी है। समाज कल्याण के क्षेत्र में यह अत्यन्त आवश्यक है कि सेवाओं का प्रशासन से से कि वे सीधे सेवार्थी को उपलब्ध हो सके और बिचौलियो की आवश्यकता न पड़े।
2. **समन्वय का सिद्धान्त-** यह सिंद्धात सूपष्ट करता है कि सेवार्थी को समाज कल्याण सेवाएँ उपलब्ध कराने वाली विभिन्न ऐजेंसियों के बीच समुचित समन्वय होना चाहिए नही तो अभ्यास वांछित परिणाम देने मे असफल हो जायेगी। आज विशेषीकरण के कारण कल्याण के क्षेत्र की भिन्न भिन्न सेवाएँ भिन्न-भिन्न संस्थाओं के माध्यम से प्रदान की जाती है। उनमे आपस में मेल न होने से पर्याप्त लाभ नहीं पहुँच पाता है। अत: यह आवश्यक समझा जाने लगा है कि यदि एन सी संस्था के माध्यम से सभी प्रकार की सेवाएँ उपलब्ध करायी जाये तो प्रशासन का कार्य अधिक प्रभावपूर्ण हो जायेगा।
3. **प्रगतिशील सामंजस्य का सिद्धान्त-** वह सिद्धान्त जिसके अनुसार सेवार्थी की आवश्यकताओं मे परिवर्तन के साथ-साथ सेवाओं को परिवर्तित होना चाहिए जिससे वे सेवार्थी के लिए अधिकतम उपयोगी सिद्ध हो सके, प्रगति शील सामन्जस्य का सिद्धान्त कहलाता है। प्रशासन का यह उत्तरदायित्व होता है कि वह सेवाओं मे निरन्तर नवीनता लाने का प्रयत्न करता रहे।
4. **सामाजिक नीति को व्यवहार मे लाने का सिद्धान्त-** यह सिद्धान्त बताता है कि समाज कल्याण प्रशासन को सामाजिक नीतियों को मूर्त सामाजिक सेवाओं मे परिवर्तित करना चाहिए। इसका सर्वप्रमुख दायित्व है कि वह सामाजिक नीतियों को शत-प्रतिशत लागू करे। नीति का निर्धारण लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाता है। उनकी प्राथमिकता निर्धारित की जाती है और यदि कार्यक्रम सामाजिक नीति के अनुसार आयोजित नहीं किये जाते है तो इनसे वास्तविक लक्ष्य प्राप्त नही होते है।

5. **सामाजिक नीति को कल्याण नीति में परिवर्तित करने का सिद्धान्त-** यह सिद्धान्त स्पष्ट करता है कि समाज कल्याण यह उत्तरदायित्व है कि वह प्रशासन में मानवता तथा जनतांत्रिकता का अधिक से अधिक ध्यान रखे और निर्बलो अशक्ती बच्चो महिलाओं पिछड़े वर्गों आदि के हितो को सर्वोपरि समझे।
6. **स्थानीय समस्याओं से अनुकूलन का सिद्धान्त-** वह सिद्धान्त जिसके अनुसार प्रशासन को पूर्व निर्धारित कार्यक्रमों को स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार अनुकूलित करना लागू करना चाहिए, स्थानीय समस्याओं से अनुकूलन का सिद्धान्त कहलाता है। इसके अनुसरण मे प्रशासक पहले समुदाय की आवश्यकताओं तथा समस्याओं का अध्ययन करता है और तप्रश्चात उनके अनुसाद कार्यक्रमों को परिवर्तित कर लागू करता है।
7. **परस्पर सुदृढ़ सम्बन्ध का सिद्धान्त-** इस सिद्धान्त के अनुसार प्रशासन तथा सेवार्थी तथा जनता के बीच सम्बन्ध घनिष्ट व पारस्परिक होना चाहिए नहीं तो अभ्यास प्रक्रिया सफल नही होगी। इस सिद्धान्त के अनुसरण मे प्रशासक अपने कार्यकर्तायों से ऐसे वातावरण निर्मित करता है कि जिससे पारस्परिक सम्बन्ध एक-दूसरे के प्रति विश्वास, सहयोग, मैत्री भाव तथा सन्निकटता के बन सके।
8. **लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का सिद्धान्त**– यह सिद्धान्त बताता है कि जनता का कार्य जनता द्वारा ही होना चाहिए तभी अभ्यास प्रक्रिया सही तरीके से अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर सकेगी। इस सिद्धान्त के अनुसरण मे प्रशासक आवश्यकतानुसार अधिकारो एवं कर्तव्यों का निर्धारण करता है, समितियाँ बनाता है और जनता की पूरी भागीदारी प्राप्त करने का प्रयास करता है।
9. **सम्प्रेषण का सिद्धान्त**– इस सिद्धान्त के अनुसार प्रशासन को सेवार्थी के साथ वार्तालाप मे ऐसी भाषा तथा शब्दों का प्रयोग करना चाहिए जिसे सेवार्थी आसानी से समझ सके। इस सिद्धान्त का पालन करने से सेवार्थी तथा प्रशासन के बीच आपसी समझ, पारस्परिक विश्वास घनिष्टता बढ़ती है जो अभ्यास प्रक्रिया की सफलता की एक पूर्व शर्त है।
10. **संवेदनशीलता का सिद्धान्त**– यह सिद्धांन्त स्पष्ट करता है कि प्रशासन को सेवार्थी के सुखो-दुखो के प्रति असधिक संवेदनशील तथा मानवीय होना चाहिए। यदि सेवार्थी या उसका कोई घटक दुखी है तो प्रशासन को उसके दुख को बाँटने का पूरा प्रयास करना चाहिए इस सिद्धान्त का पालन करने से प्रशासन को सेवार्थी की आलीपता, सहानुभूति व सक्रिय सहयोग प्राप्त होता है।
11. **स्वमूल्यांकन का सिद्धान्त**– समाज कल्याण अभिकरण को एक उपयुक्त अंतराल पर अपनी सफलताओं व असफलताओं काअपनी वर्तमान प्रास्थिति व प्रोग्रामो का, उद्देश्यों एवं संस्थापित मानदण्डो के अनुसार अपने कार्य निष्पादन का अपनी शक्तियों एवं कमजोरियों का तथा अपनी

वर्तमान समस्याओं का मूल्यांकन करते रहता चाहिए। इससे अभिकरण को अपनी कमियों का दूर कर अधिक सक्षम तथा प्रभावकारी बनने मे सहायता मिलती है।

12. **अभिकरण के सुसंगठन का सिद्धान्त**– इस सिद्धान्त के अनुसार अभिकरण सुसंगठित होना चाहिए। नीति निर्माण तथा कार्यान्वयन मे स्पष्ट अंतर होना चाहिए। आदेश की एकता होनी चाहिए और संगठन की सभी इकाइयों के बीच प्रभावी समन्वयन होना चाहिए। इस सिद्धान्त का अनुसरण अभिकरण को अधिक प्रभावशाली बना देता है।

2.4 समाज कल्याण प्रशासन का कार्यक्षेत्र

समाज कल्याण कार्य मूल रूप से लोकोपकारी, धार्मिक और धर्मार्थ संगठनों द्वारा सामाजिक नीतियों, सामाजिक कार्यक्रमों और सामजिक विधानों का निष्पादन है जो जरूरतमंद सामान्य जनसंख्या के लिए सेवाएं और लाभ प्रस्तुत करते हैं। यह सामाजिक नीति का सामाजिक क्रिया में परिवर्तन है और कल्याणकारी राज्य के सदगुण किस प्रकार क्रिया में सरकार होते हैं और समाज कल्याण संस्थाओं द्वारा कार्यान्वित होते हैं, यह खयाल रखना भी आवश्यक है।

समाज कल्याण प्रशासन के कार्यक्षेत्र के बारे में विस्तृत रूप से दो दृष्टिकोण हैं– पोस्डकार्ब (POSDCORB) दृष्टिकोण- समाज कल्याण के इस दृष्टिकोण में अधिकार सरकार के प्रायोजित कार्यक्रमों को लागू किया जाता है। दूसरे शब्दोंमें, यह दृष्टिकोण प्रबंधकीय दृष्टिकोण के अनुकूल होता है, हेनरी फेयोल, एल. अर्विक, फर्सी, एम. ओवियन और लुथर गलिक इस दृष्टिकोण के अनुयाई हैं।

हेनरी फेयोल के अनुसार, प्रशासन की मुख्य श्रेणियाँ निम्न हैं –

1. संगठन
2. आदेश
3. समन्वय
4. नियंत्रण

लुथर गलिक ने पोस्टकॉर्ब शब्द में चमत्कारिक सूत्र प्रदान किया है जो काफी प्रसिद्ध हुआ। पोस्टकॉर्ब में प्रत्येक अक्षर एक विधि प्रस्तुत करता है–

P योजना अथवा नियोजन (Planning)

O संगठन (Organizing)

S कर्मचारी (Staffing)

D निर्देशक (Directing)

Co समन्वय (Coordinating)

R रिपोर्टिंग (Reporting)

B बजटिंग अथवा बजट-व्यवस्था (Budgeting)

हाल ही के वर्षों में भारत शिक्षाविदों और प्रयोगकर्ताओं ने विधियों कोपूरा करने के लिए दो और सार्थक शब्दों को जोड़ा है–

E मूल्यांकन (Evaluation)

F प्रतिपुष्टि (Feedback)

योजना अथवा नियोजन

योजना बनाना अथवा नियोजन उनके कार्यों की रूपरेखा तैयार करना है जिन्हें निष्पादित किया जाना है तथा उद्यम के लिए निर्धारित प्रयोजन की प्राप्ति हेतु पद्धति अथवा विधि को अपनाना है। नियोजन एक दृष्टिकोण, एक अभिवृत्ति और एक धारणा है जिसके अनुसार हमारे लिए अपने भाग्य का पहले से ही अनुमान करना, भविष्यवाणी करना, मार्गदर्शन करना और नियंत्रण करना सम्भव होता है। समाजिक नियोजन सक्षम, प्रभावी और जवाबदेह बनाने में मदद करता है। नियोजन हमारे वांछित लक्ष्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक है। कोई समाज कल्याण कार्यक्रम शुरू करने अथवा कोई अनुसंधान आरंभ करनेसे पहले रचनात्मक सूचना के साथ तथा जानकार व्यावसायिकों के साथ परामर्श करके उपयुक्त नियोजन बहुत जरूरी है। 'क्या','कैसे', और 'क्यों' के उत्तर समाज कल्याण योजनाओं और कार्यक्रमों के सम्बन्ध में बेहतर विचार आवश्यक है।

नियोजन की प्रक्रिया में निम्नलिखित सोपानों का पालन करना जरूरी है–

1. उपयुक्त प्रयोजन तैयार करना
2. समस्या की पहचान करना
3. मौजूदा तथ्योंको इकट्ठा करना और समझना
4. उपलब्ध, तथ्यों का विश्लेषण करना
5. उपयुक्त पद्धति तैयार करना
6. लक्ष्यों को संगठित करना और प्राथमिकताओं का पता लगाना
7. संसाधनों की खोज करना
8. अन्य विकल्प ढूंढना
9. सोचे गए अनेक विकल्पों के परिणामों की भविष्यवाणी करना
10. योजना तैयार करना
11. योजना की निष्पादित करना
12. परिणाम का मूल्यांकन करना और अधिक प्रभाविता के लिए पद्धतियाँ पुन: तैयार करना

संगठन

ज्ञान शांति मैत्री

डिमोक एवं डिमोक (1664) ने संगठन को परिभाषित किया है कि संगठन एक एकीकृत पूर्ण निकाय को निर्मित करने के लिए परस्पर-निर्भर भागों को व्यवस्थित रूप से एक करता है जिसके माध्यम से प्राधिकार समन्वय और नियंत्रण का इस्तेमाल एक निर्धारित उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए किया जाता है... संगठन, संरचना और मानव सम्बन्ध दोनों है। संगठन की तुलना मानवीय शरीर से की जा सकती है। जैसे मानव शरीर में विभिन्न अंग होते हैं जैसे श्वसन तंत्र, तंत्रिका तंत्र, प्रजनन तंत्र। इन सभी के अलग-अलग कार्य होते हैं और ये मुक्त रूप से कार्य करते हैं तथा ये संयुक्तरूप से भी कार्य करते हैं और शरीर को सही और स्वस्थ्य रखते हैं।

हर्बर्ट (1960) ने बताया है कि संगठन उन व्यक्तियों को प्रभावित करता है जो अलग-अलग ढंग से कार्य करते हैं–

1. संगठन कर्मचारियों के मध्य कार्य आबंटित करता है। कार्मियों को उनकी क्षमताओं के अनुसार संगठन में विशेष कार्य दिया जाता है।
2. संगठन मानव व्यवहार सृजित करता है और बेहतर कार्य करने के लिए कर्मचारियों की मदद करने हेतु कार्यविधियों को नियोजित करता है।
3. संगठन उर्ध्वगामी व अधोगामीतथा परस्परप्राधिकार का अनुकरण करता है, इससे निर्णयन के सुचारू प्रवाह में मदद मिलती है।
4. सभी तक पहुँचने के लिए संगठन संचार प्रणाली का अनुकरण करता है।
5. ज्ञान, कौशल और निष्ठा प्रदान करके संगठन अपने सदस्यों का मार्गदर्शन और उन्हें शिक्षित करता है। प्रशिक्षण बेहतर ढंग से कार्य करने और संगठन की जरूरतों के अनुसार निर्णय लेने में मदद करता है।

अत: संगठन केवल स्वरूप ही नहीं है, बल्कि वास्तव में यह लोगों के लिए स्वरूप को स्वीकृत करता है जो निर्देश देते हैं, संगठित करते है और जो संस्था के प्रयोजनों को प्राप्त के लिए वास्तव में कार्य करते हैं। संस्था व्यवस्थित रूप से चले, इसलिए संगठन की योजना बनाने कि मान्यताएँ निम्नलिखित हैं–

i. प्राधिकार और उत्तरदायित्व
ii. प्रत्यायोजनऔर विकेंद्रीकरण
iii. जनसंपर्क
iv. संप्रेषण अथवा संचार
v. समन्वय
vi. अनुवीक्षण, पूर्व-मूल्यांकन और मूल्यांकन
vii. पर्ववेक्षण और नियंत्रण
viii. कार्मिक प्रबंध
ix. वित्तीय प्रबंध

x. समुदाय-सहभागिता

स्टाफिंग

विकास कार्य के लिए तीन महत्वपूर्ण तत्व मनुष्य, धन और सामग्री हैं। इन तीनों में मनुष्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है क्योंकि मनुष्य उत्पादन की गुणवत्ता और मात्रा का निर्धारण करते हैं। ये कार्मिक ही होते हैं जो समाज कल्याण के प्रयोजनों के लिए कार्य करने हेतु धन और सामग्री का इस्तेमाल करते हैं।यह माना जाता है कि प्रभावी प्रशासन संगठन संसाधनों और योग्य तथा समर्पित कार्मिको का जोड़ है। यदि संगठन में स्टाफ अच्छा है, तो सीमित धन और सामग्री के साथ भी, संगठन अच्छे कार्य का निष्पादन कर सकता है, परन्तु स्टाफ प्रभावी नहीं है तो सर्वोत्तम धन और सामग्री और पर्याप्त धन होने पर भी इष्टतम प्रयोजनों को प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

निर्देशन करना

निर्देशन, निर्णय करने की सतत प्रक्रिया है तथा उद्यम का मार्गदर्शन करने के लिए इसमें विशिष्ट और सामान्य आदेश तथा निर्देश सम्मिलित होते हैं। निर्देशन को स्टाफ सदस्यों की जरूरतों के अनुसार सीखने में उनकी मदद करने, उनके ज्ञान और कौशलों का इस्तेमाल करने तथा उनकी क्षमताओं और योग्यताओं को सुधारने की प्रक्रिया के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है जिससे कि वे अपने कार्य की जिम्मेदारियों और कर्तव्यों को कुशलतापूर्वक निभा सकें। निर्देशन के लिए आवश्यक घटकों का उल्लेख नीचे किया गया है–

1. उचित कार्य के उचित व्यक्ति की पहचान करना।
2. अपने कार्य में रूचि विकसित करने के लिए स्टाफ को प्रेरित करना।
3. नए स्टाफ सदस्यों को कार्य सिखाना।
4. स्टाफ सदस्य की जानकारी को देखकर कार्यनिष्पादन का मूल्यांकन करना।
5. प्रशासनिक परिवर्तनों का पालन करना और स्टाफ को काम पर लगाना जिससे कि वे अच्छे से अच्छा कार्य कर सकें।
6. कार्य को समय पर समाप्त करने के लिए स्टाफ को पुरस्कृत करना और बेहतर तरीके से कार्य करने के लिए अन्यों की मदद करना।
7. अच्छी भावना और टीम कार्य स्थपित करना जिससे कि दिए हुए कार्य को कुशलतापूर्वक, बुद्धिमत्तापूर्वक और उत्साहपूर्वक समाप्त किया जा सके।

समन्वय

समन्वय, कार्य के दोहरेपन और अतिव्याप्तिकी रोकथाम सुनिश्चित करता है जिससे कि सामाजिक विकास क्षेत्र में प्रशासनिक प्रयत्न, संसाधन, स्टाफ कार्य निरर्थक न जाएं। समन्वय समाज कार्य संस्थाओं के कुशल और किफायती कार्य संचालन को सुनिश्चित करने के लिए काफी जरूरी है। भारत एक विशाल क्षेत्र में फैला हुआ विविध भाषाओं, धर्मों और संस्कृतियों वाला देश है। इस प्रकार इसकी समस्याएं भी

विभिन्न प्रकार की हैं और इन समस्याओं को केवल सरकार ही नहीं सुलझासकती क्योंकि इन सामाजिक समस्याओं को निजी संपर्क की भी जरूरत होती है और संभावयह ये समस्याएं जटिल होती है। इसका अभिप्राय इष्टतम लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सहयोग और सामंजस्य प्राप्त करना है। समन्वय का अभिप्राय उपक्रम के प्रयोजन को प्राप्त करने के लिए व्यवस्थित रूप से विभिन्न भागों का एकत्रीकरण हैं। अत: देश की सामाजिक समस्याओं पर काबू पाने के लिए सभी संस्थाओं के साथ समन्वय के साथ कार्य करना आवश्यक है। समन्वय के मुख्य उद्देश्य निम्न हैं–

1. समन्वय,कार्य के दोहरेपन और परस्पर व्यापन की रोकथाम करता है।
2. समन्वय उन बाधाओं को दूर करने में मदद करता है जो समाज कल्याण क्षेत्र में काम करने के दौरान आती हैं।
3. यह समाज कल्याण संस्थाओं द्वारा इस्तेमाल किए जानेवाले संसाधनों पर कम खर्च करने में मदद करता है। संसाधनों का आदान-प्रदान अच्छा उपयोग और अच्छे उत्पादन में मदद करता है।
4. संसाधनों के वहन में खर्च को कमतर किया जा सकता है।
5. समन्वय से समाज कल्याण संस्थाओं के मध्य प्रतिस्पर्धा कम से कम होगी।
6. समन्वय, सामाजिक समस्याओं के निवारण में संयुक्तप्रयासों में मदद करेगा और इससे सामाजिक समस्याओं को बेहतर ढंग से समझा जा सकेगा। क्योंकि इसके लिए अत्याधिक जनशक्ति का इस्तेमाल होगा।

समन्वय दो चरणों पर हो सकता है कि समन्वय संस्था के अंदर होना चाहिए। विभिन्न विभागों स्टाफ सदस्यों के मध्य अच्छा समन्वय होना आवश्यक है। संस्था के भीतर सभी के मध्य खुला संप्रेषण होना जरूरत है जिससे कि संस्था के परिणाम और उत्पादन इष्टतम उद्देश्यों के अनुसार हों। दूसरे स्तर पर, विभिन्न समाज कल्याण संस्थाओं के मध्य समन्वय होना अनिवार्य है।

रिपोर्टिंग

रिपोर्टिंग का अभिप्राय उचित अभिलेख रखना और लोगों को सूचित करना है। कार्यकारी, पर्यवेक्षकों और अधीनस्थों को क्या हो रहा है इसके बारे में सूचित करता है और निरीक्षण अनुसंधान और अभिलेखों के माध्यम से इस प्रकार की सूचना का प्रबंध करने के लिए जिम्मेदार होता है। समाज कल्याण प्रशासन सभी प्रकार के अभिलेखों के देख-भाल के लिए उत्तरदायी होता है। प्रशासन सभी फाइलों की देख-भाल करता है।

बजट-व्यवस्था

समाज कल्याण संस्था का वित्तीय प्रशासन बजट-व्यवस्था में निहित है। यह संस्था के विकास के लिए संसाधन उत्पन्न करने, विनियम और आबंटन से संबन्धित है। संस्था धनराशियों, अंशदानों है जो एक विशेष अवधि के लिए उत्पन्न किए गए धन के अनेक स्रोतों को उस धन से संचालित किए गए क्रियाकलापों तथा कार्यक्रमों को प्रदर्शित करता है। बजट के प्रयोजन निम्न हैं–

1. संस्था की वित्तीय जरूरतों को समझना।
2. धन किस प्रकार इस्तेमाल किया जाएगा, इसके बारे में बताता है।
3. यह सभी स्टाफ सदस्यों के लिए एक मार्गदर्शक है कि अनेक उपशीर्षों के अंतर्गत धन किस प्रकार इस्तेमाल किया जाना चाहिए।
4. समुदाय और सेवार्थियों निधि के स्रोतों और धन किस प्रकार खर्च किया गया है, इन सब पर फोकस किया जाना चाहिए।
5. संस्था के प्रयोजनों और इन प्रयोजनों को पूरा करने के लिए योजना का मूल्यांकन करता है।
6. बेहत्तर बजट निर्माण समीक्षा और निर्णायन प्रस्तुत करता है।

मूल्यांकन

मूल्यांकन अनेक समय अवधियों-साप्ताहिक, मासिक, अर्थवार्षिक और वार्षिक अवधियों में किया जा सकता है। मूल्यांकन अनेक समूहों द्वारा किया जा सकता है अर्थात आंतरिक-संस्था मूल्यांकन निधियन संस्थाएं और बाहरी मूल्यांकन समूह।

प्रतिपुष्टि

आवधिक प्रतिपुष्टि किसी भी कार्यक्रम और परियोजना का एक बहुत जरूरी कदम है। प्रतिपुष्टि सफलताओं की फिर से जांचपड़ताल करके संगठन की मदद करती है और यदि कुछ गलत हो तो उसमें सुधार करने की उपयुक्त कार्रवाई करती है। प्रतिपुष्टि मात्र संगठन अथवा परियोजना को सुदृढ़ करने में मदद करती है। यह बेहतर परिणाम प्राप्ति हेतु निधियों के पुनःविनियोग को सक्षम बनाता है। प्रतिपुष्टि किसी परियोजना अथवा संस्था की निरंतरता को पूरी तरह से सुनिश्चित करती है।

2.5 सारांश

पूरे भारत देश में समाज कल्याण संस्थाएं लाखों लाभार्थियों की जरूरतों को पूरा करती है। इस प्रकार संगठन में सतत और व्यवस्थित नियोजन को अपनाना आवश्यक होता है। संगठन के संसाधन और क्षमताएं संगठन के इष्टतम प्रयोजनों के अनुसार उपयुक्त होने चाहिए। भावी अवसरों, मूल्यों और अपेक्षाओं के लिए सुनियोजित कार्यनीति का निर्माण किया जाना चाहिए। यदि समाज कल्याण प्रशासन के कार्यों को अच्छी तरह से समझ लिया जाए और उन्हें कार्यान्वित किया जाए तो यह अधिकतम लाभार्थियों को लाभन्वित करेगा और तब देश के लिए सामाजिक विकास एक आदर्शलोक का स्वप्न नहीं रह जाएगा।

2.6 बोध प्रश्न

प्रश्न 1: समाज कल्याण प्रशासन के कार्य को स्पष्ट कीजिये।

प्रश्न 2: समाज कल्याण प्रशासन से संबन्धित सिद्धांतों पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 3: समाज कल्याण प्रशासन के कार्यक्षेत्र का उल्लेख कीजिये।

2.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

- चौधरी डी.पी. (1992), *सोशल वैल्फेयर एडमिनिस्ट्रेशन*, आत्मा राम एंड संस, दिल्ली।
- डिमोक, एम. एवं डिमोक (1964), *पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन*, होल्ट, न्यूयार्क।
- गोयल एस.एल. एवं जैन, आर, के, *सोशल वैल्फेयर एडमिनिस्ट्रेशन*, खंड 1, दीप एवं दीप पब्लिकेशंस नई दिल्ली।
- टिटमस, आर.एम. (1958), *एस्सेज आन दि वैल्फेयर स्टेट*,-लंदन।
- *इन्साइक्लोपीडिया आफ सोशल वर्क इन इंडिया*, खंड 3 (1987), कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
- पाठक एस. (1981), *सोशल वैल्फेयर*, मैकमिलन, दिल्ली।

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 3

समाज कल्याण संगठन

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 समाज कल्याण संगठनों के प्रकार
3.3 सरकारी संगठन
3.4 गैर-सरकारी संगठन
3.5 द्विपक्षीय एवं अंतरराष्ट्रीय संगठन
3.6 दाता संस्थाएँ और संयुक्तराष्ट्र निकाय
3.7 सारांश
3.8 बोध प्रश्न
3.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के बाद आप निम्न हेतु सक्षम हो सकेंगे–

- समाज कल्याण संगठन के प्रकारों के बारे में जान सकेंगे।
- विभिन्न समाज कल्याण संगठनों के बारे में समझ सकेंगे।
- समाज कल्याण प्रशासन के संचालन जिस तरीके से वे कार्य करते हैं तथा मध्यस्थता के क्षेत्रों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

भारत में समाज सेवाओं का आशय समान्यतः उन सेवाओं से हैं जो लोगों का अधिक से अधिक कल्याण करती हैं जिनमें जन स्वास्थ्य कार्यकलाप, सामाजिक सुरक्षा उपाय, सामाजिक बीमा, सामाजिक सहायता, बाल भारत में समाज कल्याण कार्य में, प्राचीन काल से ही समाज कल्याण कार्यक्रम, समाज सेवा संगठन समाज सुधारक और समाज कार्यकर्ता रहे हैं। शताब्दियों से ही अशोक के शासनकाल में, अथवा बुद्ध के समय में यह देखा गया है कि ऐसे विभिन्न शासक और सामान्य लोग हुए हैं जिन्होंने अपने लोगों के लिए सेवा के मार्ग का अनुकरण किया और इसे जीवन के प्रयोजन के रूप में अपनाया। इस क्षेत्र में महात्मा गांधी के कार्य ने वर्तमान शताब्दी में इस राष्ट्रीय परम्परा को आगे बढ़ाने का कार्य किया है।

इस प्रकार समाज कल्याण का व्यवहार हमारे लिए नया नहीं है अपितु यह हमारे राष्ट्रीय इतिहास और संस्कृति का एक अभिन्न अंग है।

3.2 समाज कल्याण संगठनों के प्रकार

समाज कल्याण प्रशासन हर देश में खासकर विकासशील और अल्पविकसित देशों में समाज सेवा प्रदान कर रहा है। ऐसे कई प्रकार के समाज कल्याण संगठन हैं जो स्वामित्व, सेवा प्रदान करने वाले, निधियन के स्रोत और अन्य चारित्रिक अंतरों में भिन्न-भिन्न होते हैं। औपचारिक संगठन सुपरिभाषित कार्यों की संरचना संबन्धित होता है, जिसमें प्रत्येक कार्यकर्ता को प्राधिकार, ज़िम्मेदारी और जवाबदेही होती है। जब लोग एक साथ कार्य करते हैं तब वे अनौपचारिक समूह बनाते हैं जो साझा सामाजिक और प्रौद्योगिकीय स्वार्थ से जुड़े होते हैं। इन समूहों से ही अनौपचारिक संगठनों का निर्माण होता है। अनौपचारिक संगठन किसी संगठन में व्यक्तियों के मध्य उन सम्बन्धों को विश्लेषित करते हैं जो हित, वैयक्तिक अभिवृत्तियों, संवेगों, पूर्वाग्रहों, रूचियों, अरूचियों, भौतिक अवस्थितिऔर कार्य की समानता पर आश्रित होते हैं। ये सम्बन्ध औपचारिक संगठन के ढांचे में निर्धारित प्रक्रियाओं, नियमों और विनियमों के अनुसार विकसित नहीं होते। अनौपचारिक संगठनों की विशेषताएं निम्न हैं–

- ये प्रथागत होते हैं, इन्हें निर्मित नहीं किया जाता।
- इनके नियम एवं विनियम अलिखित होते हैं।
- ये अपने कार्य संचालन में संगठनात्मक चार्टों को नहीं अपनाते।

यहाँ यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि अनौपचारिक संगठन, औपचारिक संरचना पर आधारित होता है और इसके बिना इसका अस्तित्व की कल्पना नहीं है। अनौपचारिक संगठन एक संगठन को लचीलापन प्रदान करते हैं जो एक कार्यात्मक जरूरत है। तथापि, अनौपचारिक संगठन की सबसे बड़ी कमी उसकी अस्थितरता, इसकी परिवर्तनशीलता और इसकी असंभावना है।

संरचित संगठन

यह वर्णन करना उचित है कि संगठन लोगों का एक समूह होता है जो साझा हित को पूरा करने के लिए एक नेता के निर्देशन में सहयोग करते हैं। संगठन की जरूरत तब होती है जब दो अथवा उससे लोग कुछ सामान्य लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए एक साथ कार्य करते हैं। इसका महत्व सम्बन्धों के व्यवस्थित रूप से विकसित विन्यास में निहित है जिसका प्रबंधकीय कार्यों की प्रक्रिया को गति प्रदान करने के लिए निर्माण किया जाता है। यह व्यक्तियों के सम्बन्धों का स्वरूप है जो प्रयोजनों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न स्तरों पर कार्य करते हैं। इस प्रकार संरचित संगठन के मुख्यतः तीन कार्य हैं-

- औपचारिक संरचना
- निश्चित प्राधिकार
- स्पष्ट उत्तरदायित्व

असंरचित संगठन

असंरचित संगठन की स्पष्ट संरचना अथवा प्रारूप नहीं होता। विभिन्न समितियाँ, समुदायिक संगठन, सामाजिक क्रिया समूह, असंरचित संगठनों के ही उदाहरण हैं। इन्हें निश्चित प्रयोजन अथवा जरूरत के अनुसार निर्मित किया जा सकता है,जिससे कि कुछ सीमित लक्ष्य और प्रयोजन प्राप्त किया जा सके। लोगों के समूह किसी विशिष्ट लक्ष्य को पूरा करने के लिए समान प्रयोजन अथवा विचारधारा के साथ एकत्र होते हैं और प्रायः लक्ष्य प्राप्ति के पश्चात टूट जाते हैं।

3.3 सरकारी संगठन

देश में सरकारी संगठन सरकार के हैं और ये तीन स्तरों पर हैं अर्थात स्थानीय, राज्य और केन्द्रीय स्तर। समाज कल्याण सेवाएं ग्रामीण और शहरी स्थानीय प्राधीकरणों के माध्यम से स्थानीय स्तर पर हैं। **ग्रामीण स्थानीयों प्राधिकरणों** में पंचायती राज व्यवस्थाएँ हैं जो देश के ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय शासन के लिए शुरू की गई थीं। तीन-स्तरीय पंचायती राज प्रणाली में ग्राम पंचायत, पंचायत समिति, और जिला पंचायत होती हैं और ये अपने-अपने संबन्धित क्षेत्रों के लिए कल्याणकारी कार्यकलाप शुरू करने के लिए जिम्मेदार हैं। **शहरी स्थानीय प्राधिकरणों** में नगर निगम हैं जिंका सृजन संबन्धित राज्य विधायिका के अधिनियमों द्वारा किया गया थे। इन नगर निगमों को समाज कल्याण के क्षेत्र में अनिवार्य और विवेकाधीन कार्य दिये जाते हैं। राज्य स्तर पर, **राज्य सरकारें** और **संघ क्षेत्र के प्रशासन**, समाज के सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर तबकों के लिए अपने-अपने अधिकार क्षेत्रों में अनेक प्रकार की कल्याणकारी सेवा कार्यक्रमों का निर्माण करते हैं और उन्हें कार्यान्वित करते हैं। राज्य सरकार अथवा संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन प्रमुख रूप से समाज कल्याण विभागों और स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से कल्याण के प्रस्ताव और कार्यक्रम क्रियान्वित करते हैं। राज्य स्तर पर, समाज कल्याण विभाग, कल्याण कार्यों के लिए जिम्मेदार होता है और विभाग का प्रशासनिक प्रधान सचिव होता है।

समाज कल्याण विभाग का प्रधान निदेशक होता है जिसकी मदद, अपर निदेशक, संयुक्त निदेशक, उपनिदेशकों, प्रशासनिक अधिकारी और सहायक स्टाफ द्वारा की जाती है। कार्यक्षेत्र में संभागीय और जिला समाज कल्याण अधिकारी जिला स्तर पर कार्य करते हैं तथा अपने-अपने क्षेत्रों में विभिन्न कल्याण परियोजनाएं लागू करते हैं। सभी स्तरों पर प्रशासनिक और स्टाफिंग संरचना कमोबेश एक जैसा है और कुछ छोटे-मोटे परिवर्तनों को छोड़कर, प्रत्येक राज्य में इसी प्रकार की सेवाएं प्रस्तुत की जाती हैं। राज्य समाज कल्याण बोर्ड के प्रमुख कार्य निम्न हैं–

i. विभिन्न क्षेत्रों में कल्याण सेवाओं के विकास के संदर्भ में स्वैच्छिक समाज कल्याण संस्थाओं की वृद्धि का संवर्धन करना।
ii. सहायता अनुदान कार्यक्रम निम्न की ओर से नियोजित करना–
    - विकास और पूंजी अनुदानोंके लिए केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड।

- अनुरक्षण अनुदानों के लिए राज्यकल्याण सरकार।

iii. सहायता प्राप्त संस्थाओं के लिए कार्यक्षेत्र परामर्श सेवाओं की व्यवस्था में केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड की मदद करना।

iv. ग्रामीण कल्याण परियोजनाओं के कार्यक्रमों कोनियोजित करना।

v. राज्या और स्थानीय स्तरों पर स्वैच्छिक कल्याण संस्थाओं केमध्य प्रभावी समन्वय को प्रेरित करना।

vi. कल्याणकारी सेवाओं के भावी विकास में केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड और राज्य सरकार की मदद करना।

केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड

स्वैच्छिक समाज कल्याण के इतिहास में महत्वपूर्ण कदम प्रथम पंचवर्षीय योजना में समाज कल्याण क्षेत्र के लिए 4 करोड़ रूपये की व्यवस्था के साथ 1953 के रूप में था। देश के योजनाकारों के सामने यह दुविधा थी कि क्या इस राशि को सरकारी तंत्रकर्ता माध्यम से उचित इस्तेमाल किया जाना चाहिए या स्वैच्छिक एजेंसियों के माध्यम से इस्तेमाल किया जाना चाहिए क्योंकि उस समय न तो केन्द्र में और न ही राज्य स्तरों पर कोई मुक्त समाज कल्याण विभाग था। तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू के आदेशानुसार एक उत्कृष्ट समाज कार्यकर्ता डॉ. (श्रीमती) दुर्गाबाई देशमुख को केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड का प्रथम अध्यक्ष बनाया गया। बोर्ड का मुख्य कार्य समाज कल्याण कार्यकलापों में लगे स्वैच्छिक संगठनों को सहायता अनुदान और तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करना था। बोर्ड का एक कार्य उन क्षेत्रों में संगठन का सृजन करना भी था जहाँ ये उपलब्ध नहीं थे। तदनुसार, बोर्ड ने परिवार और बाल कल्याण योजनाओं नाम से एक योजना शुरू की। वर्तमान समन्वित बाल विकास सेवा कार्यक्रम इन प्रयत्नों का परिणाम था।

केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड एक अर्द्ध-स्वायत्त निकाय के रूप में योजना आयोग के सुझावों पर स्थापित किया गया, परन्तु प्रशासनीय शक्ति, शिक्षा मंत्रालय के पास थी। इसे भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा-25 के अन्तर्गत 1 अप्रैल 1969 से एक कम्पनी के रूप में पंजीकृत किया गया जिससे कि इसे अधिक स्वायत्ता और लचीलापन प्राप्त हो सके। बोर्ड के निम्न उद्देश्य हैं–

1. स्वैच्छिक समाज सेवा एजेन्सियों के विकास का संवर्द्धन करना।
2. व्यक्तियों के उन विशिष्ट समूहों के लिए स्वैच्छिक कल्याण कार्यक्रमों की मदद करना जिन्हें विशेष सहायता की जरूरत है जैसे-महिलाएं, बालक और विकलांग।
3. विभिन्न केन्द्रीय और राज्य सरकारों की कल्याण योजनाओं का समन्वय करना।
4. कल्याण के नए कार्यक्रमों को विकसित करना और अग्रणी एवं नवीन प्रयोजनाओं को आयोजित करना जो आम आदमी की मौलिक सुविधाओं के सन्निकट है।

मंत्रालय की मदद, इसके कार्यों में,विभिन्न अधीनस्थ संगठन, राष्ट्रीय आयोग और राष्ट्रीय संस्थान करते हैं जिन पर मंत्रालय अपने प्रशासनिक नियन्त्रण का इस्तेमाल करता हैं। नीचे कुछ निकायों के नाम दिए गए हैं–

1. केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड
2. राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति आयोग
3. अल्पसंख्यक आयोग
4. राष्ट्रीय सामाजिक रक्षा संस्थान
5. राष्ट्रीय दृष्टि विकलांग संस्थान
6. राष्ट्रीय अस्थि विकलांग संस्थान
7. राष्ट्रीय पुनर्वास संस्थान

मंत्रालय के कार्यकलाप

बहुत सारे विषय मंत्रालय के बढ़ते जा रहे है और तदनुसार, मंत्रालय समाज में विभिन्न वर्गों के कल्याण से संबन्धित बहु-आयामी कार्य करता है, यथा–

1. कार्यक्रमों की नीति, नियोजन और समन्वय
2. केन्द्रीय और केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं के संचालन
3. राज्य को दिया जाने वाला मार्गदर्शन और निदेश
4. योजना आयोग के साथ सम्बन्ध
5. समाज कल्याण राज्य मंत्री/सचिवों का सम्मेलन बुलाना
6. आयोग, समितियों/अध्ययन दलों का गठन
7. स्वैच्छिक संगठनों का सहायता
8. अनौपचारिक और जन शिक्षा कार्यकलाप
9. प्रकासन
10. अनुसंधान, शिक्षा और प्रलेखन
11. अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संगोष्ठियों और कार्यशालाओं में भाग लेना

3.4 गैर- सरकारी संगठन

राज्य ही समाज में मात्र काम नहीं कर रहा है अपितु ऐसे बहुत सारे संगठन हैं जिन्हेंस्वैच्छिक संगठन भी कहा जाता है जो समाज में लोगों के कल्याण,एकीकरण और विकास के लिए विभिन्न कार्य करते हैं। स्वैच्छिकवाद (वोलेंटियरिज़्म) शब्द लैटिन वॉलन्टास से उत्पन्न हुआ है जिसका तात्पर्य स्वतंत्रता की इच्छा है। राजनीतिक विज्ञानियों ने "संघ की स्वतंत्रता" की परिभाषा सभी व्यक्तियों के मान्य कानूनी अधिकार के रूप में दी है जो उस प्रयोजन के संवर्द्धन के लिए एक साथ आते हैं जिनमें उनकीअभिरूचि है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1) द्वारा भारतीय नागरिकों को संघ निर्माण करने का अधिकार प्रदान

किया गया है। संयुक्त राष्ट्र शब्दावली में स्वैच्छिक संगठनों को गैर-सरकारी संगठन के रूप में मान्यता मिली है।

स्वैच्छिक संगठनों की परिभाषा

लार्ड बेवरीज के अनुसार सही-सही कहा जाए तो एक स्वैच्छिक संगठन वह संगठन है (कार्यकर्ता वैतनिक अथवा अवैतनिक हो सकते हैं) जिसे बाहरी नियंत्रण के बिना इसके सदस्यों द्वारा शुरू और शासित किया जाता हैं। गैर-सरकारी संगठन/स्वैच्छिक संगठन की मुख्य विशेताएं निम्न उल्लेखित हैं-

1. यह एक संगठन होता है, जिसे इसके सदस्यों द्वारा शुरू किया जाता है और जिसे किसी बाहरी नियंत्रण के बिना लोकतांत्रिकता सिद्धांतों पर इसके कर्मियों द्वारा शासित किया जाता है।
2. इसका प्रशासनिक ढांचा, विधिवत गठित प्रबंधन और कार्यकारी समितियाँ होती है।
3. इसके निश्चित लक्ष्य और प्रयोजन तथा कार्यक्रम होते हैं।
4. कार्यकलापों के कार्यक्षेत्र के अनुसार सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860, भारतीय न्यास अधिनियम, 1882, सहकारी समितियाँ अधिनियम, 1904 अथवा कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 25 के अंतर्गत पंजीकृत किया जाता है।
5. यह अपने क्रियाकलापों के लिए अंशतया सहायता अनुदान के रूप में राजकोष से और अंशतया स्थानीय समुदाय के सदस्यों से और/अथवा कार्यक्रम के लाभार्थियों से अंशदान चंदे के रूप में निधि प्राप्त किया जाता है।

गैर-सरकारी संगठन अपनी स्थापना से विभिन्न नामों से जाने जाते हैं। धर्मार्थ संगठन वे संगठन हैं जो गरीबों अथवा जरूरतमंद लोगों की मदद करने के लिए स्थापित किए जाते हैं। इन संगठनों का निर्माण मुख्यतः धर्मार्थ दृष्टिकोण के माध्यम से जरूरतमंदों की सेवा करने के लिए किया जाता है। मिशनरीज आफ चेरिटी ऐसे ही धर्मार्थ संगठनों का एक उदाहरण है। इसके ज्यादातर कार्यकर्ता पूरी तरह से सेवा के लिए समर्पित हैं और वे किसी भी चीज की वापसी की उम्मीद किए बिना सेवा करते हैं। ये संस्थाएं गरीबों और उपेक्षितों को सांस्थानिक देखरेख प्रस्तुत करती हैं। ये जरूरतमंदों के लिए भोजन वस्त्रऔर डाक्टरी उपचार भी मुहैया कराती है।

धर्मार्थ संगठन, धर्मार्थ निधि अधिनियम 1890 के अधीन पंजीकृत किए जाते हैं। धर्मार्थ निधि अधिनियम की धारा 2 में धर्मार्थ उद्देश्यों को गरीबों के लिए राहत, शिक्षा, चिकित्सा-सहायता और सामान्य उपयोगिता के किसी दूसरे प्रयोजनोंकी प्रगति के रूप में पारिभाषित किया गया है। सोयाटियाँ और न्याय स्वैच्छिक संगठन सोसायटी को पंजीकरण अधिनियम-1860, भारतीय न्याय अधिनियम 1882 अथवा भारतीय कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 25 के अंतर्गत पंजीकृत किया जा सकता है। सबसे ज्यादा गैर-सरकारी संगठन सोसाइटीज़ पंजीकरण अधिनियम, 1860 के अंतर्गत पंजीकृत किये जाते हैं। सोसाटियाँ अपने शासन और कार्यवाही के लिए अपने दैनिक कार्यों और नियमों में कुछ प्रणाली का अनुकरण करने के लिए विवेकपूर्ण प्रयोजन के साथ निर्मित की जाती हैं। निम्नलिखित कार्यकलापों की

सही तरीके से देखभाल की जानी चाहिए क्योंकि यह भी संगठन के बेहतर कार्य संचालन के लिए महत्वपूर्ण हैं–

- संगठन द्वारा विश्लेषित प्रयोजनों की प्राप्ति कर प्राथमिक अध्ययन।
- संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए, जनशक्ति की भर्ती, सही काम के लिए सही लोग।
- संविधान का ढाँचा तैयार करना जिसमें संघ का ज्ञापन नियम और विनियम हों।
- उपयुक्त कानूनी प्राधिकार द्वारा सोसायटी के पंजीकरण को सुनिश्चित करना।

न्यास / ट्रस्ट

धर्मार्थ न्यासों द्वारा भी कल्याण कार्यक्रम नियोजित किए जाते हैं। भारतीय धर्मार्थ न्यास अधिनियम सावर्जनिक, निजी धार्मिक और धर्मार्थ न्यासों को पंजीकृत करने और संचालित करने का अवसर प्रस्तुत करता है। न्याय एक ज़िम्मेदारी है जिसका जुड़ाव संपत्ति के स्वामित्व से है तथा अन्यों और स्वामी के लाभ के लिए न्यासियों में स्वीकृत व्यक्त और विश्वास से उत्पन्न होता है। धर्मार्थ न्यास के उद्देश्य निम्न हैं–

- गरीबों की मदद के लिए न्यास।
- शिक्षा की उन्नति के लिए न्यास।
- धर्म की उन्नति के लिए न्यास।
- अन्य प्रयोजनों के लिए न्यास जो समुदाय के लिए लाभकारी हों।

भारतीय सरकार ने गैर-सरकारी संगठनों के अभ्युदय को प्रोत्साहित किया है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में, सरकार ने गैर-सरकारी संगठनों को देश की विकास प्रक्रिया में भाग लेने की भूमिका की महत्ता पर जोर दिया। सरकार, समाज विकास में महत्वपूर्ण भूमिका शुरू करने के लिए गैरसरकारी संगठनों को चाहती थी इसलिए ये कार्य और जिम्मेदारियाँ नीचे दिए गए हैं–

1. ग्रामीण लोगों को चयन और विकल्प प्रदान करने के लिए सरकार के प्रयत्नों को पूरा करना।
2. गाँव की आबादी के आँख और कान होना जिससे कि गाँव की आबादी को कानून विधान नया ज्ञान और सूचना प्रदान की जा सके।
3. स्वैच्छिक संगठनों को, प्रारम्भिक परियोजनाओं को नए विचारों के साथ शुरू करना चाहिए जो यदि सफल हों तो उन्हें व्यापक पैमाने पर क्रियान्वित किया जा सकता है।
4. निचले स्तरों पर लोगों को सुविधाएं प्रदान करने के लिए वितरण प्रणालियों को प्रेरित करना।
5. सूचना का प्रचार-प्रसार करना।
6. आत्म-निर्भर और स्वतंत्र बनाने के लिए समूदायों की मदद करना।
7. समुदाय संगठन के लिए समुदायों में जनशक्ति संसाधनों की शुरुआत करना।

8. समुदाय में, घरों के लिए प्रौद्योगिकी और नवीनीकरण लाना। उदाहरणस्वरूप, ग्रामीण आबादी को कृषि की नई बेहतर विधियों के बारे में प्रशिक्षित करना।
9. समस्याओं का निवारण करने और स्वैच्छिकवाद को प्रेरित करने के लिए निचले स्तर के कर्मियों को प्रशिक्षित करना।
10. समुदाय के संसाधनों को इकट्ठा करना।
11. समुदाय में क्या हो रहा है, इसके बारे में समुदाय को जिम्मेदार और जवाबदेह बनाने के लिए सामुदायिक-भागीदारी को प्रेरित करना।

लोकतांत्रिक, समाजवादी और कल्याण समाज में, स्वैच्छिक गैर-सरकारी संगठन बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। भारत में गैर-सरकारी संगठनों ने देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निष्पादन किया है। ये सरकार के साथ, सामाजिक विकास में सामाजिक न्याय के साथ उत्तरदायित्व वहन करते हैं। हाल ही में हम विभिन्न गैर-सरकारी संगठनों की बढ़ती हुई संख्या देखते हैं जो सरकारी कार्यक्रमों पर कार्य कर रहे हैं अथवा जनसंख्या के कमजोर वर्गों के विकास के लिए अपने कार्यक्रमों का नियोजन किया है। गैर-सरकारी संगठनों के प्रमुख कार्य निम्न हैं–

1. मानव, स्वभाव से ही सामाजिक होते हैं अर्थात लोग अपने लाभ के लिए और दूसरों के लिए स्वैच्छिक रूप से, समूह और संघ बनाते हैं जिससे कि पूर्ण और संपन्नजीवन निवहन कर सकें।
2. संगठित स्वैच्छिक क्रिया, विविध राजनीतिक और दूसरे हितों से समूहों और व्यक्तियों की मदद करती है, राष्ट्रीय एकता की भावना को सुदृढ़ करने में योगदान करती है और सहभागी लोकतंत्र का संवर्धन करती है।
3. लोकतांत्रिक पद्धति वाले बहुलवादी समाज को व्यक्ति और राज्य के मध्य एक मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए बहुत सारे स्वतंत्र गैर-सरकारी संगठनों की जरूरत पड़ती है और इस प्रकार सरकार को विभिन्न क्षेत्रों में एकाधिकार स्थापित करने से रोका जाता है।
4. योजनाकार की गलतियों को ठीक करना में बी इनकी भूमिका महत्वपूर्ण होती है। गैर-सरकारी संगठन लोगों की हिस्सेदारी से नियोजन, नीति-निर्माण, समाज कल्याण प्रशासन आदि में गलतियाँ बता सकते हैं।
5. राज्य के पास नागरिकों की सभी जरूरतें पूरी करने के लिए जरूरी वित्तीय संसाधन और जनशक्ति नहीं होते।
6. गैर-सरकारी संगठन समुदाय-भागीदारी का संवर्धन कर सकते हैं क्योंकि वे लोगों के नजदीक होते है। लोग उन्हें अपेक्षाकृत बेहतर तरीके से उत्तर देते हैं।
7. प्रत्यक्ष भागीदारी के माध्यम से ज़िम्मेदारी की भावना सृजित करना गैर-सरकारी संस्थाएं अपने कार्यकर्ताओं के संपर्क के कारण समुदाय में कार्यक्रम तैयार करने और उन्हेंकार्यन्वित करने की बेहतर स्थिति में होती हैं।

8. गैर-सरकारी संगठन विशिष्ट मुद्दों पर लक्ष्यसमूहों में बेहतर जानकारी और सकारात्मक दृष्टीकोण के लिए कार्य कर सकते हैं अर्थात ये जनमत तैयार करने में उल्लेखनीय भूमिका निभाते हैं। साथ ही गैर-सरकारी संगठन, समाज की भलाई के लिए नए सामाजिक विधानों का संवर्धन करने के लिए भी कार्य कर सकते हैं।

9. गैर-सरकारी संगठन स्वायत्त होते हैं और अपने कार्य-संचालन में उन्हें लचीलेपन की ज्यादा स्वतंत्रता होती है तथा वे नई पद्धतियों और कार्यक्रमों पर इस्तेमाल कर सकते हैं।

10. गैर-सरकारी संगठन कार्यक्रम-कार्यान्वयन में और समुदाय के लोगों के लिए नए कार्यक्रम बनाने में सरकार की मदद कर सकते हैं।

3.5 द्विपक्षीय एवं अंतरराष्ट्रीय संगठन

द्विपक्षीय संगठन

द्विपक्षीय शब्द का अभिप्राय दो देशों के मध्य समझौता से है। दो देश जाति, रंग अथवा मूलवंश के भेदभाव के बिना, गरीबों और जरूरतमंदों की मदद और पुनर्वास के लिए दान की गयी सामग्री के प्रवेश को शुल्क रहित प्रवेश समझौता करते हैं। इन समझौतों के अंतर्गत वस्तुएं जैसे खाद्यान्न, दुग्ध पाउडर, पनीर, प्रसंस्कृति खाद्य सामग्री, दवाइयाँ, मल्टीविटामिन की गोलियाँ, अस्पताल, अस्पताल के उपकरण जैसं एंबुलेंस, सचल औषधालय, कृषि औजार आदि अपने-अपने देशों में स्थिर संगठनों द्वारा स्वीकार किए जाते हैं। अधिकारिता मंत्रालय उपहार वितरण के द्विपक्षीय करार करता है, जिसे भारत सरकार, जर्मनी संघीय गणतंत्र, स्वीडन, स्वीटज़रलैंड, यूनाइटिड किंगडम और संयुक्तराज्य अमेरिका के साथ करती है। भारतीय खाद्य निगम को उपहार के समझौते के अंतर्गत स्वीकृत दरों पर सेवाओं के लिए भुगतान पर उपहार परेषणके सम्बन्ध में बंदरगाह संचालन कार्य को संभालने की ज़िम्मेदारी सौंपी गई है। स्वीकृत परेशितियों के स्थान के लिए उपहार वितरण की निकासी और अंतर्देशीय परिवहन पर होने वाला व्यय समझौते की शर्तों के अनुसार मंत्रालय द्वारा निर्व्हन किया जाता है।

अंतर्राष्ट्रीय संगठन

यद्यपि लोगों की भलाई राज्य की चिंता है, फिर भी यह वित्तीय संसाधनों, जनशक्ति और अन्य संसाधनों की कमी के कारण पूरा नहीं किया जा सकता। इसलिए राज्य अपने गरीबों और जरूरतमंदो के भाग्य को सुधारने के लिए अन्य राष्ट्रों और देशों की मदद पर आश्रित होता है। यह इस मान्यता पर आधारित है कि समाज कल्याण में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की जरूरत सर्वत्र मानवों को सामाजिक और आर्थिक कल्याण पहुँचाने के लिए पड़ती है। अंतर्राष्ट्रीय समाज कल्याण संगठनों को पाँच समूहों में बांटा जा सकताहै–

1. अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप की सरकारी संस्थाएं अर्थात संयुक्तराष्ट्र विश्व स्वास्थ्य संगठन, अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन।

2. निजी अंतर्राष्ट्रीय संगठन जैसे अंतरराष्ट्रीय समाज कार्य सम्मेलन विश्व मानसिक स्वास्थ्य परिसंघ अंतरराष्ट्रीय बाल कल्याण संघ।
3. प्रत्येक देश में निजी अंतरराष्ट्रीय संगठनों की स्वतंत्र संस्थाएं होती हैं, यथा- अंतर्राष्ट्रीय रेडक्रांस वाइ.एम.सी.ए. और वाइ. डब्ल्यू. सी.ए.।
4. राष्ट्रीय सरकारी संस्थाएं अन्य देशों को अपनी मदद प्रदान करती हैं उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य तकनीकी सहयोग कार्यक्रम अथवा चार सूत्री कार्यक्रम।
5. राष्ट्रीय निजी संस्थाएं दूसरे देशों को समाज सेवाएं प्रदान करती हैं यथा- फोर्ड फाउंडेशन और भारत में स्थित रॉकफैलर फाउंडेशन।

भारत में अंतरराष्ट्रीय संगठन

अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं जिन्होंने भारत में अपने कार्यकलाप संचालित किए, उनमें रेड क्रास, वाइ. एम. जी. ए. और वाई. डब्ल्यू. सी. ए. सम्मिलित हैं। ये संगठन अपने राष्ट्रीय संगठनों के माध्यम से भारत में कार्य कर रहे हैं जो पूर्ण रूप से स्वतंत्र हैं। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद राष्ट्र संघ ने कुछ अंतरराष्ट्रीय संगठन शुरू किए जिन्होंने कुछ समय बाद भारत में कार्य करना प्रारम्भ किया। दूसरा विश्वयुद्ध समाप्त होने के बाद अन्य संस्थाओं समेत विश्वस्वास्थ्य संगठन और खाद्य एवं कृषि संगठन अस्तित्व में आए जिन्होंने भारत में क्षेत्रीय कार्यालयों की स्थापना की।

उक्त वर्णित संस्थाओं के अलावा कुछ और अंतरराष्ट्रीय संगठनों के नाम प्रस्तुत किए गए हैं-

- एक्शनफॉर फूड प्रोड्क्शन
- को-आपरेटिव फॉर अमेरिकन रीलीफ एवरीव्हेयर
- इंडो-जर्मन सोशल सर्विस सोसाइटी
- इंटरनेशनल एसोसिएशन ऑफ लायन्स क्लब
- रोटरी इंटरनेशनल
- साल्वेशन आर्मी

3.6 दाता संस्थाएं और संयुक्तराष्ट्र निकाय

दाता संस्थाएं, किसी भी गैर-सरकारी संगठन का एक मुख्य कार्य अपने कार्यकलापों के लिए वित्तीय मदद की व्यवस्था करना है। विभिन्न राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संगठन, समाज सेवा समाज सेवा संगठनों को धनराशिदे रहे है। इस प्रकार की संस्थाओं को दानी संस्थाओं के रूप में जाना जाता है। इस संगठानों द्वारा प्रस्तुत परियोजना प्रस्तावों के आधार पर समाज सेवा कार्यकलापों को मदद/समर्थन दिया जाता है। समान्यतः दानी संस्थाएं, जरूरमंदों और सुविधा-वंचित लोगों के लिए अपने विभिन्न सामाजिक कार्यकलापों हेतु पंजीकृत संगठनों को निधियाँ और अन्यसेवाएं मुहैया करा रही हैं। उनकी मदद की मात्रा

ज्ञान शांति मैत्री

जरूरतों और समस्याओं की गंभीरता के अनुसार प्रत्येक परियोजना पर निर्भर करती है। दानी संस्थाएं सामान्य रूप से अपने नागरिकों और सरकार से धन उगाहती हैं। कुछ दानी संस्थाएं निम्न हैं–

- ग्लोबल फंड
- बिल गेट्स फाउंडेशन
- विलियम जे. क्लिंटन फाउंडेशन
- फोर्ड फाउंडेशन
- सी.एम.एम. बी. (कैथोलिक मेडिकल मिशन बोर्ड)
- यू.एस.ए.आई.डी.(युनाइटेड स्टेट्स एजेंन्सी फार इन्टरनेशनल डवलपमैंट)
- ए.एच.एफ (एड्स हैल्थकेयर फाउंडेशन)
- केरीटास इंडिया
- चर्च आक्जीलरी फॉर सोशल एक्शन (सी. ए.एस.ए)
- डेनिश इंटरनेशनल डवलपमेंट (डी.ए.एन.आई.डी.ए)
- क्रिश्चियन चिल्ड्रन फंड
- वर्ल्ड विजन
- काआपरेटिव फार अमेरिकन रिलीफ एवरीव्हेयर (सी.ए.आर.ई)
- कैथोलिकर रिलीफ सर्विसजि (सी.आर.एस)
- इंडो-ग्लोबल सोशल सर्विस सोसायटी (आई.जी.एस.एस.एस.)
- कोरडेड, जर्मनी

संयुक्तराष्ट्र निकालय (United Nations Bodies)

संयुक्त राष्ट्र ने विशिष्ट मदद प्राप्त करने वाले समूहों के लिए अनेक संगठन स्थपित किए हैं। नीचे अंतरराष्ट्रीय कल्याण के लिए उनके योगदान का वर्णन किया गया है–

संयुक्त राष्ट्र बाल आपात निधि (यूनीसेफ) की स्थापना 11 दिसंबर, 1946 को सामान्य सभा द्वारा सम्पन्न की गई थी। इसका प्रयोजन विकासशील देशों के बालकों और युवाओं की दशा सुधारने के लिए उनकी मदद करना है । यूनीसेफ के अंतर्गत स्वास्थ्य, पोषण, समाज कल्याण, शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण जैसे क्षेत्रों में मदद की जाती है। यह सरकारों को उनके बालकों की महत्वपूर्ण जरूरतों का निर्धारण करने के लिए सरकारों की मदद भी करता है और इन्हें पूरा करने के लिए विस्तृत कार्यक्रमका नियोजन करता है। यूनीसेफ मदद, उपकरण, औषधियाँ, कुएं खोदने का साज-सामान, विद्यालय के उद्यान

ज्ञान शांति मैत्री

का समान, दैनिक देखभाल केद्रों के लिए आदर्श उपकरण और पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण के रूप में प्रदान की जाती है। यूनीसेफ को 1965 में नोबेल शांति पुरस्कार और 1989में इंद्रिरा शांति पुरस्कार दिया गया।

शरणार्थियों सम्बन्धी संयुक्तराष्ट्र उच्चायोग

शरणार्थियों सम्बन्धी संयुक्तराष्ट्र उच्चायोग (यू.एन.एच.सी.आर.) के कार्यालय की स्थापना 1 जनवरी 1951 को किया गया। यह कानूनी संरक्षण प्रदान करता है और सरकार के अनुरोध पर शरणार्थियों को सामग्री मदद प्रदान करता है। 1954 में यू.एन.एच.सी.आर. को नोबल पुरस्कार दिया गया।

संयुक्तराष्ट्र के विभिन्न दूसरे निकाय भी हैं जो समाज कल्याण के लिए कार्य कर रहे हैं, प्रमुख संगठन निम्न हैं –

- संयुक्तराष्ट्र क्षेत्रीय विकास केंद्र
- संयुक्तराष्ट्र विकास केंद्र
- संयुक्तराष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन
- संयुक्तराष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम
- संयुक्तराष्ट्र प्रशिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान
- संयुक्तराष्ट्र सामाजिक विकास अनुसंधान संस्थान

3.7 सारांश

समाज कार्य संगठनों के बारे जानकारी प्रदान करेने में इस इकाई ने हमारी मदद की। इस इकाई में अनेक प्रकार के उन समाज कल्याण संगठनों को विस्तार से स्पष्ट किया गया जो हमारे देश में कार्यान्वित हैं। इसके अलावा इस बारे में भी वर्णन किया गया है कि सरकारी संगठन क्या हैं और वे तीन स्तरों पर किस प्रकार कार्य करते हैं तथा भारत में गैर-सरकारी संगठनों की कार्यप्रणाली के बारे में भी वर्णन किया गया है।

3.8 बोध प्रश्न

प्रश्न 1: सामाजिक संगठन कल्याण के विविध प्रकारों का उल्लेख कीजिये।

प्रश्न 2: सरकारी व गैर-सरकारी संगठनों के बारे में वर्णन कीजिये।

प्रश्न 3: द्विपक्षीय व अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के बारे में विवेचन प्रस्तुत कीजिये।

प्रश्न 4: दाता संस्थाएं और संयुक्त राष्ट्र निकाय पर प्रकाश डालिए।

3.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

- चौधरी,डी.पी. (1992), *सोशल वैल्फेयर एडमिनिस्ट्रेशन* , दिल्ली आत्माराम एंड संस ।

● फ्राइडलेंडर, डब्ल्यू.ए. (1955), *इंट्रोडक्शन टू सोशल वैल्फेयर*, नई दिल्ली प्रेंटिस हाल आफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड।

● गोयल, एस.एल.एवं जैन, आर.के. *सोशल वैल्फेयर एडमिनिस्ट्रेशन*, खण्ड 2, दीप एंड दीप पब्लिकेशंस नई दिल्ली।

● के.के. जेबक (1961), *मैथड्स एंड फील्ड्स आफ सोशल वर्क इन इंडिया* बॉम्बे एशिया पब्लिशिंग हाउस।

● सिद्दीकी, एच. वाई. (1990) *सोशल वैल्फेयर इन इंडिया* हरनाम पब्लिशिंग नई दिल्ली।

● स्पेच्ट हैरी एवं विकरी एने (1977) *इंग्रेटिंग सोशल वर्क मेथड्स* लंदन जार्ज,एलन एंड अनविन।

● वरहम जे.एवं कीगल पाल (1967), *एन इंट्रोडक्शन टू एडमिनिस्ट्रेशन फार सोशल वर्कस* दि ह्यू मेनिटीज प्रेस, लंदन।

इकाई 4

समाज कल्याण सेवाओं का प्रबंधन

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 प्रबंधन के संघटक
4.3 संगठनात्मक परिवेश
4.4 संप्रेषण और सामाजिक विपणन
4.5 जनसंपर्क
4.6 निधि उगाहना
4.7 सामाजिक लेखा-परीक्षा
4.8 संघर्ष समाधान और थकान से निपटना
4.9 सारांश
4.11 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप –

- समाज कल्याण प्रशासन की विशेषताओं के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- कार्योन्मुख वातावरण सृजित करने, सम्बन्धों को समझने और व्यावसायिक टीम के साथ कार्य करने की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- निधि उगाहना और जनसंपर्क को रेखांकित कर सकेंगे।
- कुछ महत्वपूर्ण विषयों, जो सामाजिक लेखा-परीक्षा और पारदर्शिता के बारे में भी सूचना प्राप्त करेंगे, जो समाज कल्याण प्रशासन में बहुत महत्ता प्राप्त कर रहे हैं।

4.1 प्रस्तावना

यद्यपि, समाज कल्याण प्रशासन को समाज कार्य अभ्यास की द्वितीयक पद्धति के रूप में माना जाता है, परन्तु यह सेवा वितरण प्रणाली में एक महत्वपूर्ण भूमिका निष्पादित करता है। किसी जनसंख्या के

कल्याण के लिए किसी कार्यक्रम की सफलता इकसे प्रशासन की दक्षता पर बहुत सीमा तक आश्रित होती है। इस इकाई में, हम समाज कल्याण प्रशासन के अनेक संघटकों का अवलोकन करेंगे। जैसे नौकरशाही, प्राधिकार और शक्ति, नेतृत्व टीम कार्य इत्यादि। इन विशेषताओं पर फोकस करने से पहले आइए हम भारत में सर्वप्रथम समाज कल्याण प्रशासन के घटकों को समझने का प्रयत्न करें। भारत में कल्याणकारी कार्यकलाप, परम्परागत रूप से, स्वैच्छिक प्रकार के धार्मिक और लोकोपकारी संगठनों द्वारा सम्पन्न किया जाता रहा है।

4.2 प्रबंधन के संघटक

प्राधिकार, शक्ति और स्थिति

संगठन को अंत:सम्बन्धों का जाल माना जाता है जो प्राधिकार, शक्ति और संप्रेषण के औपचारिक और अनौपचारिक विन्यासों से अत्याधिक पूर्ण होता है। सामान्य बोलचाल में प्राधिकार और शक्ति को पर्याय समझा जाता है। जब किसी मसले के सम्बन्ध में निर्णय लेने का अधिकार किसी पद में निहित होता है तो तब उस पद के बारे में कहा जा सकता है कि प्राधिकार उपलब्ध है, जबकि शक्ति दूसरे के व्यवहार पर प्रभाव डालने की व्यक्ति की योग्यता है। ऐसा तब होता जब किसी व्यक्ति द्वारा अन्य को प्रभावित करने वाला व्यवहार, संगठनात्मक पदानुक्रम में बहुत कम स्तर पर होता है। इस प्रकार प्राधिकार कानूनी अथवा वैध होता है जबकि शक्ति का अस्तित्व, गैर-संस्थागत होता है। चूंकि संगठनात्मक संरचना में प्रत्येक पद को कुछ ज़िम्मेदारी सौंपी जाती हैं तथा इन जिम्मेदारियों को संभालने के लिए पर्याप्त प्राधिकार दिये जाने चाहिए। कोई भी कर्मचारी प्रभावशाली तरीके से तब तक कार्य नहीं कर सकता जब तक उसके पास अपेक्षित प्राधिकार की कमी है। प्राधिकार परम्परागत (परम्परा अथवा मानंदडों से उत्पन्न), चमत्कारिक (वैयक्तिक चमत्कार अथवा दैवी या विशिष्ट शक्तियों से उत्पन्न), कानूनी प्राधिकार (संगठन द्वारा निर्धारित सिंद्धांतों, नियमों, विनियमों से उत्पन्न) से संबन्धित हो सकता है। स्थिति अथवा स्तर अन्य की तुलना में व्यक्तियों की स्थिति होती है। यह एक प्रकार की प्रतिष्ठा की श्रेणी है जो प्राधिकार के अनुसार व्यक्ति में अंतर्निहित होती है।

अत: प्राधिकार, शक्ति और स्थिति, प्रशासन के महत्वपूर्ण संघटक है जो प्रेरण, कार्य संतुष्टि, राजनीति करना और संगठनात्मक व्यवहार के अन्य पक्षों में महत्वपूर्ण भूमिका वहाँ करते हैं।

अधिकारी-तंत्र (नौकरशाही)

प्राचीन समय में, संगठन छोटे-छोटे होते थे और स्वामी और कर्मचारियों के साथ प्रत्यक्ष संपर्क हुआ करता था। विशाल आकार वाले संगठन की स्थापना और विस्तृत भौगोलिक स्थानों में फैले बड़ी संख्या में लोगों के रोजगार से, नौकरशाही प्रशासनिक संरचना को, आदर्श प्रकार का माना गया। नौकरशाही की कुछ मुख्य विशेषताएं हैं–

- श्रम विभाजन

- प्राधिकार का पदानुक्रम
- नियम एवं कायदे
- प्रक्रियाओं का कठोरता से पालन
- औपचारिक लिखित दस्तावेज और विस्तृत फाइलिंग प्रणाली
- विशेषज्ञ प्रशिक्षण
- अंतरवैयक्तिक सम्बन्धों का अव्यक्तित्व
- कार्मिक प्रशासन का विवेकपूर्ण कार्यक्रम

अभिप्रेरण कर्मचारियों के मानसिक स्वास्थ्य और संगठन के स्वास्थ्य को निर्धारित करने वाला आवश्यक कारक है। यह वह प्रक्रिया है जो लक्ष्य प्राप्त करने के लिए व्यक्ति की तीव्रता, निर्देशन और प्रयत्नों की निरंतरता के लिए जिम्मेदार है। कर्मचारी की केवल योग्यता अथवा दक्षता ही पर्याप्त नहीं होती बल्कि कार्य करने की इच्छा भी उसके कार्य-निष्पादन में अद्वितीय भूमिका वहन है। अत: प्रबंधकों अथवा प्रशासकों का कार्य,तत्काल नौकरी के लिए उपयुक्त व्यवसायिकों की भर्ती करके समाप्त नहीं हो जाता,अपितु उनके अभिप्रेरण और उन्हें रोके रखना तथा उनके मनोबल को बनाए रखना भी उनका कर्तव्य है।

नेतृत्व लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किसी समूह को प्रभावित करने की योग्यता है। यह सब नेताओं और प्रबंधकों पर निर्भर है कि वे संगठन को अपने प्रयोजन प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करें। तथापि नेतृत्व का प्राथमिक कार्य, संगठनात्मक विकास की अवस्था के अनुसार भी परिवर्तित होता है। यह प्रारंभिक नेतृत्व से ही परिवर्तित होता है जो नए संगठन की उपयोगिता से लेकर दानदाताओं और समुदाय तथा नेतृत्व तक प्रदर्शित करने पर केंद्रित है। यह नेतृत्व अत्यधिक परिपक्व होता है जिसमें मुख्य रूप से कार्यों के स्तर का विस्तारनिधियों का संकलन, संगठनात्मक प्रक्रियाओं और संपर्क आदि सम्मिलित होते हैं।

4.3 संगठनात्मक परिवेश

वैश्वीकरण के शुरू होने से, कार्य संस्कृति और संगठनात्मक परिवेश में असंख्य बदलाव हुए हैं। अब कर्मचारी विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आते है और उनके कई प्रकार के व्यक्तित्व मूल्य और वरीयताएँ होती हैं। समाज कार्य का प्रतिमान भी, कल्याण से सशक्तिकरण रूझान की ओर परिवर्तित हो गया। लाभार्थी अब ज्यादा निष्क्रिय प्राप्तकर्ता नहीं है अपितु अपने कर्ता हैं। सेवा आबंटन का परिप्रेक्ष्य और प्रक्रिया भी महत्वपूर्ण तरीके से परिवर्तित हो गई है। सेवा प्रदाता भी, जेंडर, वंश, जातीयतायौन रूझान और अन्य कारकों के सम्बन्ध में अधिक विजातीय होते जा रहे हैं। इसी प्रकार, कार्यबल विविधताजैसे धार्मिक और जातीय अल्पसंख्यक, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/अन्य पिछड़ा वर्ग, विकलांग व्यक्ति, विस्थापित लोग, महिला-पुरूष मुद्दे आयु सम्बन्धी कारक, अस्थायी/अनियमित

संविदाएं आदि किसी दूसरे व्यवसाय की कार्य संस्कृति की तुलना में समाज कार्य में कार्य संस्कृति परकाफीप्रभाव डालते हैं।आइए, कुछ जटिल मुद्दों पर नजर डालें जिनकी आपको, प्रेरित करने वाली कार्य संस्कृति उत्पन्न करने में निवारण करने के लिए जरूरत पड़ेगी।

नौकरी से वापसी

भारत में समाज कल्याण प्रणाली पर स्वैच्छिक क्षेत्र का वर्चस्व है अर्थात यह विभिन्न सकारात्मक पक्षों की पहचान तदर्थता, क्षेत्रीय असंतुलन, सामाजिक डार्विनवाद से भी होती है जहाँ कार्यक्रम आवश्यकता-संचालित न होकर, निधि-संचालित होते हैं। समाज कल्याण व्यावसायिक, नौकरियों के लिए कल्याण प्रशासन में, वरीयता का इस्तेमाल नहीं करते और मनोविज्ञान/समाजशास्त्र और दूसरे सामाजिक विज्ञान पृष्ठभूमि से संबन्धित उम्मीदवारों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। कम वेतन, असुरक्षा और तदर्थ/अस्थायी परियोजना-आधारित कार्यों के कारण प्राय: कार्य-असंतोष होता है तथा इस प्रकार सृजनात्मक नवीन विचारों आदि के कार्यान्वयन के लिए ज्यादास्वायत्ता नहीं मिलती।

सामाजिक डार्विनवाद

सामान्य बोलचाल में, संगठनों और सहकर्मियों के बीच गलाकाट प्रतियोगिता को सामाजिक डार्विनवाद कहा जाता है जिसमें टीम कार्य, समन्वय और सहयोग की गुंजाइश कम होती है। स्थूल स्तर पर निधियन की प्रणाली, प्रतियोगिता और सहयोग तथा संघर्ष स्थितियों का भी संवर्धन करती है जो स्वैच्छिक क्षेत्रों में पैदा होती हैं। संगठन के भीतर अहम-संघर्ष, विभिन्न व्यक्तित्व कारक, अनौपचारिक समूह संबंद्धता, कार्य करने की अनेक शैलियाँ ये सभी परस्पर-निर्भरता और टीम कार्य तथा सेवा वितरण को भी बाधित करने का प्रयत्न करते हैं।

वैयक्तिक-व्यावसायिक हित

कार्यस्थल पर औपचारिक और अनौपचारिक अंत:क्रियाओं के दौरान,कार्यकर्ता अपने सहकर्मियों के बारे में रूचियाँ और अरूचियाँ विकसित करने का प्रयत्न करतें हैं। इसके अलावा, आधुनिक समय में, समाज कार्यकर्ताओं के निजी जीवन में बढ़ते हुए संघर्ष, तनाव और तनावपूर्ण स्थितियाँ उनके व्यावसायिक स्वार्थ में बाधा उत्पन्न कर सकती है। इन सबके कारण, व्यक्ति को सहानुभूतिपूर्ण, परानुभूतिपूर्ण होने तथा अपने उन तनावों, पीड़ाओं और निराशाओं से स्वतंत्र होने की जरूरत है जो हर समय सही नहीं होती।

सकारात्मक सम्बन्ध

हम निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि सकारात्मक व्यवसायिक सम्बन्धों को प्रेरित करने के लिए सकारात्मक परिवेश, परस्पर सम्मान, विश्वास और परस्पर-निर्भरता से उत्पन्न होता है, जो समाज कल्याण प्रशासन के लिए बहुत महत्वपूर्ण है जिससे कि इसके लक्ष्य प्राप्त किए जा सकें। यह पूर्ण उद्यम की सफलता में योगदान प्रस्तुत करता है। जो व्यक्ति एक-दूसरे के साथ सही तरीके से संबन्धित होते हैं, वे कार्य-निष्पादन के उच्च मानदंड की प्राप्ति चाहते हैं। विश्वसनीयता,जिम्मेदारी निजी विकास के लिए स्पष्ट ठोस दर्शन, संप्रेषण के श्रेष्ठ माध्यम, सकारात्मक परिदृश्य सुनिश्चित करते हैं। सकारात्मक परिदृश्य तब उत्पन्न होता है

जब संस्था की प्रक्रियाएं और नीतियाँ स्पष्ट होती हैं। सकारात्मक परिदृश्य का तब भी सृजन होगा जब लोग साथ-साथ कार्य करते हैं।

सामाजिक कार्यकर्ता जो प्रबंधकों/प्रशासकों के पद पर हैं, इस प्रकार की सकारात्मक कार्य संस्कृति उत्पन्न करने की उनकी भूमिका और उत्तरदायित्व है।

सांत्वना देना अथवा मदद करना

कल्याण प्रशासन के क्षेत्र में कर्मचारी का व्यवहार अत्यंत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इसे सांत्वना अथवा मदद की जरूरत पड़ती है जिससे कि सेवार्थी की समस्याओं, संकटों, दुखों और निराशाओं पर शांत प्रभाव पड़े। सेवा प्रदाता की ओर से मानव सम्बन्ध और सहानुभूति में कमी, समाज के वंचित वर्गों के कल्याण और हित के लिए बने कार्यक्रमों के प्रयोजन को हतोत्साहित कर सकते हैं। दूसरे, जब स्टाफ और स्वयंसेवक एकजुट होकर कर कार्य करते हैं तब यह संभावना प्रतीत होती है कि संस्थाअपने लक्ष्यों को प्राप्त कर लेगी तथा सेवार्थियों और सेवा प्रदाताओं को एक अच्छा अनुभव प्राप्त होगा, लगन और विश्वास के साथ एकजुट होकर कार्य करने से प्रयत्न सार्थक होंगे। बड़े आकार वाले संगठनों के लिए नौकरशाही की विशेषताएं जरूरी हो सकती हैं परन्तु, यह महत्वपूर्ण है कि लचीलापन न होना, नियमों और प्रक्रियाओं में लालफीताशाही आदि पर अधिक जोर देने से बचा जाएजिससे कि सेवा वितरण में मानवीय दृष्टिकोण और देखरेख करने वाला दृष्टिकोण बनाए रखा जा सके।

स्टाफ का **मनोबल और अभिप्रेरण** बनाए रखना, नियमित प्रशिक्षण, कैरियर विकास के लिए अवसर की समानता, लोकतांत्रिक निर्णयन प्रक्रियाएं और अंतरसंगठनात्मक संप्रेषण, सकारात्मक कार्य संस्कृति प्राप्ति के लिए जरूरी हैं।

अगला महत्वपूर्ण कार्य संगठन के भीतर समन्वय होता है। किसी संगठन के कार्य वातावरण का आकलन उस सम्बन्ध और समन्वय से किया जा सकता है जो एजेंसी के अनेक विभागों के मध्य स्टाफ सदस्यों के बीच और स्टाफ तथा प्रबंध के मध्यउपलब्ध होता है। अन्य पक्षसहभागी निर्णयन है। इसी प्रकार सभी कर्मचारियों के पास निर्णयन में योगदान करने के लिए समान अवसर मिलना चाहिए जिससे प्रतिबद्धता की पर्याप्त भावना और ज़िम्मेदारी की संयुक्त भावना उत्पन्न हो, इससे सृजनात्मकता का अनुकूल वातावरण भी उत्पन्न होता है।

संगठनात्मक परिवेश सुधारने के लिए श्रेष्ठ प्रबंधन व्यवहार बहुत जरूरी हैं। कुछ महत्वपूर्ण प्रबंधन व्यवहारों में, सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति संवृद्धि के अवसरों का पता लगाना और समस्याओं का निवारण, संघर्ष से निपटना, संसाधनों का समान बंटवारा, प्राथमिकताएं निर्धारित करना, कार्य आबंटित करना, सामाजिक निदान, भविष्य के लिए अनुमान और विकल्पों की व्यवस्था और चयन तथा कार्य विभाजन की व्यवस्था और विभाजन शामिल हैं। इसके अलावा, तथ्यों पर आधारित वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सेवाओं की नवीनता और संशोधन, परिणामों का मूल्यांकन और सुधार करना, सार्वजनिक निधि का किफायती और बुद्धिमत्तापूर्वक इस्तेमाल सुनिश्चित करना तथा लाभार्थियों के जीवन-स्तर में

सुधार करना भी सम्मिलित है। समाज कार्य की पद्धतियों, विधियों और कौशलों का इस्तेमाल, संगठन की प्रभावकारिता को सुधारने के लिए प्रबंधन व्यवहार के हर स्तर पर अत्यंत आवश्यक है। प्रभावी प्रबंधकों के दस कौशलों का बार-बार सर्वाधिकविवरण दिया जाता है, वे हैं-मौखिक संप्रेषण, समय और तनाव का प्रबंधन करना, समस्याओं की पहचान करना, परिभाषित करना और उनका समाधान करना, अभिप्रेरण करना और दूसरों को प्रभावित करना, प्रत्यायोजन करना, लक्ष्य निर्धारित करना और दृष्टि स्पष्ट करना, स्वजागरूकता, टीम-निर्माण और संघर्ष नियंत्रण करना।

संगठनात्मक परिवेश के कुछ पक्ष व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण, बेहतर कार्य-निष्पादन, पुरस्कार, टीम भावना ईमानदारी, व्यक्तिगत मतभेदों पर खुलापन, विकास प्रेरित करना, नए विचारों और पद्धतियों का इस्तेमाल, जोखिम उठाना और व्यक्तिगत व्यवहार को नियंत्रित करने की स्वायत्ता हैं। प्रबंधकीय मूल्यों में, स्वायत्ता, समानता, सुरक्षा और अवसर शामिल हैं।

अधिकार, सेवाओं के प्रभावी तथा दक्ष आबंटन का निर्धारण बहुत सीमा तक उच्चअभिप्रेरण, स्टाफ की प्रतिबद्धता और संगठनात्मक लक्ष्यों के साथ उनकी पहचान से किया जाता है। प्रबंधकों को, संगठन के स्टाफ के मध्य सामूहिक भावनाओं और सहयोग को विकसित करना चाहिए परिवेश को, संगठन की पूर्ण प्रगति, सतत मानव सम्बन्धों और स्टाफ विकास कार्यक्रमों की आवश्यकता पड़ती है। इसके अलावा, प्रभावी पर्यवेक्षण भी जरूरी होता है। कर्मियों को अपनी कार्य स्थितियों में चुनौतियाँ स्वीकार करने, दूसरों की सेवा करने, धन कमाने, प्रतिष्ठा और परिस्थिति का इस्तेमाल करने के लिए अवसर की जरूरत पड़ती हैऔर वे इस प्रकार सृजनात्मक और स्वायत्त हो सकते हैं। पहल करने का व्यवहार, कार्यकलाप और इस्तेमालों का उच्च स्तर उत्पन्न करता है। नियोक्ता और कर्मचारी के सुखद और शांतिपूर्ण सम्बन्ध, बेहतर लाभार्थ सम्बन्ध प्रदान कर सकते हैं जो सफल संगठनात्मक परिवेश के लिए बहुत जरूरी हैं।

4.4 संप्रेषण और सामाजिक विपणन

संप्रेषण किसी संस्था में एक सर्वाधिक आवश्यक तत्व होता है। प्रभावी प्रशासन के सभी पक्षों के लिए दक्ष संप्रेषण अनिवार्य है। स्टाफ को योजनाओं, पद्धतियों, अनुसूचियों, समस्याओं, घटनाओं और प्रगति के बारे में पर्याप्त और उपयुक्त तरीके से जानकारी दी जानी चाहिए। यह आवश्यक है कि निर्देशों, ज्ञान और सूचना का इस्तेमाल करने के लिए इन्हें सभी को बताया जाना चाहिए, जिससे कि किसी भी प्रकार की गलत व्याख्या और भ्रम न हो। उपयुक्त और पर्याप्त संप्रेषण मात्र एक दिशा में नहीं होता, यह द्विमार्गी होता है। सम्प्रेषण नीचे से ऊपर की ओर तथा ऊपर से नीचे की ओर क्रियान्वित होना चाहिए।

संस्था में, संप्रेषण के अनेक प्रकार होते हैं और प्रत्येक संप्रेषण के अपने लाभ और हानियाँ होती हैं। संप्रेषण को संप्रेषित और प्राप्त करने की विधियाँ है - मौखिक, लिखित (यथा- पत्र, ज्ञापन, कार्यसूची, मैनुअल, हैंडबुक, समाचारपत्र, पत्रिकाएं आदि) और अन्य संप्रेषण (बोले गए शब्दों का संयोजन और

मीडिया का इस्तेमाल जैसे पोस्टर, लिप चार्ट, पावर प्वाइंट प्रस्तुतिकरण आदि)। संगठन में, संप्रेषण को आयामों के तीन समूहों में श्रेणीबद्ध किया जाता है-

- अधोगामी संप्रेषण अर्थात वरिष्ठों से अधीनस्थों की ओर संप्रेषण जो योजनाओं, कार्यक्रमों, प्रक्रियाओं, नियमों से संबन्धित होता है और जो आदेश, सुझाव, सलाह, सूचना, विवरण, स्पष्टीकरण प्राप्ति के रूप में हो सकता है।
- उर्ध्वगामी संप्रेषण अर्थात् यह अधीनस्थोंसे वरिष्ठों की ओर होता है तथा यह सूचना, प्रतिपुष्टि प्रदान करने, संदेहों को स्पष्ट करने इत्यादि के रूप में हो सकता है।
- क्षैतिज अथवा पार्श्व संप्रेषण जिसका अभिप्राय विभागों के मध्य अथवा समान पदों में सहकर्मियों के मध्य संप्रेषण से है।

इसके अलावा, संप्रेषण की पंक्ति की संरचनाएं औपचारिक हो सकती हैं(इस प्रकार का संप्रेषण संगठन द्वारा निर्धारित लाइनों के साथ-साथ होता है) और अनौपचारिक हो सकती है (इसे जनप्रवाद भी कहते हैं जो अंतक्रिया की योजनाबद्ध लाइनों के साथ-साथ नहीं होता है) ये सभी अधोगामी, ऊर्ध्वाधर और क्षैतिज संप्रेषण जो संगठन प्रदान करता है और जो संगठनात्मक प्रयोजनों को प्राप्त करने के लिए होते हैं औपचारिक संप्रेषण कहलाते हैं।

सामाजिक विपणन व्यवसायिक विपणन से प्राप्त संकल्पनाओं का इस्तेमाल करते हुए सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए तैयार किए गए कार्यक्रमों का नियोजन और कार्यान्वयन है। एन्ड्रीसन (1995) ने सामाजिक विपणन की परिभाषा लक्ष्य समूह के स्वैच्छिक व्यवहार को प्रभावित करने के लिए तैयार किए गए कार्यक्रमों के विश्लेषण, नियोजन, निष्पादन और मूल्याँकन के लिए व्यवसायिक विपणन प्रौद्योगिकियों के अनुप्रयोग के रूप में की है जिससे कि उनके वैयक्तिक कल्याण और उनके समाज के कल्याण में सकारात्मक परिवर्तन किया जा सके।

सामाजिक विपणन के सिद्धांतों को पांच‘P’से निरूपित किया सकता है–

- **उत्पाद (Product)-** व्यवसायिक विपणन में जहाँ उत्पादन एक मूर्त मद है, वहीं सामाजिक विपणन में, उत्पाद वह व्यवहार अथवा विचार है जिसे प्रचार योजनाकार चाहेंगे कि लक्षित उपभोक्ता इसे अपनाएं। उत्पाद एक क्रिया (जैसे बालकों का प्रतिरक्षण करना) अथवा सामग्री मद (जैसे कंडोम) के रूप में सकता है।
- **कीमत (Price)-** इसमें उत्पाद को ‘क्रय करने’ से जुड़ी लागतें सम्मिलित होती हैं जो आर्थिक लागत के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक लागत (यथा- सुरक्षित यौन संबंध के लिए कंडोम खरीदने में लज्जा आदि) और सामाजिक लागत का कुल जोड़ होता है।

- **स्थान (Place)-** इसमें वितरण माध्यम सम्मिलित हैं जिनका इस्तेमाल लक्ष्य समूहों को उत्पाद मुहैया कराने के लिए किया जाता है। जब कोई उत्पाद भौतिक मद अंश होता है, इसे उपभोक्ता को सरलता से उपलब्ध होना चाहिए (जैसे पान की दुकानों पर कंडोम उपलब्ध होना)।
- **संवर्धन (Promotion)-** इसमें वे प्रयास शामिल हैं जो यह सुनिश्चित करने के लिए किए गए हैं कि लक्ष्य समूह को अभियान की जानकारी है। इन प्रचार के प्रयत्नों को उस उत्पाद के बारे में सकारात्मक अभिवृत्तियों और प्रयोजनों को संवर्धन करने के लिए किया जाना चाहिए जो व्यवहार-परिवर्तन का मार्ग मजबूत कर सके।
- **स्थिति-निर्धारण (Positioning)-** इसका अभिप्राय है, उत्पाद की स्थिति को इस प्रकार निर्धारित करना आवश्यक है जिससे कि लाभ को अधिकतम किया जा सके और लागतों को न्यूनतम किया जा सके। स्थिति-निर्धारण, मनोवैज्ञानिक रचना है जो उत्पाद की अवस्थिति को शामिल करता है जो उन अन्य उत्पादों और कार्यकलापों के लिए प्रासंगिक होती हैं जिसके साथ यह प्रतिस्पर्धा करता है। उदाहरणस्वरूप, कंडोम के इस्तेमाल करने से मन में शांति आएगी और यौन संरचित रोगों/एच आई.वी. और गर्भधारणा से स्वतंत्रता मिलेगी जबकि कंडोम का इस्तेमाल न करने से सामाजिक और मनोवैज्ञानिक समस्याओं के साथ विभिन्न स्वास्थ्य सम्बन्धी दुष्परिणाम उत्पन्न होंगे।

4.5 जनसंपर्क

जनसंपर्क समाज कल्याण प्रशासन का एक महत्वपूर्ण कार्य है जो हिस्सेदारों के साथ मैत्रीपूर्ण तथा सौहादपूर्ण है। यह संगठन और जनता के मध्य सूचना के संचालन का प्रबंधन करने का कार्य है। जनसंपर्क कार्यकलापों का प्रयोजन उन नागरिकों के लिए लाभ सुनिश्चित करना है जिनके लिए नीतियाँ और सुविधाएं प्रदान की जाती हैं। "द इंस्टीट्यूट आफ पब्लिक रिलेशंस' यू.एस.ए., ने जनसंपर्क को, संगठन और इसके लक्ष्य समूह के मध्य परस्पर समझ बूझ स्थापित करने और बनाए रखने के लिए विवेकपूर्ण नियोजित और सतत प्रयत्न के रूप में परिभाषित किया है। इसी प्रकार, एडवर्ड एल. बर्नेज ने जनसंपर्क की परिभाषा किसी कार्यकलाप, कारण,संचालन अथवा संस्था के लिए सार्वजनिक समर्थन जुटाने के लिए सूचना, अनुनय-विनय और सामंजस्य द्वारा प्रयत्न के रूप में प्रस्तुत की है। जनसंपर्क और प्रचार पर्यायवाची नहीं हैं परन्तुविभिन्न जनसंपर्क अभियानों में प्रचार के लिए व्यवस्थाएं भी सम्मिलित हैं। प्रचार किसी उत्पाद, व्यक्ति, सेवा, कारण अथवा संगठन के लिए जन-जागरूकता प्रदान करने के लिए सूचना का फैलाव करना है और इसे प्रभावी जनसंपर्क नियोजन के परिणाम के रूप में परिलक्षित किया जा सकता है।

जनसंपर्क की प्रक्रिया को सही जानकारी के लिए सात अवस्थाओं में सूचीबद्ध कियाजा सकता है–

- पहली अवस्था में, प्रसारित की जानेवाली सूचना अथवा संदेश की पहचान करना और उल्लेख करना सम्मिलित है।
- जनसंपर्क प्रक्रिया की दूसरी अवस्था, लक्ष्य समूह अथवा आम जनता में मुद्दों के बारे में वर्तमान छवि अथवा जागरूकता स्तर का पता लगाना।
- तीसरी अवस्था, संप्रेषण के प्रयोजनों और प्राथमिकताओं को विकसित करना है।
- जनसंपर्क की चौथी अवस्था, संदेश विकसित करने और संचरण के लिए नहटर माध्यम के चुनाव से संबन्धित है।
- जनसंपर्क की पांचवी अवस्था, चौथी अवस्था में तैयार किए गए संप्रेषण अभियान का कार्यान्वयन और समन्वय तथा संदेश का फैलाव है।
- छठी अवस्था में, संप्रेषण अभियान की जांच-पड़ताल की जाती है कि क्या संदेश सही प्रकार से पहुंचा है अथवा नहीं।
- अप्रभावकारिता के कारणों की पहचान करने के बाद यदि संदेश सही तरीके से नहीं पहुंचता है, तो जनसंपर्क की सातवीं अवस्था में संशोधित संचार अभियान सम्मिलित है, इसके बाद संशोधित संदेश का प्रसार होता है।

4.6 निधि उगाहना

निधि उगाहना, धन, अथवा दूसरे उपहारों के लिए अनुरोध करना और इन्हें इकट्ठा करने की प्रक्रिया है। यह सब व्यक्तियों, व्यवसायों, धर्मार्थ प्रतिष्ठानों अथवा सरकारी संस्थाओं से दान प्राप्ति के आधार पर होता है। यद्यपि, निधि उगाहना खासकर गैर-लाभ संगठनों के लिए निधियाँ संग्रह करने के प्रयत्न से संबन्धित है फिर भी कभी-कभी इसका इस्तेमाल निवेशकों अथवा लाभकारी उद्यमों के लिए पूंजी के अन्य स्रोतों की पहचान और अनुरोध से जुड़ा है। निधियों के सामान्य स्रोत हैं- स्थानीय अंतर्राष्ट्रीय दान प्रदाता और सरकार। अब परिदृश्य परिवर्तित हो रहा है और अंतर्राष्ट्रीय गैर-सरकारी संगठन भी निधि उगाहने के लिए इंतजार कर रहे हैं जैसे प्लान इंटरनेशनल ने स्थानीय स्रोतों से 30 प्रतिशत निधि उगाहने का लक्ष्य रखा है। समान्यतः प्राकृतिक मानव-निर्मित आपदाओं जैसे सुनामी, कारगिल युद्ध के समय संगठन, निधि उगाहने के कार्य में स्वयं लग जाते हैं।

निधि-उगाहना आरंभ करने से पहले, संगठनों को अपने कर की स्थिति की जांच-पड़ताल कर लेनी चाहिए। इस सम्बन्ध में दो प्रमुख उपबंध हैं- कर अधिनियम की धारा 80 जी और धारा 35A©। विशिष्ट क्षेत्रों (जिन्हें धर्मार्थ माना जाता है) में काम करने वाले गैर-सरकारी संगठन इस धारा के अंतर्गत आयकर प्राधिकारी के पास पंजीकरण करा सकते हैं जो दानदाताओं को(चाहे वे व्यक्ति हों अथवा कंपनी हो।)

दान की गई राशि का 50 प्रतिशत तक छूट का दावा करने का अधिकार देता है। धारा 35 ए© बिल्कुल नवीन है जो दान पर 100 प्रतिशत छूट देती है। यह पंजीकृत संगठनों पर लागू होता है बजाय विशिष्ट परियोजनाओं के। राष्ट्रीय सामाजिक और आर्थिक कल्याण संवर्धन सम्बन्धी समिति, दिल्ली से अनुमति लेनी पड़ती है और सामान्य तौर पर गैर-सरकारी संगठनों को 3 वर्ष के लिए परियोजनाएं लेनी पड़ती हैं। निधि उगाही में दूसरा महत्वपूर्ण मुद्दा नैतिक रूप से ठोस निधि उगाही नीति विकसित करना है। सामाजिक रूप से अनुपयुक्त कार्यकलापों का उल्लेख करना मुश्किल है और दागी स्रोतों से कोई निधि स्वीकार नहीं करना चाहिए, जिससे संगठन की छवि और विश्वसनीयता पर अंकुश लगे।

संभावित दानी दान क्यों देते हैं–

- वे समस्या के बारे में चिंतित हो सकते हैं।
- उनके पास समस्या का निजी अनुभव हो सकता है।
- साथियों का दबाव
- दोष महसूस करना
- ड्यूटी
- नाम/प्रसिद्धि
- कर लाभ

सफल निधि उगाही अभियान के लिए, व्यक्ति को संभावित लोगों की पहचान करने, सही संदेश तैयार करने और उस संदेश को संप्रेषित करने की आवश्यकता होती है। दूसरा मुद्दा है कि कितनी निधि की मांग की जाए। यह सब स्थिति पर आश्रित होता है। संकट की स्थितियों में, जैसे भूकंप, बाढ़ आदि में नकद राशि और वस्तुओं में दान की मांग की जाती है। लोगों को उदारतापूर्वक दान करने के लिए कहना उन्हें मुश्किल में डाल देता है। इसके बजाए, यदि लोगों को अनेक विकल्प प्रदान किए जाएं तो वे बेहतर प्रतिक्रिया प्रस्तुत करते हैं।

4.7 सामाजिक लेखा-परीक्षा

सामाजिक लेखा-परीक्षा भारत में तुलनात्मक रूप से खासकर विकास क्षेत्र में एक नवीन विषय है, यह समुदाय के लोगों को सशक्त करने का साधन है और विकास तथा संबन्धित कार्यों में पदधारकों की जवाबदेही की मांग करता है। सामाजिक लेखा-परीक्षा एक प्रक्रिया है, जिसमें समुदाय द्वारा किसी परियोजना, क्षेत्र में किए जा रहे विकास कार्य अथवा कार्यक्रम के लाभ-हानी का जनता में मुक्त रूप से अवलोकन किया जाता है। सामाजिक लेखा-परीक्षा की मान्यता है कि जहाँ तक सम्भव हो सभी संबन्धित लोगों की सहमति तथा समझ-बूझ से लोकतांत्रिक स्थानीय प्रशासन किया जाना चाहिए।

सामाजिक लेखा-परीक्षा संगठन की सामाजिक और नैतिक कार्य क्षमता का मापन करने, समझने, रिपोर्ट करने और सुधारने का ढंग है। यह दृष्टिकोण और वास्तविकता के मध्य अंतरालों को कम करता है। यह लेखा-परीक्षा हिस्सेदारों की आवाज को महत्व देता है जिनमें वंचित/गरीब समूह सम्मिलित हैं जिनकी आवाज मुश्किल से सुनी जाती है तथा स्थानीय शासन के प्रयोजनों से खासकर स्थानीय निकायों में जवाबदेही और पारदर्शिता मजबूत करने के लिए इसका इस्तेमाल किया जाता हैं। सामाजिक लेखा-परीक्षा सहभागी स्थानीय नियोजन पर समुदाय को प्रशिक्षित करता है और लोकतंत्र तथा सामुदायिक भागीदारी को प्रेरित करता है। यह सामूहिक निर्णयन का विकास करता है और मानव संसाधन व सामाजिक पूँजी विकसित करता है।

सामाजिक लेखा-परीक्षा के लिए सबसे अधिक उपयुक्त संस्थानिक स्तर ग्राम सभा है जिसे पंचायत के चुने गए प्रतिनिधियों और सहकारी कार्यकर्ताओं का पर्यवेक्षण और निगराणी करने के लिए पंचायती राज अधिनियमों द्वारा, निगरानी की शक्तियाँ और जिम्मेदारी दिए गए हैं। इसके अलावा, ग्राम सभा, वार्षिक लेखा-विवरण और लेखा-परीक्षा रिपोर्टों की भी जांच-पड़ताल करती है। ये अंतर्निहित शक्तियाँ हैं जो ग्राम सभा को अन्य कार्यों के अलावा, सामाजिक लेखा-परीक्षा के लिए अप्रत्यक्ष रूप से अधिकार प्रदान करती हैं। ग्राम सभा के पास जांच करने के लिए बजट आवंटनों, लाभार्थियों की सूची प्रत्येक योजना के अंतर्गत मदद, नामावली, बिलों, वाउचरों, खातों आदि से संबन्धित सभी सार्वजनिक प्रलेखों का निरीक्षण करने, वार्षिक लेख-विवरणों और लेखा-परीक्षा रिपोर्टों की जांच करने, पिछले वर्ष के स्थानीय प्रशासन अथवा कार्यक्रम की कोई नई गतिविधि की समीक्षा करने का अधिकार प्रदान किया गया है। इसके अलावा, स्थापित नियमों का उल्लंघन करने के दोषी पाए गए कर्मियों की जवाबदेही निर्धारित करने,संबन्धित स्थानीय विकास परियोजनाओं की पहचान करने, नियोजन करने, कार्यान्वयन करने, निगरानी करने और मूल्यांकन करने में पारदर्शिता का संवर्धन करने का निवारणप्रस्तुत करने तथा सामाजिक लेखा-परीक्षा की बैठकों में भाग लेते समय ग्रामीण गरीबों के लिए उनके मुद्दों को उठाने के लिए अवसर सुनिश्चित करने का भी अधिकार प्राप्त है। सामाजिक लेखा-परीक्षा में एक अन्य शक्तिशाली अस्त्र, सूचना का अधिकार अधिनियम है जो सूचना प्राप्त करने और दंड प्रदान करने अथवा गलत सूचना भेजने/देने के ढंगों का वर्णन करता है।

सामाजिक लेखा-परीक्षा की प्रक्रिया को निम्न चरणों में बांटा जा सकता है–

1. लेखा-परीक्षा की जानेवाली परियोजना के संभावित उद्देश्यों का वर्णन करना।
2. हिस्सेदारों की पहचान करना और उनकी विशिष्ट भूमिकाओं और कार्यों पर ध्यान देना।
3. उन कार्य-निष्पादन संकेतकों को परिभाषित करना जिन्हें सामाजिक लेखा-परीक्षा की प्रक्रिया में भागीदारज्यादातर सदस्यों द्वारा इसे समझा और स्वीकार किया जाता हो।
4. कार्य-निष्पादन संकेतकों पर सूचना की समीक्षा और परिचर्चा करने के लिए नियमित बैठक करना।

5. सामाजिक लेखा-परीक्षा की बैठक की अनुवर्ती कार्रवाई करना तथा हिस्सेदारों की कार्रवाइयों की समीक्षा करना तथा हिस्सेदारों के सुझाव के अनुसार भावी कार्रवाई पर सहमति देना।
6. विश्वसनीय स्थानीय लोगों का समूह स्थापित करना जो प्रतिबद्ध और मुक्त हो और यह देखना कि सामाजिक लेखा-परीक्षा पर आधारित निर्णयों का कार्यान्वयन हो गया है।

4.8 संघर्ष समाधान और थकान से निपटना

समाज कल्याण प्रशासक को संघर्ष निवारण को समझने की आवश्यकता है। कार्य स्थल पर विभिन्न ऐसी स्थितियाँ हो सकती हैं जिनसे सह कर्मियों के बीच तर्क और असहमतियाँ व्याप्त हो सकती हैं। इनमें कुछ संघर्ष को अपेक्षाकृत पहचानना आसान है परन्तु जरूरी नहीं है कि इसका निवारण सरल हो। यह व्यक्तियों के मध्य संघर्ष अथवा लोगों के संगठित समूहों के मध्य बहस से देखा जा सकता है। संघर्ष विभिन्न ढंगों से अभिव्यक्त हो सकता है जिसमें क्रोध में चिल्लाना, दूसरे व्यक्ति को विपरीत बातें कहना, अथवा सभी परस्पर सम्बन्धों को नाराज होकर तोड़ देना सम्मिलित हैं। संघर्ष, विभागों, संस्थाओं, संगठनों, समूहोंऔर व्यक्तियों में व्याप्त हो सकता है। प्रबंधको को रचनात्मक संघर्ष प्रेरित करने की आवश्यकता है जो नए समाधान, नई सेवाएं और सामाजिक स्थिति की नई जानकारी प्रस्तुत कर सके। विविध व्यक्तित्व, विचार, मूल्य, कार्य शैली और नियंत्रणकारी प्रतिमान से कार्यस्थल पर संघर्ष उत्पन्न होता है।

प्रशासक को आरंभिक अवस्था से ही संघर्ष को समझना चाहिए और इसका निवारण करने के लिए उपाय प्रस्तुत करने चाहिए। संघर्ष निवारण, संघर्ष का अंतिम निवारण करने का परिचायक है। समाज कार्य पद्धतियों, विधियों और कौशलों का इस्तेमाल करके किसी समस्या, तर्क अथवा कठिन कार्य का निवारण करने के विभिन्न ढंग हैं। संघर्ष के कारणों का पता लगाना, यदि कोई उपलब्ध मामला है तो, उसके बारे में भ्रांतियों की पहचान करना, सांस्कृतिक अथवा मूल्य संबन्धितमामले, व्यक्तित्व संघर्ष और परिवर्तन के प्रतिरोध का संघर्ष अगला चरण होगा। इसके बाद, अनेक वैकल्पिक निवारणों का अनुमान लगाया जाना चाहिए और सर्वाधिक उचित निवारण पर सहमति होनी चाहिए। सहमति में बातचीत, सौदेबाजी और समझौता सम्मिलित हो सकता है। बातचीत, एकमत के माध्यम से, संघर्ष निवारण की सामान्य पद्धति है। समझौता, संघर्ष निवारण की अन्य विधि है जिसमें तीसरे पक्षकार सामान्य तौर पर समझौता अधिकारी की मौजूदगी में निपटारा किया जाता है। मध्यस्थता संघर्ष निवारण की एक दूसरी विधि है जिसमें मध्यस्थ का निर्णय दोनों पक्षों के लिए बाध्यतामूलक होता है।

थकान से आश्रय

थकान से निपटना आवश्यक है और कुछ सुझाए गए ढंग निम्न उल्लेखित किए गए हैं–

i. सामाजिक कार्यकर्ता को परिवर्तित होते हुए सामाजिक परिवेश की जागरूकता और लोगों पर इसके प्रभाव का वास्तविक मूल्यांकन करना चाहिए, जिसमें उनका अपना मूल्यांकन भी सम्मिलित है।

ii. सीखने और आगे बढ़ने के लिए हर चुनौती को अवसर के रूप में देखने की जरूरत होती है।

iii. अपनी रूचि के क्षेत्र में कार्य करना जिसके बारे में वे अधिक सीखने के लिए प्रोत्साहित होते हैं, थकान दूर करने का उचित समाधान है।

iv. समय प्रबंधन और तनाव प्रबंधन आज के कार्य परिवेश में काफी जरूरी हैं।

v. मानव सेवा की मूल्य पद्धति के अनुरूप, निजी मूल्य पद्धति का होना और उसे बनाए रखना जरूरी है चाहे इसके सिद्धांत स्वीकृत सामाजिक मूल्यों के विपरीत ही हों।

vi. व्यवसायिक और निजी जीवन को अलग रखना जरूरी है।

4.9 सारांश

इस इकाई में आपने कल्याणकारी प्रशासन में सेवा वितरण को प्रभावित करने वाले विभिन्न मामलों के बारे में अध्ययन किया। नौकरशाही, कठोरता और लालफीताशाही लाती है जबकि नेतृत्व शैलियों के अपने पक्ष-विपक्ष हैं। प्राधिकार और शक्ति एक-दूसरे के प्रति, सहकर्मियों के व्यवहारों पर प्रभाव डालते हैं और इनका सेवा वितरण पर पूरा प्रभाव होता है। कार्य संस्कृति और संगठनात्मक परिवेश गतिशील संकल्पनाएँ हैं और विभिन्न चर इन्हें प्रभावित करते हैं जैसे कार्यबल की विविधता, समाज कार्य व्यवसाय का स्वरूप, तेज प्रतिस्पर्धात्मक जीवन, तनाव, सहकर्मियों के साथ औपचारिक और अनौपचारिक कैरियर प्रगति, कार्यालय राजनीति, प्रतियोगिता, टीम कार्य और सहयोग आदि।संप्रेषण को संगठन की प्राण-शक्ति के रूप में माना जाता है। इसके अलावा, संप्रेषण के अनेक प्रकारों और उनके प्रभाव पर भी चर्चा की गई है। हमने सामाजिक विपणन की संकपलना और सिद्धांतों के बारे में समझ विकसित की। जनसंपर्क को प्रबंधन का एक आवश्यक कार्य बताया गया है। आपने निधि उगाहने की अनेक कार्यनीतियों के बारे में भी जानकारी हासिल किया। सामाजिक लेखा-परीक्षा, पारदर्शिता बनाए रखने के लिए आवश्यक होता है। संघर्ष हमारे कार्यस्थल की अपरिहार्य विशेषता है और इसे सफलतापूर्वक सुलझाना एक दक्ष कार्यकलाप है, जिसका आपने इस इकाई में ज्ञान अर्जित किया। इस प्रकार, थकान सेवा वितरण पर गंभीर रूप से प्रभाव डालती है और समाज कार्य व्यवसाय का ढांचा थकान की स्थितियों को बार-बार उत्पन्न कर सकता है। आपने इस इकाई में थकान के निवारण के ढंगों का भी अध्ययन किया।

4.10 बोध प्रश्न

प्रश्न 1: प्रबंधन के संघटकों को स्पष्ट कीजिये।

प्रश्न 2: संगठनात्मक परिवेश पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 3: जनसम्पर्क की भूमिका को स्पष्ट कीजिये।

प्रश्न 4: टिप्पणी कीजिये-

1- सम्प्रेषण और सामाजिक विपणन
2- निधि उगाहना
3- सामाजिक लेखा-परीक्षा
4- संघर्ष समाधान
5- थकान से निपटारा

4.11 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

- गोयल, एस.एल. एवं जैन, आर.के. (1988), *सोशल वैल्फेयर एडमिनिस्ट्रेशन : थ्योरी एंड प्रेक्टिस* (खंड 1 और 2), नई दिल्ली, दीप एंड दीप पब्लिकेशंस ।
- स्किडमोर, आर.ए. (1974): *सोशल वर्क एडमिनिस्ट्रेशन; डायनेमिक मैनेजमेंट एंड ह्ययूमेन रिलेशनशिप्स* : पीयर्सन एजुकेशन।
- कोटलर, पी. (1999): *सोशल मार्केटिंग, इंप्रूविंग दि क्वलिटी आफ लाइफ*, दिल्ली सेज पब्लिकेशंस।
- पट्टी, आर.जे. (2000): *दि हैंडबुक आफ सोशल वैल्फेयर मैनेजमेंट*, सेज पब्लिकेशंस।
- जेबिलन, एफ.एम., पुटनम, एल.एल. राबट् र्स, के.एच. एवं पोर्टर, एल.डब्ल्यू. (एडीशन) *: हैंडबुक आफ आर्गेनाईजेशनल कम्यूनिकेशन : इंटरडिसीपलीनरी पर्सपेक्टिस*, न्यूबरी पार्क, सी.ए. सेज।

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 5

सामाजिक नीति और समाज कल्याण प्रशासन

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 सामाजिक नीति और समाज कल्याण प्रशासन
5.3 स्वास्थ्य नीति और कार्यक्रम
5.4 शिक्षा नीति और कार्यक्रम
5.5 समाज कल्याण : नीतियाँ और कार्यक्रम
5.6 सारांश
5.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप –

- सामाजिक नीति के अभिप्राय और संकल्पना को स्पष्ट कर सकेंगे।
- महत्वपूर्ण कल्याणकारी मुद्दों और संबद्ध कार्यक्रमों तथा सेवाओं के सम्बन्ध में सामाजिक नीतियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- सामाजिक नीति को अनेक कार्यक्रमों में क्रियान्वित करने के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान करेगी, यथा- स्वास्थ्य, शिक्षा।
- सामाजिक नियोजन, नीति-निर्माण और सामाजिक नीतियों के प्रशासन के संबंध की व्याख्या कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

भारत में निर्मित और निष्पादित,भारत का संविधान,सर्वाधिक सामाजिक नीतियों का स्रोत है। भारत सरकार स्वयं अप्रत्यक्ष रूप से कल्याणकारी राज्य के लिए आशक्त है। कल्याणकारी राज्य के रूप में अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए सरकार ने समाज के वंचित और कमजोर वर्गों के कल्याण के लिए विभिन्न नीतियाँ और कार्य योजनाएं बनाई हैं। सामाजिक नीति, जीवन की दशाओं को परिवर्तित करने, उन्हें सुरक्षित रखने और सृजित करने के लिए मार्गदर्शी नियमों से जुड़ी है जो मानव कल्याण के

लिए अनुकूल होती है। सामाजिक नीति का प्रयोजन मानव कल्याण में सुधार करना तथा शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास और सामाजिक सुरक्षा के लिए मानव जरूरतों को पूरा करना है। सामाजिक नीति के निर्माण का तब तक कोई अभिप्राय नहीं होगा जब तक इसे तत्काल और प्रभावी तरीके से लागू नहीं किया जाता।

5.2 सामाजिक नीति और समाज कल्याण प्रशासन

'नीति' शब्द के सर्वाधिक सामान्य, सामाजिक और राजनीतिक इस्तेमाल से अभिप्राय कार्रवाई अथवा लक्षित कार्रवाई से है जिसे खोजे गए अथवा खोजे जाने वाले संभावित विकल्पों की समीक्षा के बाद तार्किक तरीके से अंगीकृत किया गया समझा जाता है। पहले यह समझा गया कि नीति-निर्माण अथवा नीति-निर्धारण प्रशासन की तुलना में उच्च क्रम कार्यकलाप है और सामाजिक योजनाकारों ने सिफारिश की है कि नीति-निर्धारण को प्रशासन अथवा नीति-निष्पादन से बिल्कुल पृथक होना चाहिए। विल्सन ने दावा किया है कि प्रशासन न केवल नीति निर्धारकों से नीचे थे अपितु वे सम्भवतया मूल्य-तटस्थ और कुशलभी थे। निष्पादन के सम्बन्ध में, अधिकारी तंत्र सामान्य रूप से वे साधन हैं जो लोक नीति लागू करते हैं। नौकरशाही उन नीतियों के लिए जरूरी है जिन्हें कुछ पूर्वानुमान, समता और उचित प्रक्रिया के साथ लागू किया जाना चाहिए। फिर भी, नौकरशाही के नकारात्मक अर्थ (उयथा- लालफीतशाही, कठोरता, नियमों और विनियमों आदि पर ज्यादा बल देना) लोकनीति की क्षमता में सार्वजनिक विश्वास लौटाने पर विपरीत प्रभाव डाल सकते हैं।

इस समय, प्रशासन का अभिप्राय नीति निर्माण है। प्रशासन की भूमिका, नीति के निष्पादन तक सीमित नहीं है क्योंकि प्रशासन नई नीतियों के निर्माण में अत्यधिक सक्रिय भाग ले रहे हैं और पुरानी नीतियों की समीक्षा तथा उनमें बदलाव कर रहे हैं। प्रशासन भविष्य के लिए नीति-निर्माण करने में अन्य तरीके से भी भाग लेते हैं। वे विधान के लिए सिफारिशें तैयार करते हैं और यह नीति-निर्धारण का एक भाग होता है। आधुनिक समय में, नीति और प्रशासन के मध्य सम्बन्ध इतना ज्यादा अस्पष्ट हो गया है कि यह कहना कठिन है कि कहाँ नीति समाप्त होती है और प्रशासन कहाँ शुरू होता है अथवा प्रशासन कहाँ समाप्त होता है अथवा कहाँ नीति शुरू होती है।

नीति आधार स्तर पर, कार्यक्रम नियोजन और निष्पादन के लिए, दिशा प्रस्तुत करती है। अत: सामाजिक नीति निर्माण किसी भी सामाजिक प्रशासन प्रणाली के सफल कार्यान्वयन के लिए आवश्यक है। जब तक सामाजिक प्रशासन की मदद पर्याप्त सामाजिक विधान की प्रणाली और ठोस सामाजिक नीति द्वारा नहीं की जाती तब तक इसका ठीक प्रयोजन प्राप्त नहीं किया जा सकता। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सामाजिक नीति के बिना सफल सामाजिक प्रशासन नहीं हो सकता है। इसके अलावा, सही तरीके से बनाई गई नीति तब तक अनुपयोगी है जब तक इसका प्रभावपूर्ण तरीकेसे कार्यान्वयन नहीं किया जाता। इस प्रकार प्रशासन को प्रभावित करने वाले कारक नीति निष्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन करते हैं। लोकनीति के सफल कार्यान्वयन पर संगठनात्मक दक्षता का सीधा और ठोस प्रभाव पड़ता है।

सामाजिक नीति, सामाजिक नियोजन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसका अवधारणात्मक रूप से स्पष्ट और सरल, सैद्धांतिक रूप से ठोस और लक्ष्य समूहों में प्राप्त किए गए इष्टतम बदलावों के संदर्भ में वर्णन होना चाहिए। भूमिकाओं के स्पष्ट उल्लेख और सभी हिस्सेदारो की जिम्मेदारियों, स्पष्ट निर्देशों और संगठनात्मक संरचनाओं वाली नीति अपने निर्धारित लक्ष्यों को प्रभावी तरीके से पूरा करती रहेगी। सामाजिक नीति, उस विशेष कार्य के लिए सरकार की वचनबद्धता प्रस्तुत करती है जिसके लिए नीति का निर्माण किया गया है। इसमें सरकार की वरीयताएँ और संसाधन वितरण शामिल होते हैं। इस प्रकार तकनीकी और बजट सम्बन्धी साधनों के साथ-साथ नीति में समय सीमा का भी वर्णन होना चाहिए। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, राष्ट्रीय शिक्षा नीति, भारत में महिला सशक्तिकरण सम्बन्धी नीति, विकलांग व्यक्तियों के लिए विकलांग नीति, राष्ट्रीय युवा नीति, राष्ट्रीय बाल नीति इत्यादि कुछ उदाहरण हैं।

5.3 स्वास्थ्य नीति और कार्यक्रम

सरकार ने वर्ष 1983 में अपनी राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति निर्मित की है, जिसमें विकेन्द्रीकृत और समेकित तरीके से परामर्शतंत्र सहित विस्तृत प्राथमिक स्वास्थ्य देखरेख सेवाओं, विशेषज्ञता तथा अति विशेषज्ञता सुविधाओं समेत एक सही व्यापक तंत्र स्थापित करने के बारे में बात की है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, 1983 में, विस्तृत प्राथमिक देखरेख सेवाओं के सार्वभौम उपबंध के माध्यम से वर्ष 2000 तक सभी के लिए स्वास्थ्य प्रदान करने की व्यवस्था की गई थी, जिसे हम कई कारणों से प्राप्त नहीं कर सके। वर्ष 2002 में, अन्य राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति निर्मित की गई जिसमें क्षमता के वास्तविक विचारों के आधार पर देश के नागरिकों को स्वास्थ्य सेवाओं कीविस्तृत उपलब्धता को अधिक से अधिक बनाने पर जोर दिया गया है। मौजूदा नीति में विकेन्द्रीकृत स्तर पर और अधिक जन स्वास्थ्य संस्थान स्थापित करने का प्रयास किया गया है। वर्ष 2002 के लिए दर्शाई गई जनसंख्या के अनुसार, अनुमान है कि एस.सी./पी.एच.सी./सी.एच.सी. की संख्या में 16 प्रतिशत की कमी है जो सी.एच.सी. के मसले में मात्र 58 प्रतिशत है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति,2002 में कई राज्यों के मध्य अंतराल का पता लगाने के साथ-साथ, ग्रामीण-शहरी विभाजन में भी अंतराल को मालूम किया गया है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों को पर्याप्त लचीलेपन के साथ तैयार किया जाता है जिससे कि राज्य जन स्वास्थ्य प्रशासनों को अपनी जरूरतों के अनुसार अपने-अपने कार्यक्रमों को समन्वित करने की अनुमति प्रदान की जा सके। इसके अलावा, राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम का कार्यान्वयन राज्य सरकारों के विकेंद्रीकृत स्वास्थ्य तंत्र की सहायता से किया जा सकता है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, 2002 में भारतीय चिकित्सा पद्धति और होम्योपैथी में अधिकतम चिकित्सकों का इस्तेमाल करने की संभावना का पता लगाया गया है, जिन्होंने राज्य अथवा केंद्रीय जन स्वास्थ्य कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में अपने विषयों में औपचारिक लिया है जिससे कि देश में बुनियादी स्वास्थ्य देखरेख पहुँचने में संवर्धन किया जा सके। पंचायती राज संस्थानों के विभिन्न स्तर, स्वास्थ्य क्षेत्र में

कार्यक्रम और निधियों में संलिप्त हैं। राष्ट्रीय स्वास्थ्य 2002 में भी मेडिकल और डेंटल कालेजों के भौगोलित विस्तार में और इन संस्थाओं में शिक्षा के असमान स्तर में असमानताओं को दूर करने के लिए पहलों की सिफ़ारिश की गई है। इसमें शहरी क्षेत्रों में उपलब्ध असमान सुविधाओं परजोर दिया गया है जो मलिन बस्तियों और अनियोजित आवासों में रहने वाले समुदायों को नुकसान पहुँचा रहे हैं। वैश्वीकरण के शुरू होने में तैयार सामान्य औषधियों और टीकों की उपलब्धता पर इसके प्रभाव के कारण, इस नीति में देश की भावी स्वास्थ्य सुरक्षा को सुनिश्चित करनेका सुझाव प्रस्तुत किया गयाहै।
सूचना, शिक्षा और संचार, निवारक और रोगहर स्वास्थ्य देखरेख के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए काफी महत्वपूर्ण हैं। यह क्षयरोग (टी.बी), कुष्ठ मोतियाबिंद अंधता कार्यक्रमों के लिए रोगहर मार्गदर्शी सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार करने और एच.आई.वी./एड्स तथा अन्य जीवनशैली के रोगों का निवारण करने के लिए विशेषरूप से महत्वपूर्ण हैं। यह नीति,सूचना,शिक्षा, संचार कार्यनिति को प्रदर्शन करते समय, देश में उच्च निरक्षता दर जैसी समस्याओं पर जोर देती है। नीति में विद्यालय और कालेजों के विद्यार्थियों के लिए लक्ष्य रखने का प्रयत्न किया गया है जिससे कि 'स्वास्थ्य संवर्धन' के व्यवहार के सामान्य स्तर में सुधार किया जा सके।

प्रशासनिक पहलू

स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय नॉडल संस्था है जो अनेक राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों का नियोजन करती है। भारत में स्वास्थ्य सुरक्षा पद्धति में, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों और जिला अस्पतालों का एक बहुत बड़ा ढांचा फैला हुआ है। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (2005-12) सरकार का एक अत्यंत महत्वपूर्ण अभियान है, जिसमें पूरे देश में ग्रामीण जनसंख्या को प्रभावपूर्ण स्वास्थ्य देखरेख प्रदान करने की आशा की गई है और उन 18 राज्यों पर विशेष जोर दिया गया है, जिनमें कमजोर जन स्वास्थ्य संकेतक और/अथवा कमजोर स्वास्थ्य बुनियादी स्वरूप है। यह मिशन सरकार की प्रतिबद्धता की अभिव्यक्ति है, जिससे कि स्वास्थ्य पद्धति में सुधार किए जा सके और उन नीतियों का संवर्धन किया जा सके जो देश में जन स्वास्थ्य प्रबंधन एवं सेवा वितरण को सुदृढ़ताप्रदान करती हैं। इसका एक मुख्य तत्व, प्रत्येक गाँव में एक महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की व्यवस्था सुनिश्चित करना है, पंचायत की स्वास्थ्य और स्वच्छता समितीकी अध्यक्षता में एक स्थानीय टीम के माध्यम से एक ग्राम स्वास्थ्य योजना तैयार करना है, प्रभावी रोगहर देखभाल के लिए ग्रामीण अस्पताल मजबूत करना और ऊर्ध्वाधर स्वास्थ्य कल्याण कार्यक्रमों और निधियों तथा बुनियादी स्वरूप के अभीष्टतम इस्तेमाल के लिए नीतियों का एकीकरण करना, एवं प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के वितरण को मजबूत करना है।
इसका प्रयोजन जिला स्वास्थ्य योजना के माध्यम से सफाई और स्वच्छता पोषण और सुरक्षित पेयजल जैसे स्वास्थ्य निर्धारण के साथ निर्धारण के साथ सरोकारों का प्रभावपूर्ण एकीकरण करना है। इसमें स्वास्थ्य के जिला प्रबंधक के कार्यक्रमों के विकेन्द्रिकरण की आशा आपेक्षित की जाती है। यह अंतर्राज्यीय और अंतर-जिला असमानताओं खासकर18 उच्च लक्षित राज्यों के असमानताओं को दूर

करने काप्रयत्न करता है, जिसमें जन-स्वास्थ्य मूलस्वरूप की आपूर्ति आवश्यकताएं भी सम्मिलित हैं। इसमें समयबद्ध लक्ष्यों को स्पष्ट किया गया है और उनकी प्रगति पर सार्वजनिक रूप से रिपोर्ट तैयार की जाती है। इसमें ग्रामीण लोगों, खासकर महिलाओं और बच्चों को समान सस्ती जवाबदेह और प्रभावी प्राथमिक देखरेख तक पहुँच में सुधार करने का प्रयत्न किया गया है।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य प्रबंधन (NRHM) के लक्ष्य निम्न उल्लेखित किए गए हैं–

- शिशु मृत्युदर और मातृ मृत्युदर अनुपात में कमी।
- जन स्वास्थ्य सेवाओं तक सार्वभौम पहुँच जैसेमहिला स्वास्थ्य, बाल स्वास्थ्य, जल, सफाई एवं स्वच्छता, प्रतिरक्षण और पोषण।
- स्थानीय रोगों समेत संचारी और असंचारी रोगों का निवारण औरउन पर नियंत्रण।
- व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य देखरेख तक समेकित पहुँच।
- जनसंख्या का स्थितिकरण, लिंग और जनसांख्यिकीय संतुलन स्थानीय स्वास्थ्य परम्पराओं और मुख्य धारा आयूष को पुनर्जीवित करना स्वस्थ जीवन शैलियों का संवर्द्धन।

प्रमुख राष्ट्र स्वास्थ्य कार्यक्रम हैं–

- राष्ट्रीय जल जनित रोग नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय फाइलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय कुष्ठ निवारण कार्यक्रम
- संशोधित राष्ट्रीय क्षय रोग नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय अंधता नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय आयोडीन न्यूनता विकास नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम
- राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय कैंसर नियंत्रण कार्यक्रम
- सार्वभौम प्रतिरक्षीकरण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय बधिरता रोकथाम और नियंत्रण कार्यक्रम
- मधुमेय, सी. वी. डी. एवं आघात रोकथाम एवं नियंत्रण प्रायोगिक कार्यक्रम
- राष्ट्रीय तम्बाकू नियंत्रण कार्यक्रम

ज्ञान शांति मैत्री

5.4 शिक्षा नीति और कार्यक्रम

भारत का संविधान एक ऐसा इकलौता दस्तावेज है जो शिक्षा समेत सभी क्षेत्रों में राज्य की नीति का मार्गदर्शन करता है। संविधान में निहित उपबंधों का विवरण जिसमें शिक्षा के बारे में नीचे वर्णन प्रस्तुत किया गया है–

- 14 वर्ष की आयु तक के सभी बालकों को नि:शुल्क व अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था।
- सामान्य तौर पर शिक्षा संघ और राज्यों की समवर्ती जिम्मेदारी।
- स्थानीय प्राधिकरणों (पंचायतों और नगर पालिकाओं) को संबन्धित राज्य विधानों के माध्यम से शिक्षा में उपयुक्त भूमिका प्रदान की जाय।
- राज्य सरकारों और स्थानीय प्राधिकरणों से यह आशा की जाती है कि वे प्राथमिक शिक्षा स्तर पर मातृभाषा में शिक्षण के लिए सुविधाएं प्रस्तुत करें।
-

राष्ट्रीय शिक्षा नीति

राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर अब तक प्रमुख रूप से दो विस्तृत फ़लक के वक्तत्व रहे हैं अर्थात 1968 का और 1986 का वक्तव्य और बाद में इस नीति की समीक्षा की गई और संशोधन 1992 में किया गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रयोजन, राष्ट्रीय प्रगति का संवर्धन करना है, जिससे कि हमारे संविधान में वर्णित समाजवाद, धर्म-निरिपेक्षता और लोकतंत्र के लक्ष्यों को प्रेरित किया जा सके, साझी नागरिकता और संस्कृति की भावना उत्पन्न की जा सकें तथा शिक्षा पद्धति के मूलभूत पुनर्निर्माण की जरूरत पर जोर देते हुए राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ की जा सके। सभी स्तरों पर शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने और विज्ञान व प्रौद्योगिकी, नैतिक मूल्यों, शिक्षा तथा लोगों के मध्य निकट सम्बन्धों को प्रेरित किया जाना चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति असमाताएं दूर करने उन लोगों की विशिष्ट जरूरतों का ध्यान देकर सामान रूप से शैक्षिक अवसर प्रदान करने परजोर देती है जिन्हें अब तक समानता से वंचित रखा गया है। नीति, जन-साक्षरता अभियानों,उत्तर-साक्षरता और सतत् शिक्षा के व्यापक कार्यक्रमों नियोक्ताओं के माध्यम से श्रमिकों की शिक्षा, पुस्तकों, पुस्तकालयों, पठन कक्षों के व्यापक संवर्धन और सूचना, शिक्षा तथा संचार तथा दूर शिक्षा के इस्तेमाल के माध्यम से प्रौढ़ शिक्षा पर जोर देती है।

राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति को आकार देने में जो संस्थान महत्वपूर्ण भूमिका वहन करने के लिए सुदृढ़ किये जाएंगे, वे हैं- विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC), अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (AICTE), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) और भारतीय चिकित्सा परिषद (IMC)। इन निकायों के मध्य समेकित नियोजन स्थापित किया जाएगा जिससे कि कार्यात्मक संपर्क स्थापित किए जा सके और अनुसंधान तथा स्नातकोत्तर शिक्षा के कार्यक्रम नियोजित किए जा सकें। ये, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT), राष्ट्रीय शैक्षिक योजना और प्रशासन संस्थान (NIEPA),

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (NCTE) और राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा संस्थान (NIAE) के साथ शैक्षिक नीति का कार्यान्वयन करने में सम्मिलित होंगी। वर्ष 1985 में स्थापित मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत के नागरिकों को शैक्षिक अवसर देने के लिए जिम्मेदार है। इसके दो विभाग हैं-विद्यालय शिक्षा और साक्षरता विभाग तथा उच्च शिक्षा विभाग। विद्यालय शिक्षा और साक्षरता विभाग के अंतर्गत प्रमुख कार्यक्रम निम्न हैं–

सर्वशिक्षा अभियान

विद्यालय पद्धति के सामुदायिक स्वामित्व द्वारा आरंभिक शिक्षा के सार्वभौम करने का प्रयत्न है। यह पूरे देश में बेहतर बुनियादी शिक्षा को प्रदान करने का एक प्रयत्न है। सर्वशिक्षा अभियान का लक्ष्य, वर्ष 2010 तक 6 से 14 वर्ष की आयु समूह के सभी बालकों के लिए उपयोगी और प्रासंगिक आरंभिक शिक्षा मुहैया कराना है। विद्यालयों के प्रबंध में समुदाय की सक्रिय सहभागिता के साथ सामाजिक, क्षेत्रीय और लिंग अंतरालों की खाई को भरने का दूसरा लक्ष्यभी है। इसका लक्ष्य बालकों को, उनके प्राकृतिक पर्यावरण के बारे में इस तरीके से जानने और निपुणता प्राप्त करने देना है जिससे कि वे अपनी मानवीय क्षमता को आध्यात्मिक और भौतिक रूप से पूरी तरह इस्तेमाल कर पाएं। सर्वशिक्षा अभियान ने कार्यान्वयन के लिए एक ऐसा स्वरूप प्रदान किया है, जो राज्यों को समूचे स्वरूप के अंतर्गत संदर्भ से संबन्धित विशिष्ट मार्गदर्शी सिद्धांत तैयार करने की अनुमति देता है, इससे स्थानीय विशिष्टता प्रदर्शित करने और जरूरत आधारित योजना का संवर्धन करने के लिए राज्यों में जिलों और संघ राज्य क्षेत्रों को प्रेरित किया जाता है। सर्वशिक्षा अभियान की व्यापक कार्यनीतियों में, सांस्थानिक सुधार, सतत वित्तीयन समुदाय आधारित निरीक्षण और पूरी पारदर्शिता के साथ सामुदायिक स्वामित्व, राष्ट्रीय, राज्य और जिला संस्थाएं जैसे एन.आई.पी.ए./एन.सी.ई.आर.टी/एन.सी.ई.टी/एस.आई.ई.एम.ए.टी./डी.आई.ई.टी. के लिए सांस्थानिक क्षमता निर्माण सम्मिलित हैं। यह बालिकाओं को वरीयता देता है और शैक्षिक प्रक्रिया में विशेष समूहों (अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति, के बालकों, अल्पसंख्यक समूहों, शहरी वंचित बालकों, वंचित समूहों और विशेष जरूरत वाले बालकों) पर विशेष जोर देता है।

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना

यह परियोजना बालिकाओं, खासकर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग और अल्पसंख्यक वर्गों से सम्बन्ध रखने वाली बालिकाओं के लिए उच्चतर प्राथमिक स्तर पर आवासीय विद्यालय स्थापित करने के लिए अगस्त, 2004 में भारत सरकार द्वारा शुरू की गई थी। यह योजना शैक्षिक रूप से, उन पिछड़े ब्लॉकों में 2004 में इसकी स्थापना से ही कार्यान्वित थी जहाँ ग्रामीण महिला साक्षरता राष्ट्रीय औसत (46.13 प्रतिशत, जनगणना, 2001) से नीचे है और साक्षरता में लिंग अंतराल राष्ट्रीय औसत (21.59 प्रतिशत, जनगणना 2001) से ज्यादा है। प्राथमिक विद्यालय के बालकों के लिए राष्ट्रीय पोषण सहायता कार्यक्रम जिसे मध्याह्न भोजन योजना कहा जाता है, निम्न आर्थिक स्तर के बालकों,खासकर उन बालिकाओं की स्वास्थ्य स्थिति सुधारने के लिए शुरू किया गया था, जो बिना

भोजन किए रह जाती हैं अथवा जिन्हें कम भोजन मिलता है। जिला शैक्षिक और प्रशिक्षण संस्थान एक दूसरी योजना है जिसे अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए 1988 में शुरू किया गया था।

महिला समानता कार्यक्रम

यह 'महिलाओं की समानता के लिए शिक्षा' है, जो 1988-89 में शुरू किया गया था और इसमें 10 राज्यों में 10,000 से भी अधिक गाँव सम्मिलित किए गए हैं। महिला संघों के माध्यम से यह महिलाओं को उनके सशक्तिकरण के लिए एक मार्ग के रूप में शिक्षा को इस्तेमाल करने में कुशल बनाता है। जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, जिला स्तर पर बालकों के लिए शिक्षा प्रदान करता है। यह महिला-पुरूष प्रशिक्षण पर जोर देता है और इसने ग्राम शिक्षण समितियों (मातृ अध्यापिका प्रेरक समूह) की स्थापना की हैं। उच्च शिक्षा विभाग के अंतर्गत, विभिन्न योजनाएं, विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा तथा तकनीकी शिक्षा से संबन्धित हैं।

5.5 समाज कल्याण- नीतियाँ और कार्यक्रम

भारत में समाज कल्याण पर ऐसी कोई विस्तृत नीति नहीं है जिसमें समाज के कई वंचित वर्गों जैसे अनुसूचित जातियाँ, निस्सहाय, गलियों में घूमने वाले बालक, वृद्ध, विकलांग आदि को प्रभावित करने वाले विभिन्न मुद्दे सम्मिलित हों। तथापि, अधिकतर ये मुद्दे सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के अन्तर्गत धारण किए जाते हैं। नीतियों, कार्यक्रमों, विधि और भारतीय कल्याण प्रणाली की स्थापना का मूल प्रयोजन लक्ष्य समूहों को विकास की मुख्यधारा में लाना है जिससे कि वे आत्मनिर्भर बन सकें। सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के अंतर्गत आने वालेप्रमुख मसले निम्न हैं–

अनुसूचित जाति विकास

यह अनुसूचित जातियों के सर्वांगीण विकास तथा उन्हें राष्ट्रीय जीवन की मुख्यधारा में लाने के लिए जिम्मेदार है और देश के सामाजिक-आर्थिक विकास में उनकी पूर्ण सहभागिता के लिए भी उत्तरदाई है। इसने अनुसूचित जाति समुदाय के लोगों के लिएअनेक योजनाएं शुरू की हैं।

कुछ मुख्य परियोजनाए हैं-

- बाबू जगजीवनराम छात्रावास योजना
- अनुसूचित जातियों के विद्यार्थियों के लिए उच्चस्तर शिक्षा की केंद्रीय क्षेत्र छात्रवृत्ति योजना
- हाथ से सफाई करनेवाले लोगों के पुनर्वास के लिए स्वरोजगार योजना
- उच्च शिक्षा में कार्यक्रमों, यथा- एम.फिल और पी-एच.डी. करने के लिए अनुसूचित जातियों के विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदान करने के लिए 'राजीव गांधी छात्रवृत्ति' की केन्द्रीय क्षेत्र योजना
- अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति विद्यार्थियों के लिए उत्तर-मैट्रिक छात्रवृत्ति
- अस्वच्छ व्यवसायों में लगे लोगों के बालकों के लिए पूर्व मैट्रिक छात्रवृत्ति

- अनुसूचित जाति के अभ्यर्थियों के लिए राष्ट्रीय विदेश (समुद्रपार) छात्रवृत्ति की केन्द्रित क्षेत्र योजना
- निम्न साक्षरता स्तरों से संबन्धित अनुसूचित जाति की बालिकाओं के लिए विशेष शिक्षा विकास कार्यक्रम

इसके अलावा, अनुसूचित जाति/जनजाति के विद्यार्थियों के लिए पुस्तक बैंक, अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की योग्यता का उन्नयन, अनूसूचित जाति और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए निशुल्क कोचिंग, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम(NSCFDC), अनुसूचित जातियों के अखिल भारतीय स्वरूप की परियोजनाओं को मददप्रदान करना।

पिछड़े वर्गों का विकास

पिछड़े वर्गों वे जातियाँ अथवा समुदाय हैं जिन्हें राज्य सरकारों द्वारा सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ा वर्ग के रुप में अधिसूचित किया जाता है अथवा वे है जिन्हें समय-समय पर केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचित किया जाता है। पिछड़े वर्गों के कार्य की देखभाल, गृह मंत्रालय में पिछड़ा वर्ग प्रकोष्ठ द्वारा की जाती थी जो बाद में नए सृजित किए गए कल्याण मंत्रालय में चला गया जिसे अब सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय की संज्ञा दी जाती है। मंत्रालय में पिछड़ा वर्ग प्रभाग, अन्य पिछड़ा वर्ग के सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण से संबन्धित कार्यक्रमों की नीति, नियोजन और कार्यान्वयन पर ध्यान देना है। यह उन दो संस्थाओं के मसलों को भी देखता है जो कि अन्य पिछड़ा वर्ग की भलाई के लिए स्थापित की गई है- राष्ट्रीय अन्य पिछड़ा वर्ग, वित्त एवं विकास निगम (NSCFDC, जिसका अर्थ पिछड़ा वर्गों के लाभ के लिए आर्थिक और विकास अर्थ-कलापों का संवर्द्धन करना और कौशल विकास तथा स्वरोजगार कार्यों में इन श्रेणियों के गरीब वर्गों की मदद करना है) और राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग है, NCBC राष्ट्रिय पिछड़ा आयोग अधिनियम 1993 सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर बनाया गया जिससे कि भारत सरकार के अन्तर्गत सिविल पदों और सेवाओं में आरक्षण करने के उद्देश्य के लिए अन्य पिछड़ा वर्ग के नागरिकों को केन्द्रित सूची में सम्मिलित करने के अनुरोधों और शिकायतों पर विचार करने, जाँच करने और सिफारिश करने के लिए एक स्थानीय निकाय स्थापित किया जा सकें।

अन्य पिछड़ा वर्गों के लिए प्रमुख कार्यक्रम निम्न हैं–

- अन्य पिछड़ा वर्ग के विद्यार्थियों के लिए पूर्व मैट्रिक छात्रवृत्तियाँ हैं (गरीबी रेखा से नीचे परिवारों के विद्यार्थियों के लिए)
- अन्य पिछड़ा वर्ग के विद्यार्थियों के लिए उत्तर-मैट्रिक छात्रवृत्ति
- अन्य पिछड़ा वर्ग के बालकों और बालिकाओं के लिए छात्रावास (स्थापित छात्रावासों में से कम से कम एक-तिहाई विशेषरूप से बालिकाओं के लिए होंगे और इनमें कुल स्थानों में 5 प्रतिशत विकलांग विद्यार्थियों के लिए आरक्षित होंगे)

- अन्य पिछड़ा वर्गों के कल्याण के लिए स्वैच्छिक संगठनों को मदद देना।

विकलांगताओं से ग्रस्तव्यक्ति

राष्ट्रीय नीति के अनुसार विकलांग देश के लिए मूल्यवान मानव संसाधन हैं और यह ऐसा परिवेश सृजित करने का प्रयत्न करती है जो विकलांगों को समान अवसर, उनके अधिकारों का संरक्षण और समाज में पूरी हिस्सेदारी प्रदान करती है। नीति के प्रमुख तव निम्न हैं–

- विकलांगताओं का निवारण(जागरूकता और शीघ्र पहचान शिविर) और पुनर्वास समाधानों (भौतिक, शैक्षिक, व्यवसायिक आर्थिक पुनर्वास) पर विशेष ध्यान
- डी.डी.आर.सी. और राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के प्रत्याधिक सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता (आशा)
- उपर्युक्त संसाधनों और उनके कार्य के माध्यम से जागरूकता
- शीघ्र पहचान और मध्यस्थता परामर्श और चिकित्सा पुनर्वास
- उपयुक्त और आधुनिक साधनों और यंत्रों पर फोकस

इसके अलावा, इस नीति में, आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं, सहायक नर्स मिडवाइफ, गैर-सरकारी संगठनों के कार्यक्रमों को प्रशिक्षण देकर तथा अध्यापकों, पंचायत सदस्यों और समुदाय के लोगों में जागरूकता का सृजन करके पुनर्वास व्यवसायिकों के बारे में वर्णन किया है। सर्वशिक्षा अभियान और विकलांग व्यक्ति समेकित शिक्षा योजना में विकलांग व्यक्तियों की शिक्षा पर जोर दिया गया है। इसके अलावा शैक्षिक संस्थाओं में 3 प्रतिशत आरक्षण और सरकारी संस्थाओं और सार्वजनिक क्षेत्र के उपग्रमों में रोजगार उपलब्ध किया गया है।

भारत सरकार ने विकलांग व्यक्तियों के लिए तीन कानून बनाए हैं–

- विकलांगता से ग्रस्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण और पूर्व सहभागिता) अधिनियम, 1995 जो शिक्षा, रोजगार बाधा स्वतंत्र वातावरण का सृजन, सामाजिक सुरक्षा आदि उपलब्ध करता हैं।
- आत्मविमोह से ग्रस्त प्रमस्तिष्क आघात, मानसिक मंदता और बहु विकलांगता अधिनिमय 1999 में चार श्रेणियों के कानूनी संरक्षण और अधिक से अधिक दक्ष बनाने वाले परिवेश के लिए उपबंध हैं।
- भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम 1992 पुनर्वास सेवाएं उपलब्ध करने के लिए जनशक्ति के विकास से संबन्धित है।

इसके अलावा, निम्न संस्थाओं के रूप में व्यापक बुनियादी संरचना कोंविकसित किया गया है–

- शारीरिक रूप से विकलांग व्यक्ति संस्थान, नई दिल्ली।

- राष्ट्रीय दृष्टि बाधित विकलांग व्यक्ति, संस्थान, देहरादून विकलांग व्यक्ति राष्ट्रीय संस्थान कोलकता।
- मानसिक विकलांग व्यक्ति राष्ट्रीय संस्थान, सिकंदाराबाद।
- राष्ट्रीय श्रवण विकलांग व्यक्ति संस्थान, मुंबई।
- राष्ट्रीय पुनर्वास प्रशिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान कटक।
- राष्ट्रीय बहुविकलांगताग्रस्त व्यक्ति सशक्तिकरण संस्थान चैन्नई।

पाँच संयुक्त पुनर्वास केन्द्र, चार क्षेत्रीय पुनर्वास केन्द्र और 120 जिला विकलांगता पुनर्वास केन्द्र (डी.डी.आर.सी) हैं जो अनेक प्रकार की पुनर्वास सेवाएं प्रस्तुत करते हैं। स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के अन्तर्गत विभिन्न अन्य संस्थाएं है–

- राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य और तांत्रिक विज्ञान संस्थान, बैंगलौर
- अखिल भारतीय भौतिक चिकित्सा और पुनर्वास संस्थान, मुंबई
- अखिल भारतीय वाक् एवं श्रवण संस्थान, मैसूर
- केन्द्रीय मनोचिकित्सा संस्थान, रांची

सामाजिक सुरक्षा

मंत्रालय का सामाजिक रक्षा ब्यूरो, उपेक्षित और वंचित लोगों, निसहायों, उपेक्षितों और अपराधी किशोरों की जरूरत पूरा करता हैं, जिन्हें मदद के अभाव में देखरेख और संरक्षण की आवश्यकता है अथवा वे लोग जो समाज और कानून से लड़ते हैं, मादक पदार्थ व्यसनी तथा अपराधी, वृद्ध और दूसरों पर आश्रित जिन्हें विशेष देखरेख सरंक्षण और मदद की जरूरत होती है। किशोर अपराधियों की देखरेख और पुनर्वासके लिए दी जाने वाली सेवाओं हेतु किशोरन्याय अधिनियम को पढ़ा जाना चाहिए। इसी प्रकार बालिकाओं पर नीति के साथ-साथ महिला सशक्तिकरण के लिए नीतियों को भी दूसरी बातों के साथ-साथ पढ़ा जाना चाहिए, जिनकी बालिकाओं और महिलाओं के लिए देखरेख और संरक्षा की आवश्यकता पड़ती है। ब्यूरो की योजनाओं और नीतियों कालक्ष्य सम्मान और आदर के जीवन को निरंतर बनाए रखने के लिए और उपयोगी नागरिक बनने के लिए इस समूह को सशक्त करना है। इस प्रक्रिया में ब्यूरो एक उत्प्रेरककी भूमिका वहन करता है और इसने स्वैच्छिक क्रिया को प्रेरित किया है। राज्य सरकारें, स्वायत्त निकाय, गैर-सरकारी संगठन और कॉरपोरेट विश्व भी नीतियाँ बनाने और उन्हें नियोजित करने में संलिप्त है।

वृद्धों की देखभाल

वृद्धों की बढ़ती असुरक्षा को देखते हुए सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय ने जनवरी 1991 में पूरी तरह वृद्धों के कल्याण को सुनिश्चित करने के लिए वृद्ध व्यक्तियों सम्बन्धी राष्ट्रीय नीति का निर्माण किया। यह गरीब और निस्सहाय वृद्ध व्यक्तियों, संगठित क्षेत्रों में लोगों की आय/बचत पर बेहतर प्रतिलाभ, कौशल उन्नयन, स्व-रोजगार, निरंतर रोजगार और आय सृजन के माध्यम से वित्तीय सुरक्षा प्रदान करता है। वृद्ध व्यक्तियों सम्बन्धी राष्ट्रीय नीति, जन स्वास्थ्य प्रणाली को सुदृढ़ करने और उसे प्राथमिक स्तर से तृतियक स्तरों तक ले जाने तथा स्वास्थ्य बीमा को कार्यान्वित करके वृद्धों की स्वास्थ्य की स्वास्थ्य सम्बन्धीजरूरतों की पूर्ति करती है। इसकी मान्यता है कि राज्य को, वृद्ध व्यक्तियों को अपराधों से बचाने के लिए सुरक्षा जाल को मजबूत करना है और पुलिस को भी मैत्रीपूर्ण निगरानी रखने की जरूरत है। वृद्ध व्यक्तियों सम्बन्धी राष्ट्रीय नीति,कई हिस्सेदारों जैसे मीडिया, समुदाय के लोगों और समुदाय के लोगों और मुख्य रूप से परिवार से सकारात्मक भूमिकाओं की अपेक्षा का वर्णन करती है। यह बुढ़ापे की देखरेख में मानव संसाधन के प्रशिक्षण पर जोर देती है। राष्ट्रीय नीति की घोषणा के अनुकरण में, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय की अध्यक्षता में, वृद्ध व्यक्तियों के लिए नीति और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन पर, सरकार को सलाह देने और मदद करने तथा सरकार को प्रतिपुष्टि देने के लिए राष्ट्रीय वृद्ध व्यक्ति परिषद (एन.सी.ओ.पी.) को स्थापित किया गया। एन.सी.ओ.पी. की एक अंतर-मंत्रालयी समिति भी है, जिसका प्रधान सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का सचिव होता है और यह एन.सी.ओ.पी. की सिफारिशों के आधार पर की गई कार्रवाई पर निगरानी रखती है तथा कार्रवाई का उचित कार्यान्वयन करती है।

सहायक अनुदान

अपने अधिकार क्षेत्र को ध्यान में रखते हुए सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, विकलांगताओं, सामाजिक सुरक्षा, अनुसूचित जातियों अन्य पिछड़ा वर्गों आदि के कल्याण के क्षेत्र में उन विभिन्न कार्यक्रमों की मदद और समर्थन करता है जो विभिन्न स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से कार्यान्वित की जाती हैं।

नियोजन, अनुसंधान, मूल्यांकन और अनुवीक्षण प्रभाग

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, विभिन्न असुरक्षित और सुविधा वंचित समूहों की जरूरतें पूरी करने के लिए विभिन्न योजनाएं कार्यान्वित कर रहा है। अत: यह जरूरी है कि इन योजनाओं के प्रभाव का समय-समय पर निर्धारण और मूल्यांकन किया जाना चाहिए जिससे कि इन्हें अधिक प्रभावी बनानेके लिए इनमें सही तरीके से परिवर्तन किया जा सके अथवा यदि इनकी उपयोगिता संदेहपूर्ण पाई जाए तो इन्हें खत्म किया जा सके। अनुसंधान के माध्यम से उन क्षेत्रों को पहचानना भी आवश्यक है जहाँ भविष्य में सामायिक समस्याएं उत्पन्न होने की संभावना है जिससे कि मंत्रालय सामयिक मध्यस्थाओं कीयोजना बना सके। अत: मंत्रालय नियोजन, अनुसंधान और अनुवीक्षण प्रभाग के अंतर्गत अनुसंधान एवं मूल्यांकन को महत्व देता है।

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय से संबंद्ध संगठनों का वर्णन निम्न प्रस्तुत है

- श्रवण विकलांगों के लिए अली यावर जंग राष्ट्रीय संस्थाए (ए.वाई.जे. एन. आई. एच.एच.)
- भारतीय कृत्रिम अंग विनिर्माण निगम (ए.एल.आई.एम.सी.ओ.)
- डॉ. अंबेडकर फांउडेशन
- शारीरिक विकलांग संस्थान (अब दीनदयाल उपध्याय शारीरिक विकलांग संस्थान)
- राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी आयोग
- राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (एन.सी.बी.सी.)
- राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग(एन.सी.एस.सी.)
- राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान
- राष्ट्रीय दृष्टि विकलांग संस्थान (एन.आई.वी.एच)
- राष्ट्रीय अस्थि वाधित विकलांग संस्थान, कोलकाता
- राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त एवं विकास निगम (एन.बी.सी.एफ.डी.सी)
- राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्त एवं विकास निगम (एन.एस. के.एफ.डी.सी)
- राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम(एन.एस.के. एफ.डी.सी.)
- राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम
- राष्ट्रीय विकलांग एंव विकस निगम(एन.एच.एफ.डी.सी)
- आटिजम प्रमस्तिष्क प्रघात मानसिक मंदता एवं बहुविकलांगता ग्रस्तव्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय न्यास
- राष्ट्रीय सामाजिक रक्षा संस्थान (एन.आई.एस.डी.)
- राष्ट्रीय अस्थिर विकलांग संस्थान (एन.आई. ओ. एच.) (अब डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी राष्ट्रीय अस्थि विकलांग संस्थान)
- विकलांगताओं सम्बन्धी मुख्यआयुक्त अधिकारी
- भारतीय पुनर्वास परिषद (आर.सी. आई)
- स्वामी विवेकानंद राष्ट्रीय पुनर्वास प्रशिक्षण और अनुसंधान(एस.वी.एन.आई. आर.टी.ए. आर)

5.6 सारांश

इस इकाई में हमने सामाजिक नीति और समाज कल्यान के साथ इसके सम्बन्ध और इसकी प्रासंगिकता के बारे में समझ विकसित की। इस इकाई में राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, राष्ट्रीय शिक्षा नीति, राष्ट्रीय विकलांगताग्रस्त व्यक्तियों सम्बन्धी नीति और राष्ट्रीय वृद्ध व्यक्तियों सम्बन्धी नीति पर भी फोकस किया गया है। आपने समाज सेवा और नागरिकों के समाज कल्याण के लिए अनेक प्रशासनिक जानकारी और कार्यक्रमों के बारे में भी ज्ञानार्जन किया। अब तक आप सामाजिक नीतियों को कार्यक्रमों और सेवाओं के कार्यान्वयन में परिणत करने की स्पष्ट और उपयोगी जानकारी विकसित कर चुके होंगे।

5.7 बोध प्रश्न

प्रश्न 1: सामाजिक नीति और समाज कल्याण प्रशासन पर फोकस कीजिये।

प्रश्न 2: सामाजिक नीति और कार्यक्रम के बारे में विवरण प्रस्तुत कीजिये।

प्रश्न 3: शिक्षा नीति और कार्यक्रमों के बारे में विश्लेषण प्रस्तुत कीजिये।

प्रश्न 4: समाज कल्याण की नीतियों और कार्यक्रमों का उल्लेख कीजिये।

5.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. हिल, एम. (2003) :*अंडरस्टेंडिंग सोशल पॉलिसी*, 7 वां संस्करण, आक्फोर्ड : ब्लैकवैल पब्लिशर्स।
2. विलियम्स एम. (1989) *सोशल पॉलिसी:ए क्रिटिकल इंट्रोडक्शन* कैम्ब्रिज: पॉलिटी प्रेस।
3. मोरोनी, आर.एम. एवं क्रिसिक जे. (1998) :*सोशल पॉलिसी एंड सोशल वर्क: क्रिटिकल एस्सेज़ आन दि वैल्फेयर स्टेट*: न्यूयार्क एल्डाइन डि ग्रूयटर।
4. ड्रेक, आर.एफ. (2001) : *दि प्रिंसिपल्स ऑफ सोशल पॉलिसी*, न्यूयार्क : पालग्रेव।
5. www.socialjustic.nic.in
6. www.mohfw.nic.in
7. www.education.nic.in

ज्ञान शांति मैत्री

खंड 2

सामाजिक नीति

इकाई -1 सामाजिक नीति : परिचय

रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 सामाजिक नीति : अर्थ एवं परिभाषा
1.3 सामाजिक नीति की विशेषताएं
1.4 सामाजिक नीति के उद्देश्य
1.5 सामाजिक नीति के लक्ष्य एवं कार्य
1.6 सामाजिक नीति का क्षेत्र
1.7 सामाजिक नीति के तत्व
1.8 सामाजिक नीति के निर्धारक
1.9 सारांश
1.10 बोध प्रश्न
1.11 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप

1. सामाजिक नीति के अर्थ एवं परिभाषा की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2. सामाजिक नीति की विशेषताओं, उद्देश्यों, क्षेत्र, निर्धारकों को जान सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

सामाजिक नीति को लेकर बहुत स्पष्टता नहीं रही है। इसके बजाय आर्थिक नीति को बहुत प्राथमिकता प्रदान की जाती है। इसे कई बार सामाजिक दुर्घटनाओं या बाजार के असंतुलन/असफल होने पर उत्पन्न सामाजिक समस्याओं के उपाय के रूप में देखा जाता है।सामाजिक नीति को लेकर प्रतिष्ठित विचार यह रहा है कि सामाजिक नीति का अर्थ सामाजिक सेवाओं तक सबकी पहुँच बनाना, सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध कराना तथा समाज के वंचित तबके के हितों की रक्षा करना है। जबकि नवीन दृष्टिकोण इसे व्यापक बनाते हुए इसमें मानवाधिकार, सतत विकास, सूचना का अधिकार इत्यादि मुद्दों को भी शामिल करता है। नवीन दृष्टिकोण उन समस्त जन नीतियों और कार्यक्रमों को अपने अध्ययन का विषय बनाता है जो सामाजिक समता के लिए आवश्यक है।

ऐतिहासिक रूप से सामाजिक नीति का संबंध पुनर्वितरण, नियंत्रण एवं सामाजिक अधिकारों से रहा है। यह सरकारों और अन्य संस्थानों द्वारा मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने के सार्थक हस्तक्षेप से संबंधित है। अतः इसका क्षेत्र अर्थव्यवस्था, समाज और नीति तीनों में है। इसमें भ्रांत धारणाओं (प्रज्यूडिस), विभेद (डिसक्रीमिनेशन), वंचना इत्यादि से लड़ना और सशक्तिकरण की अवधारणा पर जोर देना भी शामिल है।

वस्तुत : सामाजिक नीति असमानता के प्रति मुखर स्वर एवं हस्तक्षेप है । यह हर तरह की असमानता को दूर करने के लिए प्रतिबद्ध है। यह अंतरानुशासनिक विषय है क्योंकि यह विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षिक, स्वास्थ्य क्षेत्र में संसाधनों की पहुँच, वितरण, नियंत्रण पर अपना ध्यान केंद्रित करती है।

यह अध्ययन विषय के साथ-साथ व्यावहारिक विषय भी है । एक अध्ययन विषय के रूप में सामाजिक नीति को पढ़ाया जाता है तो दूसरी ओर सरकारों, विभिन्न संगठनों द्वारा सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सामाजिक नीति को लागू भी किया जाता है और उनका मूल्यांकन भी होता है।

सामान्य तौर पर सामाजिक नीति का कार्य सभी नागरिकों को उन न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है जो एक मनुष्य के रूप में व्यक्तित्व विकास के लिए आवश्यक है। यह अपने में सामाजिक जीवन को भी समाहित करती है। यह व्यक्तियों और समुदायों के सशक्तिकरण का उद्देश्य रखती है और इस हेतु परिवर्तन पर जोर देती है। ऐसा करने में यह जन समुदाय की सक्रिय भागीदारिता को भी शामिल करती है जिससे सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति संभव हो सके। सामाजिक नीति सामाजिक न्याय को पुष्ट करती है । सामाजिक नीति अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में आर्थिक एवं सामाजिक विकास को नवीन दिशा प्रदान करती है जिससे इन दोनों विकास के लाभ समाज के वंचित वर्ग को प्राथमिकता के आधार पर मिल सके।

सामान्यत: 'नीति' शब्द का तात्पर्य उन मार्ग निर्देशों/सिद्धांतों से होता है जो सरकार और अन्य संस्थाओं के क्रियाकलापों को दिशा प्रदान कर वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति करते हैं। जब हम बहुवचन के रूप में सामाजिक नीति की बात करते हैं तो इसका तात्पर्य सभी वर्गों की लिए विभिन्न क्षेत्रों में निर्धारित नीतियों के समुच्चय से होता है मसलन – स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, सामाजिक सुरक्षा से संबंधित नीतियां । परन्तु जब एकवचन के रूप में सामाजिक नीति का प्रयोग करते है तब इसका तात्पर्य किसी खास वर्ग से संबंधित नीतियों से होता है मसलन– अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से संबंधित नीतियां, अनिवार्य बाल शिक्षा से संबंधित नीतियां इत्यादि ।

1.2 सामाजिक नीति : अर्थ एवं परिभाषा

सामाजिक नीति का अर्थ समाज के सभी सदस्यों के व्यक्तिगत और सामूहिक हितों में सामंजस्य स्थापित करना होता है। यह वह माध्यम है जिसके जरिए समाज के सभी सदस्यों का हितवर्धन होता है। यह सामाजिक संरचना में विद्यमान कमियों का पहचानने, उन्हें दूर करने का प्रयास करती है। विभिन्न असमानता उत्पन्न करने वाले तत्वों को कम/दूर करने का प्रयास करती है। इसके जरिए कल्याण सुनिश्चित किया जाता है। यह सार्वजनिक नीति का ही भाग होती है परन्तु मुख्यत: सामाजिक सरोकारों से संबंध रखती है। यह नीति निर्माण के केंद्र में लोगों को लाने का माध्यम है। यह सामाजिक विकास और सामाजिक न्याय के साथ जुड़ी हुई अवधारणा है ।

यह अपने मूल रूप में लोगों के बीच समता स्थापित करने का प्रयास करती है। वंचित समूहों और हाशिए पर रह रहे वर्गों को समाज की मुख्यधारा में लाने का उद्देश्य रखती है। यह सरकारों और विभिन्न संस्थाओं/प्रयासों को लोगों के कल्याण का प्रभावी माध्यम बनाने का प्रयास करती है ताकि उनमें जनता का विश्वास मजबूत हो सके। यह विभिन्न आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक इत्यादि नीतियों के नकारात्मक प्रभावों के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान करने का माध्यम भी है ।

परिभाषा : सामाजिक नीति की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं दी जा सकती है। अनेक विद्वानों और समूहों ने इसे विभिन्न दृष्टिकोणों से परिभाषित करने का प्रयास किया है :

पी.डी. कुलकर्णी (1965:2) के अनुसार –

" सामाजिक नीति घोषित सामाजिक उद्देश्यों को क्रमबद्ध तरीके से प्राप्त करने में सहायक साधनों और पद्धतियों की कार्य रणनीति है।"

सामाजिक प्रशासन के प्रथम प्रोफेसर रिचर्ड टिटमस (1968:20) के अनुसार –

" सामाजिक नीति का संबंध सामाजिक आवश्यकताओं और उसकी प्रक्रियाओं के विस्तार के अध्ययन से है। इन आवश्यकताओं और प्रक्रियाओं का अध्यन सामाजिक सेवाओं या सामाजिक कल्याण व्यवस्था रूपी मानवीय संगठनों की अल्पता के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक सेवाओं की पूर्ति करने से है।"

येलजा (1987:12) के अनुसार –

" सामाजिक नीति कल्याण सेवाओं के सार्वजनिक प्रशासन से संबंधित है। जिसमें स्वास्थ्य, शिक्षा, आय एवं कल्याण सेवाओं जैसी विशिष्ट सरकारी सेवाओं के निर्माण, विकास और प्रबंधन शामिल है।"

एल्कॉक (1998:7) के अनुसार –

" सामाजिक नीति को सामाजिक विज्ञानों के अनुशासन और अध्ययन क्षेत्र के रूप में या 'वास्तविक जगत में सामाजिक क्रिया' के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"

संयुक्त राष्ट सामाजिक विकास शोध संस्थान- यूएनआरआईएसडी (2006:5) के अनुसार -

" सामाजिक नीति आर्थिक नीतियों के पुनर्वितरण प्रभाव, बाजार के दुष्प्रभावों से लोगों को बचाने, उम्रदराज होने के कारण बदलती परिस्थितियों, समाज के सदस्यों की उत्पादक क्षमता बढ़ाने और अन्य सामाजिक कार्यों के साथ पुनर्उत्पादन के भार को कम करना और साथ ही पुनर्उत्पादक के भार को साझा करने से संबंधित है।"

सार रूप में सामाजिक नीति को उन नीतियों के समुच्चय एवं क्रियात्मक रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिनका उद्देश्य समाज के सभी सदस्यों का सर्वांगीण विकास, संसाधन उत्पादन एवं उसका समुचित न्यायपूर्ण वितरण करना, ऐसा करते हुए सभी व्यक्तियों का कल्याण एवं उस कल्याण को सुनिश्चित करने वाली समस्त सेवाओं तक सबकी पहुँच बनाना, इसके साथ असमानता को निरंतर कम करना शामिल है।

1.3 सामाजिक नीति की विशेषताएं

फ्रीमैन और शेरवुड (1970:2) ने सामाजिक नीति के चार पहलू /विशेषताओं का उल्लेख किया है –

1. सामाजिक नीति उत्पाद के रूप में – समाज की बेहतरी के लिए समाज के लोगों के बीच हुए विमर्श से उत्पन्न निष्कर्ष के रूप में।
2. सामाजिक नीति प्रक्रिया के रूप में – यह एक विकसनशील प्रक्रिया है। एक उद्देश्य तय होने पर दूसरे उद्देश्य निर्धारित किए जाते हैं।
3. सामाजिक नीति कार्यनीति ढ़ांचे के रूप में – यह कार्यनीति का ढ़ांचा है जिसमें कल्याण हेतु सुनिश्चित नीति और तयशुदा कार्यक्रम है जिसके जरिए उद्देश्य की प्राप्ति हो सके।

ए.के.भारतीय और डी.के.सिंह (2009:11-16) के अनुसार सामाजिक नीति की विशेषताएं निम्नानुसार बतायी जा सकती हैं –

1. **विषय के साथ अभ्यास क्षेत्र** – सामाजिक नीति अनुशासन (Discipline) ही नहीं बल्कि विषय क्षेत्र (Subject area) भी है। यह अन्य सामाजिक विज्ञान अनुशासनों की सहायता से अपने अध्ययन क्षेत्र को विकसित करता है। राल्स, स्टीफन और मूर (2000:23) ने सामाजिक नीति विषय का मूल सामाजिक विज्ञानों में माना है। इनमें समाजशास्त्र, समाज कार्य, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, राजनीति विज्ञान, प्रबंधन, दर्शन, इतिहास एवं कानून आदि शामिल

है। यह अंतरानुशासनिक विषय है जो अन्य सामाजिक विज्ञानों से विचार और सिद्धांत लेता है। सरकार लोगों के कल्याण को सुनिश्चित करने के लिए इसके जरिए विभिन्न बदलावों पर ध्यान केंद्रित करती है। सामाजिक नीति अध्ययन विषय के रूप में निम्नलिखित शीर्षकों को समाहित करती है –

- सामाजिक कल्याण, समाज और व्यक्तियों के बारे में विभिन्न विचारधाराएं, मूल्य और विश्वास
- वास्तविक जीवन एवं समकालीन सामाजिक समस्याएं
- सामाजिक कल्याण मुद्दों पर राज्यों और सरकारों के दृष्टिकोण एवं कार्य
- सामाजिक नीति निर्माण और कार्यान्वयन का राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक संदर्भ

सामाजिक नीति अपने आप में नीति निर्माण, क्रियान्वयन एवं प्रभावों का अध्ययन है जिससे जनता के सामाजिक हित जुड़े होते हैं। सामाजिक नीति का लक्ष्य समाज में कल्याणकारी सेवाओं के जरिए मानव जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि ला कर कल्याण को बढ़ाना होता है।

2. **सामाजिक नीति उपकरण के रूप में** – इस नीति के उपकरण द्वारा सरकारें बाजार एवं अन्य संस्थाओं पर नियमन एवं नियंत्रण रखती हैं ताकि सामाजिक हितों की रक्षा हो सके। यह संसाधनों की लामबंदी में सहायक है। अपने व्यापक कार्यक्षेत्र में मौद्रिक नीति,भूमि सुधार, सामाजिक विधान, कल्याणकारी उपायों की सहायता से सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति करती है। सामाजिक नीति सामाजिक बदलाव का एक सकारात्मक उपकरण है।

3. **वितरणात्मक एवं पुनर्वितरणात्मक भूमिका** – सामाजिक नीति दोनों ही भूमिकाओं का निर्वाह करती है। यह लोगों के मध्य समाज में विद्यमान संसाधनों का वितरण करती है और ऐसा करते हुए अपने सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति भी करती है। यदि ऐसा प्रतीत होता है कि समाज में आवंटित संसाधन सामाजिक लक्ष्योंकी प्राप्ति में सहायक नहीं हो रहे हैं या किसी वर्ग को संसाधनों की कमी है तो वह संसाधनों के पुनर्वितरण को भी तरजीह देती है।

4. **समाज के एक वर्ग से दूसरे वर्ग को संसाधन हस्तान्तरण** - यह एक महत्वपूर्ण विशेषता है। एक लोकतांत्रिक समाज एवं सरकार में दोनों का दायित्व है कि हर व्यक्ति और समाज के लिए सामाजिक न्याय और अवसर की समानता स्थापित करें। यदि सरकार यह अनुभव करें कि सभी व्यक्तियों एवं समाजों को संसाधनों का वितरण उनकी आवश्यकता अनुसार नहीं हुआ है तो वह संसाधनों का वितरण उन समाजों में ज्यादा कर सकती है जो वंचित तबके हैं। यह समाज के विभिन्न वर्गों के बीच दूरी कम करने का माध्यम है।

5. **समाज के वंचित एवं उपेक्षित वर्गसे संबंधित**– सामाजिक नीति का एक मुख्य सरोकार समाज के हाशिए एवं वंचित तबकों की बेहतरी से है। इन वंचित एवं हाशिए के वर्गों में गरीब, स्त्रियां, वृद्ध, विकलांग, बच्चे/बच्चियां आदिवासी, तृतीयपंथी, अनुसूचित जाति, विस्थापित आदि समाहित है। इस नीति का मकसद इन वर्गों को समाज में उचित स्थान प्रदान करना और सशक्त बनाना है।

6. **नीतियों के साथ सहसंबंध**– सामाजिक नीति एक प्रदत्त समाज विशेष के अनुभवों से जन्म लेती है, वह अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अन्य आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक आदि का भी सहारा लेती है। ऐसा करना इसलिए आवश्यक है क्योंकि सामाजिक नीति के लक्ष्यों को पूरा करने में इन सभी का योगदान होता है। मसलन – आर्थिक नीतियां ऐसी बनायी जानी चाहिए जिनसे समाज में असमानता कम होती हो तो यह सामाजिक नीति की पूरक नीति हो जाती है।

1.4 सामाजिक नीति के उद्देश्य

सामाजिक नीति का लक्ष्य निश्चित सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करना होता है। प्रो. तरलोक सिंह (1968) ने सामाजिक नीति के उद्देश्यों के संबंध में तीन दृष्टिकोण बताएं है-

1. इसे उन कार्यक्रमों और उपायों के रूप में देखा जाना चाहिए जो समाज के वंचित तबकों के कल्याण एवं विकास, सामाजिक बदलाव एवं सुधारों तथा सामाजिक सेवाओं के विस्तार से जुड़े हैं।
2. इसे समाज के विभिन्न वर्गों के नजरिए से देखा जाना चाहिए (उनकी आकांक्षाओं और आवश्यकताओं के नजरिए से)
3. इसे एक समाज के विशेष वर्ग के विकास से देखा जाना चाहिए जो आगे चलकर पूरे समाज के विकास से जुड़ा हो।

सामाजिक नीति का उद्देश्य दोहरा है, जहां एक ओर यह समाज के सभी वर्गों के कल्याण को सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध है, वहीं दूसरी ओर इसका बल सामाजिक बदलाव को बढ़ावा देना और कल्याण में बाधक समस्याओं का निदान भी है। इसका उद्देश्य लोगों के जीवन में गुणात्मक वृद्धि, समान अवसर, संसाधनों तक समान पहुँच, सामाजिक सेवाओं की व्यापक पहुँच उपलब्ध कराना, सशक्तिकरण करना है। इसमें मूलभूत मानवीय आवश्यकताओं – शिक्षा, आवास, पोषण, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, स्वास्थ्य इत्यादि की पूर्ति का भी समावेश है।

सामाजिक नीति के उद्देश्यों को निम्नानुसार बताया जा सकता है-

- सामाजिक समानता
- सामाजिक एकीकरण
- जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि
- सामाजिक न्याय की प्राप्ति
- संसाधनों का न्यायपूर्ण एवं समतापूर्ण वितरण एवं पुनर्वितरण
- अवसरों की समानता
- सामाजिक बदलाव
- कल्याण सेवाओं की उपलब्धता एवं लागत में कटौती
- विकेंद्रीकरण एवं सहभागिता
- सशक्तिकरण
- सामाजिक समस्याओं का निवारण
- सकारात्मक मानवीय संबंधों का विकास

ज्ञान शांति मैत्री

1.5 सामाजिक नीति के लक्ष्य एवं कार्य

सामाजिक नीति के लक्ष्यों एवं कार्यों को निम्नानुसार बताया जा सकता है –

- उपलब्ध कानूनों को सशक्त एवं प्रभावपूर्ण बनाकर एवं जन सहयोग एवं संस्थागत सेवाओं के माध्यम से सामाजिक निर्योग्यताओं का दूर करना।
- समाज के वंचित एवं हाशिए के वर्ग की पीड़ाओं का निवारण करना।

- सामाजिक बदलाव एवं सुधार पर जोर देना।
- समाज के सभी वर्गों के लिए सुरक्षात्मक योजनाओं को उपलब्धकराना।
- व्यक्तित्व विकास हेतु मूलभूत संसाधनों को समान रूप से सभी को उपलब्धकराना।
- समाज में विद्यमान असमानता कम करना।
- जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि करना।
- सभी प्रकार की कल्याण सेवाओं तक पहुँच आसान बनाना।
- संसाधनों का न्यायपूर्ण वितरण।
- सामाजिक न्याय की प्राप्ति।

1.6 सामाजिक नीति का क्षेत्र

प्रो. सुरेन्द्र सिंह, प्रो.पी.डी.मिश्र एवं डॉ. ए.एन सिंह (2006: 4-5) के अनुसार सामाजिक नीति के क्षेत्र के अंतर्गत वर्तमान समाज में विद्यमान सामाजिक समस्याओं का दायरा, प्रवृत्ति, व्यापकता का विश्लेषण और विभिन्न नीतियों के माध्यम से इनका निवारण शामिल है। सामान्यत:सामाजिक नीति के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं जिनके कार्यों का क्रियान्वयन महत्वपूर्ण माना जाता है-

1. **सामाजिक कार्यक्रम तथा उससे संबंधित कार्य** – इसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार नियोजन, आवास, पोषण, श्रम, पेंशन आदि कार्यक्रम आते हैं। सामाजिक बदलाव, सामाजिक सुरक्षा, असमानता में कमी आदि भी इसमें समाहित हैं।
2. **समाज के विभिन्न वर्गों से संबंधित सामाजिक नीति** – सामाजिक एवं आर्थिक बदलाव समाज में विभिन्न वर्गों को जन्म देता है मसलन – औद्योगीकरण ने कृषि जगत एवं उससे जुडे समस्त वर्ग को हाशिए पर ला दिया है। कृषक हाशिए की स्थिति में और उद्योगपति एवं उद्यमी समाज के श्रेष्ठि वर्ग हैं। सामाजिक नीति द्वारा हाशिए के वर्गों का सशक्तिकरण किया जाता है।
3. **समाज में महत्वपूर्ण वर्गों से संबंधित सामाजिक नीति**– समाज में ऐसे वर्ग होते हैं जिन्हेंव्यापक सुरक्षा और कल्याणकी आवश्यकता होती है। मसलन – बच्चे/बच्चियां, विधवा औरतें, वृद्धजन, विकलांग, भयंकर बीमारी से पीड़ित लोग,विस्थापित, निर्धन लोग इत्यादि। सामाजिक नीति इन पर अपना ध्यान केंद्रित रखती है।

डेवरेक्स और कुक (2000: 63-74) ने सामाजिक नीति हस्तक्षेप के **पाँच क्षेत्र** बताएं हैं–

1. सामाजिक क्षेत्र (Social Sector) : स्वास्थ्य, शिक्षा, पेयजल, स्वच्छता, आवास आदि
2. सामाजिक बीमा (Social Insurance): पेंशन, बेरोजगारी भत्ता, विकलांग भत्ताआदि
3. सामाजिक सुरक्षा (Social Protection): खाद्य अनुदान
4. सामाजिक सेवाएं (Social Services): वंचित एवं कमजोर वर्गों की देखभाल
5. सामाजिक अधिकार (Social Rights): बच्चे/बच्चियां, श्रमिक, स्त्रियां आदि

1.7 सामाजिक नीति के तत्व

किसी भी सामाजिक नीति के निम्नलिखित तत्व बताएं जा सकते हैं–

1. मानवीय सुरक्षा, मानव जीवन एवं गरिमा की सुरक्षा
2. सामाजिक एकीकरण, समाज के विभिन्न वर्गों के बीच समानता एवं न्यायपूर्ण संबंध
3. प्रभावी एवं पारदर्शी संस्थाएं
4. सुरक्षित एवं सातत्यपूर्ण आजीविका के अवसर
5. जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने वाले परिवेश की उपलब्धता
6. शिक्षा और कौशल
7. स्वास्थ्य एवं कल्याण

1.8 सामाजिक नीति के निर्धारक

सामाजिक नीति निर्माण के **निर्धारकों** को निम्नानुसार बताया जा सकता है–

1. सरकार
2. राजनैतिक दल
3. विभिन्न जन आंदोलन एवं सुधार कार्यक्रम
4. स्वैच्छिक संगठन
5. सामाजिक क्रिया समूह
6. योजना दस्तावेज
7. कानून और न्यायालय
8. संसदीय समितियां
9. तकनीकी उन्नयन
10. जनता की सहभागिता
11. विभिन्न शोध

सामाजिक नीति क्रियान्वयन में आने वाली **बाधाओं** को निम्नानुसार बताया जा सकता है–

1. राजनीतिक इच्छा शक्ति की कमी
2. भ्रष्टाचार
3. आर्थिक सीमाएं
4. लालफीताशाही
5. अपर्याप्त श्रमशक्ति
6. अपर्याप्त कौशल
7. जनसहभागिता की कमी
8. न्याय में देरी
9. सामाजिक एवं आर्थिक असमानता
10. अशिक्षा

सामाजिक नीति के प्रभावी क्रियान्वयन एवं बदलाव हेतु निम्नलिखित **सुझाव** महत्वपूर्ण हैं–

1. जनजागरूकता एवं आंदोलन
2. मीडिया का प्रयोग

3. शांतिपूर्ण प्रदर्शन
4. पीआईएल (जनहित याचिका)
5. जन मुद्दों पर सेमिनार एवं वार्ता
6. दबाव समूहों का प्रयोग
7. विभिन्न शोधों के जरिए समस्या को जानना एवं समाधान प्रस्तुत करना
8. विकेंद्रीकरण
9. जनसहभागिता
10. कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को मजबूत करना
11. सामाजिक कार्यकर्ताओं को सम्मान प्रदान करना और सामाजिक स्वीकृति प्रदान करना।
12. आर्थिक नीतियों को सामाजिक न्याय के साथ संगत बनाना।

सामाजिक नीति वस्तुत: अर्थव्यवस्था, उत्तरदायित्व एवं कल्याण के बीच सामजंस्य बनाने का प्रयास करती है। इसे निम्नानुसार चित्र द्वारा बताया जा सकता है –

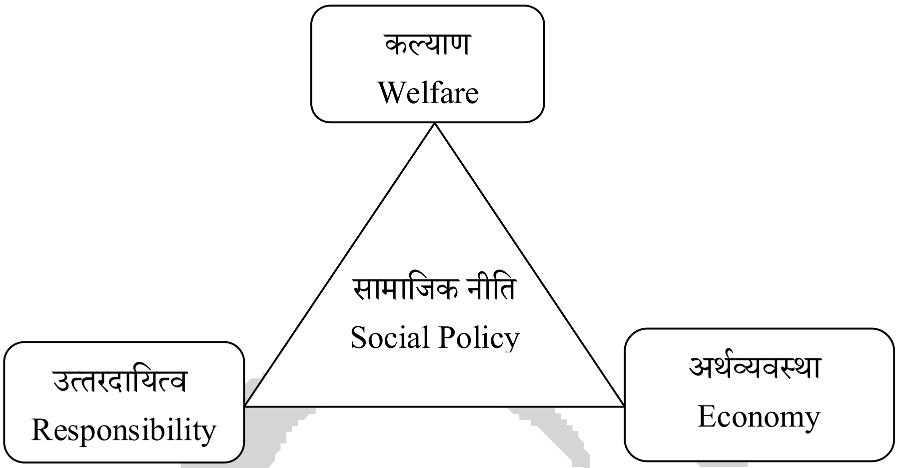

सामाजिक नीति का त्रिकोण (Social Policy Triangle)

स्रोत : Dickens, J.(2010). Social Work and Social Policy. New York : Routledge. p.-29.

1.9 सारांश

सामाजिक नीति का उद्देश्य वैयक्तिक और सामूहिक रूप से सर्वांगीण कल्याण होता है। इसके लिए सामाजिक नीति विभिन्न प्रकार की सामाजिक सेवाएं और सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध कराती है ताकि हर व्यक्ति को गरिमापूर्ण जीवन व्यतीत करने का अवसर प्राप्त हो सके। यह समुदाय के वंचित एवं कमजोर वर्गों के लिए विशेष सहायताभी प्रदान करती है। सभी के जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि इसका लक्ष्य होता है। जिसके लिए विभिन्न सामाजिक नीतियों का निर्माण एवं क्रियान्वयन किया जाता है। सामाजिक नीति के निर्माण एवं क्रियान्वयन में सरकार, स्वैच्छिक संगठनों के साथ –साथ जनता की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

1.10 बोध प्रश्न

1. सामाजिक नीति का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
2. सामाजिक नीति की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
3. सामाजिक नीति को प्रभावपूर्ण कैसे बनाया जा सकता है ?
4. भारत जैसे देश में सामाजिक नीति की प्रासंगिकता पर अपने विचार लिखिए।

1.11 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

- पाण्डेय, बालेश्वर (2013). *समाज कार्य : सिद्धांत एवं पद्धतियां* जयपुर : रावत पब्लिकेशंस.
- व.म.खु.वि. (2014). *सामाजिक कल्याण प्रशासन : नीति,नियोजन और विकास*. कोटा : व.म.खु.वि.
- सिंह, प्रो. सुरेंद्र, मिश्र, प्रो.पी.डी. , सिंह, डॉ. ए.एन. (2006). *भारत में सामाजिक नीति, नियोजन एवं विकास* . लखनऊ : देवा पब्लिकेशंस
- Adams,R.(2002). *Social Policy for Social Work*. New York : Palgrave.

- Alcock, P., Erskine, A. & May, M.(1998). *The Student's Companion to Social Policy*. Oxford: Blackwell.
- Bhartiya, A.K.(2000). *Introduction to Social Policy*. Lucknow : New Royal Book Company.
- Bhartiya, A.K. & Singh, D.K.(2009).*Social Policy in India*. Lucknow : New Royal Book Company.
- Devereux, S. & Cook,S.(2000). Does Social Policy meet Social Needs ?. *Institute of Development Studies Bulletin*, Vol.31, No.4 . pp 63-73.
- Freeman, H.E. & Sherwood, C.C.(1970). *Social Research and Social Policy*. New York : Prentice Hall.
- Kulkarni, P.D.(1959). Social Policy in India, *Indian Journal of Social Work*. Vol.30, No. 3, p. 2.
- Singh, Tarlok (1968). Social Policy. *Encyclopaedia of Social Work in India*. Vol. II, The Planning Commission. New Delhi: Govt. of India .
- Titmus, R.M.(1968). *Commitment to Welfare*. New York : Pantheon.
- UNRISD(United Nations Research Institute for Social Development)(2006). *Transformative Social Policy: Lessons from UNRISD Research*. UNRISD and Research Policy Brief no 5, Geneva: UNRISD.
- Yelja(1987). *Canadian Social Policy*. Waterloo : On Wlfrid Laurier University Press.

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई -2 सामाजिक नीति : प्रारूप और सिद्धांत

रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 सामाजिक नीति के प्रारूप
  2.2.1 अवशेष कल्याण प्रारूप (रेसीडुअल वेलफेयर मॉडल)
  2.2.2 उपलब्धि प्रदर्शन प्रारूप (अचीवमेंट परफॉर्मेंस मॉडल)
  2.2.3 औद्योगिक पुनर्वितरणात्मक प्रारूप (इंडस्ट्रीयल रिडिस्ट्रीब्यूटिव मॉडल)
2.3 सामाजिक नीति के अभिगम
  2.3.1 न्यू राइट अधिगम
  2.3.2 सामाजिक लोकतांत्रिक अधिगम
  2.3.3 रेडिकल समाजवादी अधिगम
  2.3.4 स्त्रीवादी अधिगम
  2.3.5 नस्ल विरोधी अधिगम
2.4 सामाजिक नीति का प्रक्रिया प्रारूप
2.5 सारांश
2.6 बोध प्रश्न
2.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप
- सामाजिक नीति के प्रारूप से परिचित हो सकेंगे
- सामाजिक नीति के विभिन्न उपागमों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे
- सामाजिक नीति के सिद्धांतों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे

2.1 प्रस्तावना

सामाजिक नीति का लक्ष्य समाज के समस्त लोगों का सर्वांगीण विकास है। साथ ही वर्तमान विकास प्रक्रिया को ज्यादा समावेशी बनाना भी है। सामाजिक नीति अपने लक्ष्यों की पूर्ति हेतु आर्थिक एवं सामाजिक विकास में परिवर्तन का मार्ग भी सुझाती है। इसका लक्ष्य एक समतापूर्ण एवं न्यायपूर्ण विकास की प्राप्ति है। इस हेतु सामाजिक नीति विभिन्न योजनाओं, कार्यक्रमों, संस्थाओं के माध्यम से आर्थिक व सामाजिक विकास के बीच संतुलन बनाकर सामाजिक न्याय एवं संभव समानता हेतु कार्य करती है।

2.2 सामाजिक नीति के प्रारूप

सामाजिक नीति के विभिन्न प्रारूपों में यह बात निहित है कि सामाजिक नीति सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं से अपना सरोकार रखती है। इन प्रारूपों में इन क्षेत्रों को पहचानने आपसी सहयोग प्रक्रिया को समझने की कोशिश होती है। कुछ प्रारूप केवल इसे 'सामाजिक क्षेत्र की नीतियां' मानते हैं वहीं दूसरी ओर ऐसे प्रारूप भी हैं जो इसे समता, सामाजिक न्याय, आय पुनर्वितरण, कौशल इत्यादि से भी जोड़ते हैं।

प्रो. रिचर्ड टिटमस (1974) ने तीन प्रकार के प्रारूपों का उल्लेख किया है –

- अवशेष कल्याण प्रारूप (रेसीडुअल वेलफेयर मॉडल)
- उपलब्धि प्रदर्शन प्रारूप (अचीवमेंट परफॉर्मेंस मॉडल)
- औद्योगिक पुनर्वितरणात्मक प्रारूप (इंडस्ट्रीयल रिडिस्ट्रीब्यूटिव मॉडल)

इन तीनों प्रारूपों को निम्नानुसार बताया जा सकता है -

2.2.1 अवशेष कल्याण प्रारूप (रेसीडुअल वेलफेयर मॉडल)

यह प्रारूप सरकारी सहायता को अस्थायी, न्यूनतम मानता है । इसका प्रयोग तभी करना चाहिए जब सहायता के अन्य स्रोत चुक गए हो। इस प्रारूप के अनुसार हर व्यक्ति महत्वपूर्ण होता है और अपना विकास करने में वह समर्थ है। ऐसा माना जाता है कि हर व्यक्ति के लिए विकास के अनगिनत अवसर समाज में मौजूद हैं जिससे व्यक्ति अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है। अगर ऐसा करने में वह असफल होता है तो गलती व्यक्ति की है न कि अवसर उपलब्ध कराने वाली संरचना या सामाजिक – आर्थिक प्रगति करने वाली संस्था की। अत: राज्य का दायित्व है कि वह ऐसे हताश व्यक्ति को सहायता प्रदान करे जिससे वह आत्मनिर्भर बन सके।

इस प्रारूप में सामाजिक नीति उन लोगों के लिए बनायी जाती है जिनके पास आजीविका का साधन न हो, न ही परिवार या बाजार की तरफ से कोई सहायता मिलती हो। सहायता देने से पूर्व व्यक्ति की आय एवं स्थिति की जानकारी प्राप्त की जाती है। सामाजिक नीति का यह प्रारूप इंग्लैंड में लागू था।

इस प्रारूप की आलोचना करते हुए विद्वानों ने बताया कि यह प्रारूप ऐसे समाज एवं शासन में लागू हो सकता है जहां लोगों में जागरूकता हो, सरकारी सेवाओं का प्रभावी क्रियान्वयन हो। व्यक्ति के लिए मौद्रिक राशि ही पर्याप्त नहीं है बल्कि सामाजिक सेवाएं, सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याण जैसी व्यवस्थाएं भी उसके सुरक्षित जीवन के लिए आवश्यक है।

2.2.2 उपलब्धि प्रदर्शन प्रारूप (अचीवमेंट परफॉर्मेंस मॉडल)

इस प्रारूप का अर्थ है कि सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति मेरिट, अर्जित स्तर भिन्नता, कार्य निष्पादन और उत्पादकता के आधार पर होती है। समाज को अपने वृहदतर आर्थिक एवं तकनीकी संसाधनों के मद्देनजर सामाजिक एवं कल्याण सेवाओं का विकास और प्रचार करना चाहिए। जिस तरह एक उपभोक्ता बाजार में किसी वस्तु के उपयोग की कीमत अदा करता है उसी प्रकार उसे इन सेवाओं की कीमत अदा करनी चाहिए। जिनके पास संसाधन हैं वे इन सेवाओं का ज्यादा उपयोग कर सकते हैं।

समाज सभी को यह अवसर प्रदान करता है कि हर व्यक्ति की संसाधनों पर पहुँच ज्यादा हो सके ताकि वे सेवाओं का ज्यादा उपयोग कर सके। इसमें महत्वपूर्ण बात यह है कि सरकार द्वारा ऐसी नीतियां बनायी जाती है जिससे जिन लोगों के पास पहले से ही संसाधन है उनके पक्ष में होती है । अत नीतियों में तथा उनके लागू होने से असमानता

बनी रहती है। समाज के उच्च वर्ग के लोग ज्यादा संसाधनयुक्तहैं अत: मौद्रिक नीतियां उनके पक्ष में होगी और उन्हें ज्यादा सामाजिक सुरक्षा मिलेगी । इस प्रक्रिया में निर्धन, वंचित समुदाय के हितों पर आघात होता है। उनके पास संसाधन कम होते है, उन्हें कम सामाजिक सुरक्षा मिलती है।

2.2.3 औद्योगिक पुनर्वितरणात्मक प्रारूप (इंडस्ट्रीयल रिडिस्ट्रीब्यूटिव मॉडल)

यह प्रारूप सामाजिक न्याय के नैतिक सिद्धांत पर आधारित है जो प्रत्येक व्यक्ति के आधारभूत सामाजिक एवं कल्याण सेवा प्राप्ति के अधिकार को स्वीकार करता है। इस बात को ध्यान में नहीं रखा जाता है कि व्यक्ति इन सुविधाओं हेतु भुगतान कर पाएगा या नहीं । इस प्रारूप में ये सुविधाएं सभी को बिना किसी भेदभाव के उपलब्ध करायी जाती है। इसमें इन सेवाओं को प्रदान करने में राज्यकी अनिवार्य भूमिका मानी जाती है। इसमें विशेष आवश्यकता वाले समूहों को चयनित आधार पर विशेष सहायता भी दी जाती है। समाज के वंचित एवं हाशिए के तबके को सुविधाएं प्रदान कर उन्हेंसमाज में आय वितरण एवं संसाधन उत्पादन में बेहतर भूमिका निभाने हेतु तैयार किया जाता है। राज्य औद्योगिक क्षेत्र या अन्य अधिकाधिक आय एवं लाभ अर्जन करने वाले लोगों/संस्थानों पर कर लगा कर उसका प्रयोग वंचित वर्गों को सामाजिक एवं कल्याण सेवाएं देने में करता है।

2.3 सामाजिक नीति के अभिगम

सामाजिक नीति के अभिगम विभिन्न दृष्टिकोणों/विचारधाराओं के आधार पर प्रस्तुत किए गए हैं। इनमें से सभी सामाजिक नीति के निर्माण, क्रियान्वयन एवं पुनरीक्षण को अपना विशेष आधार बनाते हैं। वाल्श, स्टीफन एवं मूर (2000: 15-18) ने सामाजिक नीति के निम्नलिखित अभिगम बताएं हैं -

2.3.1 न्यू राइट अधिगम

इसे आर्थिक उदारवादी/नव संरक्षणवादी अधिगम भी कहा जाता है। 'न्यू राइट' शब्द अमेरिका में 1070 के दशक में प्रचलन में आया। यह व्यक्ति की स्वतंत्रता पर जोर देता है। सामाजिक समस्याओं के बदतर होने पर ही सरकार को हस्तक्षेप करना चाहिए।यह उपागम सामाजिक समस्याओं को बाजार के उपायों पर छोड़ता है। इस अधिगम में दो वर्ग बनते हैं; एक वे व्यक्ति जो सामाजिक एवं कल्याण सेवाओं के'योग्य' हैं और दूसरे उन लोगों को'समझना' जिन्हें सरकारी सहायता और कल्याण सेवाएं प्राप्त नहीं है। उदाहरण के लिए – कोई व्यक्ति गरीब है तो उसमें उसकी गलती नहीं है, वह सहायता प्राप्त करने के योग्य है। परन्तु व्यक्ति इसलिए गरीब है क्योंकि वह जानबूझकर नौकरी से वंचित है या अपने कौशल/योग्यता को आलस्य के कारण अयोग्य बना रहे तो वह सहायता के योग्य नहीं है।

यह अधिगम व्यक्तिगत उत्तरदायित्व एवं चयन, समाज कल्याण सेवा प्राप्तकर्ता एवं प्रदाता पर मुक्तबाजार के प्रेरणास्पद प्रभाव पर जोर देता है। इनकी धारणा है कि मुफ्त, राज्य पोषित कल्याण सेवाओं का परिणाम अपर्याप्त एवं खर्चीली राज्य संस्थाओं के रूप में सामने आता है। यह राज्यपोषित सेवाओं और कल्याण व्यवस्था का विरोध करते हुए तर्क देता है कि वर्तमान सामाजिक व्यवस्था को कम किया जाना चाहिए। सारी व्यवस्थाएं बाजार के नियमों पर छोड़ देनी चाहिए। इस नजरिए से सामाजिक नीतियों को इस तरह विकसित किया जाता है जिससे व्यक्ति सामाजिक कल्याण सेवाओं को निजी प्रदाता से खरीदे या स्वैच्छिक पोषित दान सेवाओं का उपयोग करे।

2.3.2 सामाजिक लोकतांत्रिक अधिगम

इसे सामाजिक उदारवाद/सामूहिक अधिगम भी कहा जाता है। इसके अनुसार राज्यको अपने नागरिकों को गरीबी से बचाना चाहिए और मुख्य सामाजिक व आर्थिक असमानता को बढ़ने से रोकना चाहिए। समता इस धारा के

चिंतकों का केंद्रबिंदु है। जहां न्यूाइट वाले मानते हैं कि उच्च धनी वर्ग को आय अर्जन के साथ-साथ थोड़ी राशि दान संस्थाओं (चेरिटेबल ट्रस्ट) में देनी चाहिए, वहीं सामाजिक लोकतांत्रिक विचार का मानना है कि ऐसा करना उनका कर्त्तव्य है जो उन्हें हर हाल में पूरा करना चाहिए। साथ ही सरकार को उच्च आय वाले वर्ग पर कर लगाने चाहिए और इसका प्रयोग सामाजिक कल्याण सेवाओं में करना चाहिए।

2.3.3 रेडिकल समाजवादी अधिगम

इस अधिगम को मार्क्सवादी/नव मार्क्सवादी/ संघर्ष अधिगम भी कहा जाता है। इसके मुताबिक पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था ही समस्त समस्याओं की जड़ है। इसी सेही अल्प पूँजीपति वर्ग लाभ प्राप्त करता है जिससे असमानता व सामाजिक समस्याओं को जन्महोता है।

नार्मन गिन्सबर्ग (1996) ने बताया कि सामाजिक नीति के प्रति समाजवादी दृष्टिकोण दो मान्यताओं को मानता है –

- पूँजीवादी समाजों में सभी सदस्यों की सामाजिक कल्याण संबंधी आवश्यकताएं पूरी नहीं हो सकती क्योंकि पूँजीवाद का आधार 'प्रतिस्पर्धात्मक व्यक्तिवाद' है।
- पूँजीवाद के बने रहने का आधार सामाजिक असमानता और विभाजन है जो नैतिक रूप से अस्वीकार्य है साथ ही समाज को कमजोर बनाता है।

वहीं दूसरी ओर समाजवादी दृष्टि लोगों के बीच सहकार्य और पारस्परिकता को महत्व देती है। सामाजिक परिवेश व्यक्ति के व्यवहार को बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अत: यह दृष्टि सामाजिक नीति द्वारा ऐसा वातावरण बनाने का प्रयास करती है जिसमें व्यक्ति का बहुमुखी विकास हो सके। इस अधिगम का लक्ष्य पूँजीवाद का रूपान्तरण है। समाजवादी अधिगम के अंतर्गत सामाजिक नीति एक नया, सहकार मूलक, समतापूर्ण समाज बनाने के लिए राज्य के हस्तक्षेप द्वारा पूँजीवादी व्यवस्था और वर्ग को चुनौती देती है। इसमें सभी का कल्याण और समानता प्राप्ति के लिए आय और संसाधनों के पुनर्वितरण पर जोर दिया जाता है।

2.3.4 स्त्रीवादी अधिगम

यह अधिगम काफी नया है। लेविस (1998) के अनुसार यह सोचना गलत है कि यह सामाजिक नीति के प्रति मात्र एक स्त्रीवादी उपागम है। इस उपागम में कई नजरिए है जो सामाजिक नीति निर्माण एवं कल्याण की मान्यताओं और व्यवहार को चुनौती देते हैं। यह उपागम स्त्री के नजरिए से सामाजिक मुद्दों की विशेषताओं को देखता है। लेविस के अनुसार सामाजिक नीतियों का स्त्रीवादी विश्लेषण 1970 के दशक में प्रारंभ हुआ। स्त्रीवादी उपागम कल्याणकारी राज्य और इसकी (पुरूष प्रधान) परम्परागत सामाजिक नीतियों कर आलोचक है। इसमें स्त्रियों का कल्याण हाशिए पर रखा जाता है। विभिन्न स्त्रीवादी विश्लेषणों का सार यह है कि सामाजिक नीतियों जेंडर भूमिकाओं में पुरूषवादी सोच लिए हुए होती है और 'पितृसत्तात्मक' कल्याण राज्य बनाती है। स्त्रीवादी उपागम सामाजिक नीतियों में स्त्री केंद्रित नीतियों के निर्माण का प्रस्ताव करता है जो सामाजिक क्षेत्र में उत्पन्न जेंडर असमानताओं को कम कर सके और स्त्री मुद्दों को हल कर सके।

2.3.5 नस्ल विरोधी अधिगम

नस्ल विरोध सामाजिक नीति का केंद्रीय लक्ष्य रहा है। इस उपागम के अनुसार व्यक्तिगत, संगठनात्मक एवं सामाजिक नस्लवाद का विरोध करने के लिए प्रभावपूर्ण सामाजिक नीतियों का सकारात्मक रूप में प्रयोग करना चाहिए। इस उपागम के मुख्य केंद्र में अश्वेत एवं अन्य अल्पसंख्यक नृजाति समुदाय की बेहतरी होती है। नस्लवाद को मुख्य सामाजिक समस्या के रूप में माना जाता है। इस उपागम का पूरा प्रयास नस्लवादी विचारधारा से उत्पन्न असमानता को समाप्त करने वाली नीतियों पर रहता है। नस्लवाद एक संरचनात्मक हिंसा है और समाज का हर हिस्सा उससे प्रभावित होता है। यह उपागम सामाजिक नीतियों के जरिए उन रास्तों को बदलता एवं चुनौती देता है जिससे नस्लवाद संस्थागत रूप लेता है।

हॉल और मिग्ले (2004 :28-36) ने कुछ और उपागमों का उल्लेख किया है-

1. राज्यवादी उपागम (स्टेटिस्ट एप्रोच)
2. उद्यम उपागम (एंटरप्राइज एप्रोच)
3. जनप्रचलित उपागम (पाप्युलिस्ट एप्रोच)
4. सर्वांगीण उपामग (हॉलिस्टिक प्रपोच)

1. राज्यवादी उपामग – सामाजिक नीति पर ऐतिहासिक रूप से राज्यवाद का गहरा प्रभाव रहा है। इस उपागम के मुताबिक राज्य सामाजिक नीति के जरिए आम आदमी की जिंदगी में बदलाव ला सकता है। एक बेहतर समाज में सभी लोग मिलजुल कर अपनी जरूरतों को पूरा करने में सहयोग करते हैं। यह उपागम इसी से प्रेरणा प्राप्तकरता है। समाज में लोग इसलिए सहकारिता, संस्थाएं, संघ इत्यादि बनाते है ताकि सभी संसाधनों को सभी की बेहतरी में लगाया जा सके।

2. उद्यम उपागम – यह उपागम वैयक्तिक स्वतंत्रता को महत्वपूर्ण मानता है। इसमें सामाजिक कल्याण में बाजार की भूमिका पर ज्यादा जोर दिया जाता है। सामाजिक नीति को बाजार अर्थव्यवस्था का पिछलग्गू होना चाहिए। सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति बाजार के जरिए होनी चाहिए। इस उपागम के अनुसार सरकारी सहायतालोगों को आलसी व गरीब बनाए रखती है अत: आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें सहायता देने के स्थान पर बाजार अर्थव्यवस्था में भागीदारी करने के लिए सक्षम बनाया जाना चाहिए।

3. जनप्रचलित उपागम – यह उपागम सामाजिक कल्याण में लोगों की भागीदारी और उनके साझा मूल्यों, विश्वासों व संस्कृतियों पर जोर देता है। इसमें समाज पर बहुत जोर दिया जाता है और माना जाता है कि एक बेहतर समाज में सभी के विश्वासों और जीवन स्तर को अभिव्यक्ति प्रदान की जाती है। यह एक तरह से समुदायवादी उपागम भी कहा जाता है। इसमें समुदाय द्वारा व्यक्तियों की क्षमता निर्माण एवं जिम्मेदारियों को मजबूत कर सामाजिक स्थितियों को मजबूत करने का मार्ग अपनाया जाता है। इस उपागम की सोच सामाजिक आंदोलनों को भी जन्म देती है जो सामाजिक व राजनीतिक मुद्दों के लिए जनसमर्थन जुटाती है। विकसित एवं विकासशील देशों में(विशेषत:) यह उपागम सामाजिक नीतियों मे जनकल्याण को प्रमुखता प्रदान करने का प्रयास करता है। यह समूह सामाजिक उपबंधों को व्यापक बनाने, सामाजिक सुधारों का समर्थन करने एवं गलत सामाजिक प्रक्रियाओं की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। ये सामाजिक कार्यकर्ताओं को सामाजिकअन्याय के विरोध में बोलने एवं खड़े होने के लिए प्रशिक्षित करते हैं।

4. सर्वांगीण उपागम – यह उपागम उपर्युक्त तीनों उपागमों को समाहित करता है। यह राज्यवादी उपागम के राज्य द्वारा आर्थिक एवं सामाजिक निवेश करने तथा निजी क्षेत्र को नियंत्रित करने की नीति अपनाता है। उद्यम उपागम के अनुसार सभी को समान अवसर उपलब्ध कराने का प्रयास करते हुए उत्पादक वर्ग बनने को प्रेरित किया जाता है । जन

समर्थित उपागम के अनुसार यह समुदाय गोलबंदी को बढ़ावा देता है ताकि लोग अपने परिवेश के प्रति सामाजिक न्याय के प्रति संवेदनशील हों। इसमें सामाजिक नीति बहुआयामी होती है।

2.4 सामाजिक नीति का प्रक्रिया प्रारूप

ESCWA, Social Development Division (2005:2) द्वारा सामाजिक नीति प्रक्रिया के आठ चरण बताए गए है –

1. समस्या एवं अवसरों की पहचान
2. मुद्दे को परिभाषित एवं प्राथमिकता प्रदान करना
3. मुद्दों को जनता के सामने रखना
4. लक्ष्य और उद्देश्य को परिभाषित करना एवं विकल्पों को पहचानना
5. विकल्पों का मूल्यांकन
6. विकल्पों का चयन
7. चयनित विकल्पों का क्रियान्वयन
8. कार्यक्रमों का मूल्यांकन

इस पूरी प्रक्रिया को निम्नानुसार चित्र द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है –

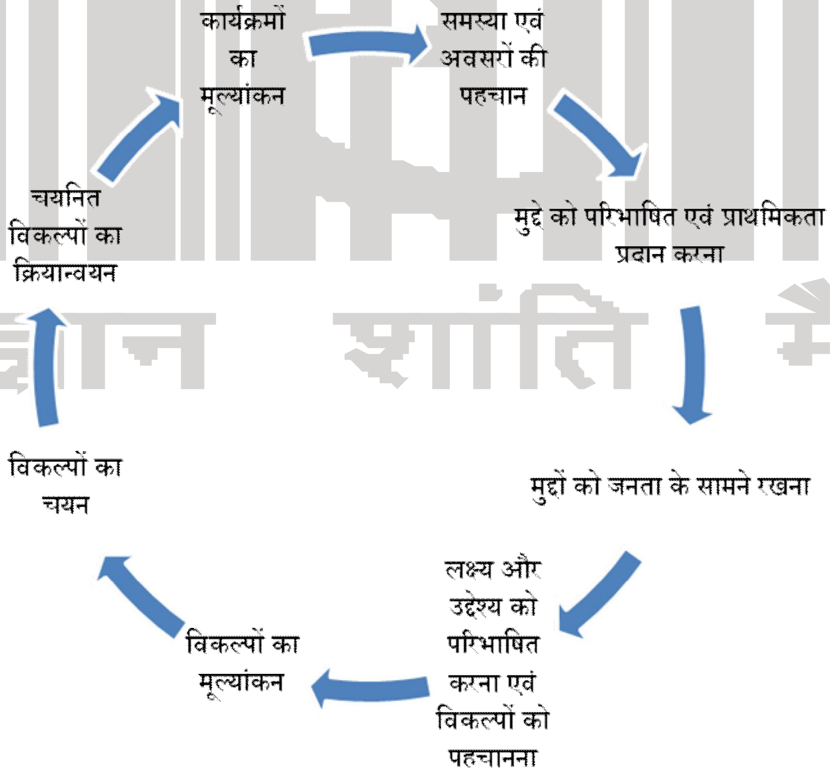

2.5 सारांश

सामाजिक नीति के विभिन्न प्रारूपों में यह बात केंद्र में है कि सभी लोगों का विकास सर्वांगीण तरीके से हो सके। विभिन्न विचार एवं दृष्टियां अपनेअपने तरीके से इस लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करती है। किसी प्रारूप में राज्य को, किसी प्रारूप में बाजार को, किसी प्रारूप में जनता को इस बात में केंद्रीय एजेंसी की भूमिका प्रदान की जाती है। सामाजिक नीति को लेकर सामने आए नवीन दृष्टिकोणों मसलन –स्त्रीवाद उपागम ने सामाजिक नीति और उसके क्रियान्वयन से जुड़े महत्वपूर्ण मुद्दों को जनविमर्श का मुद्दा बनाने में सफलता पायी है। वैश्वीकरण के दौर में राज्यकी कल्याणकारी भूमिका लगातार कम होने के परिदृश्य में सामाजिक नीति संबंधी बहस काफी महत्वपूर्ण हो गयी है। विभिन्न उपागम इसे प्रस्तुत करने का प्रयास करते है।

2.6 बोध प्रश्न

1. सामाजिक नीति के उपागमों पर प्रकाश डालिए।
2. सामाजिक नीति की प्रक्रिया को बताएं।
3. सामाजिक नीति और अर्थव्यवस्था के बीच संबंध को रेखांकित कीजिए।
4. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए-
    - राज्यवादी उपागम
    - नारीवादी उपागम
    - नस्लविरोधी उपागम
    - औद्योगिक पुनर्वितरण प्रारूप

2.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

- पाण्डेय, बालेश्वर (2013). *समाज कार्य : सिद्धांत एवं पद्धतियां* जयपुर : रावत पब्लिकेशंस.
- व.म.खु.वि. (2014). *सामाजिक कल्याण प्रशासन : नीति,नियोजन और विकास*. कोटा : व.म.खु.वि.
- सिंह, प्रो. सुरेंद्र, मिश्र, प्रो.पी.डी. , सिंह, डॉ. ए.एन. (2006). *भारत में सामाजिक नीति, नियोजन एवं विकास* . लखनऊ : देवा पब्लिकेशंस
- Adams,R.(2002). *Social Policy for Social Work*. New York : Palgrave.
- Alcock, P., Erskine, A. & May, M.(1998). *The Student's Companion to Social Policy*. Oxford: Blackwell.
- Bhartiya, A.K.(2000). *Introduction to Social Policy*. Lucknow : New Royal Book Company.
- Bhartiya, A.K. & Singh, D.K.(2009).*Social Policy in India*. Lucknow : New Royal Book Company.
- Devereux, S. & Cook,S.(2000). Does Social Policy meet Social Needs ?. *Institute of Development Studies Bulletin*, Vol.31, No.4 . pp 63-73.

- ESCWA(2005). Towards Integrated Social Policies in Arab Countries : frame work and comparative analysis. Social Development Division.
- Freeman, H.E. & Sherwood, C.C.(1970). *Social Research and Social Policy*. New York : Prentice Hall.
- Hall,A. & Midgley,J.(2004). Social Policy for Development. London : Sage.
- Kulkarni, P.D.(1959). Social Policy in India, *Indian Journal of Social Work*. Vol.30, No. 3, p. 2.
- Lewis (1998). Feminist Perspective in *The Student's Companion to Social Policy* by Alcock, P., Erskine, A. & May, M.. Oxford: Blackwell.
- Singh, Tarlok (1968). Social Policy. *Encyclopaedia of Social Work in India*. Vol. II, The Planning Commission. New Delhi: Govt. of India .
- Titmus, R.M.(1968). *Commitment to Welfare*. New York : Pantheon.
- UNRISD(United Nations Research Institute for Social Development)(2006). *Transformative Social Policy: Lessons from UNRISD Research*. UNRISD and Research Policy Brief no 5, Geneva: UNRISD.
- Yelja(1987). *Canadian Social Policy*. Waterloo : On Wlfrid Laurier University Press.

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई -3 सामाजिक नीति और भारतीय संविधान

रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 सामाजिक नीति और भारतीय संविधान

3.3 सारांश

3.4 बोध प्रश्न

3.5 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

1. सामाजिक नीति और भारतीय संविधान के परस्पर संबंध को जान सकेंगे।
2. भारतीय संविधान में वर्णित सामाजिक नीति संबंधी प्रावधानों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

सामाजिक नीति का लक्ष्य समाज में विद्यमान सभी लोगों का सर्वांगीण विकास होता है। इस नीति में बिना किसी भेदभाव के सभी व्यक्तियों को व्यक्तित्व विकास के अवसर प्रदान किए जाने का प्रावधान होता है ताकि व्यक्तिगत और परिणामत: सामूहिक जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि हो सके। एक सरकार के लिए आवश्यक है कि वह समाज की बेहतरी के लिए आर्थिक वृद्धि करें, सभी की न्यूनतम आवश्यकताएं पूरी करें, आय का न्यायपूर्ण वितरण करे, संघर्ष को कम से कम उत्पन्न होने दे एवं सामाजिक न्याय को बनाए रख सके। भारत सरकार ने इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए आजादी के प्रारंभ में नियोजित विकास का सहारा लिया ताकि सामाजिक एवं आर्थिक विकास में संतुलन हो सके। यह इसलिए भी आवश्यक था कि भारत ऐसे नव स्वतंत्रता प्राप्त देश में एक ओर पूँजी की कमी थी वहीं दूसरी ओर समाज में गंभीर असमानता विद्यमान थी। भारतीय संविधान निर्माताओं ने इस हकीकत को ध्यान में रखते हुए संविधान में सामाजिक विकास को सभी लोगों तक पहुँचाने के लिए विभिन्न प्रावधानों का उल्लेख किया। उनकी दृष्टि बिना किसी भेदभाव के हर व्यक्ति को भारतीय नागरिक होने के नाते मूलभूत अधिकार प्रदान करना और मूलभूत आवश्यकताएं पूरी करते हुए व्यक्तित्व विकास का अवसर प्रदान करना था।

3.2 सामाजिक नीति और भारतीय संविधान

संविधान जन हित में राज्य को संचालित करने का वैधानिक एवं नैतिक आधार प्रदान करता है। नागरिक होने के नाते हर व्यक्ति को मूल अधिकार प्राप्त होते हैं और व्यक्ति व समाज के विकास के लिए यथोचित परिवेश उपलब्ध कराना भी सरकार का दायित्व है। भारतीय संविधान विश्व के बेहतरीन संविधानों में से है। संविधान उन मार्गनिर्देशनों को तय करता है जिनके आधार पर विभिन्न नीतियां बनायी जाती है जो लोगों के कल्याण के लिए होती है। भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों (तृतीय खंड) एवं राज्य के नीति निर्देशक तत्वों (चतुर्थ खंड) में सामाजिक नीति का विस्तृत वर्णन किया गया है –

मौलिक अधिकारों (तृतीय खंड) के अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त अधिकारों (जो सामाजिक नीति को पुष्ट करते हैं) का उल्लेख करते हैं-

अनुच्छेद 14. विधि के समक्ष समता का अधिकार

राज्य, भारत के राज्यक्षेत्र में किसी व्यिक्त को विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।

अनुच्छेद 15. धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म-स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध-

(1)राज्य, किसी नागरिक के विरुद्ध धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म-स्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।

(2)कोई नागरिक धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म-स्थान या इनमें से किसी के आधार पर-

(क) दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश, या

(ख) पूर्णतः या भागतः राज्य-निधि से पोषित या साधारण जनता के प्रयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नान घाटों, सड़कों और सार्वजनिक समागम के स्थानों के उपयोग, के संबंध में किसी भी निर्योग्यता, दायित्व, निर्बन्धन या शर्त के अधीन नहीं होगा।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करनेसे निवारित नहीं करेगी।

(4) इस अनुच्छेद की या अनुच्छेद29 के खंड (2) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहींकरेगी।

अनुच्छेद 16. लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता-

(1)राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से संबंधित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी।

(2)राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के संबंध में केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्म-स्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर न तो कोई नागरिक अपात्र होगा और न उससे विभेद किया जाएगा।

अनुच्छेद 17. अस्पृश्यता का अंत-

अस्पृश्यता का अंत किया जाता है और उसका किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध किया जाता है। अस्पृश्यता से उपजी किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा।

अनुच्छेद **21. प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण-**

किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।

अनुच्छेद 21क. शिक्षा का अधिकार-

[राज्य, छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु वाले सभी बालकों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का ऐसी रीति में, जो राज्य विधि द्वारा, अवधारित करे, उपबंध करेगा।]

शोषण के विरुद्ध अधिकार

अनुच्छेद 23. मानव के दुर्व्यापार और बलात श्रम का प्रतिषेध-

(1) मानव का दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार का अन्य बलातश्रम प्रतिषिद्ध किया जाता है और इस उपबंध का कोई भी उल्लंघन अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा।

(2) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को सार्वजनिक प्रयोजनों के लिए अनिवार्य सेवा अधिरोपित करने से निवारित नहीं करेगी। ऐसी सेवा अधिरोपित करने में राज्य केवल धर्म, मूलवंश, जाति या वर्ग या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।

अनुच्छेद 24. कारखानों आदि में बालकों के नियोजन का प्रतिषेध-

चौदह वर्ष से कम आयु के किसी बालक को किसी कारखाने या खान में काम करने के लिए नियोजित नहीं किया जाएगा या किसी अन्य परिसंकटमय नियोजन में नहीं लगाया जाएगा।

धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार

अनुच्छेद 25. अंतकरण की और धर्म की अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है।

संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार

अनुच्छेद 29. अल्पसंख्यक-वर्गों के हितों का संरक्षण-

(1) भारत के राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी अनुभाग को, जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति है, उसे बनाए रखने का अधिकार होगा।

(2) राज्य द्वारा पोषित या राज्य-निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा या इनमें से किसी के आधार पर वंचित नहीं किया जाएगा।

राज्य के नीति निर्देशक तत्व (चतुर्थ खंड)

अनुच्छेद 38. राज्य लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाएगा-

[1] राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्राणित करे, भरसक प्रभावी रूप में स्थापना और संरक्षण करके लोक कल्याण की अभिवृद्धि का प्रयास करेगा।

(2) राज्य, विशिष्टतया, आय की असमानताओं को कम करने का प्रयास करेगा और न केवल व्यष्टियों के बीच बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच भी प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की असमानता समाप्त करने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद 39. राज्य द्वारा अनुसरणीय कुछ नीति तत्त्व-

राज्य अपनी नीति का, विशिष्टतया, इस प्रकार संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से-

(क) पुरुष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो;
(ख) समुदाय के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार बंटा हो जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो;
(ग) आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले जिससे धन और उत्पादन-साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी संकेंद्रण न हो;
(घ) पुरुषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो;
(ङ) पुरुष और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोज़गारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हों;
[(च) बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएं दी जाएं और बालकों और अल्पवय व्यक्तियों की शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से रक्षा की जाए।

अनुच्छेद **39क. समान न्याय और नि:शुल्क विधिक सहायता-**
राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि विधिक तंत्र इस प्रकार काम करे कि समान अवसर के आधार पर न्याय सुलभ हो और वह, विशिष्टतया, यह सुनिश्चित करने के लिए कि आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए, उपयुक्त विधान या स्कीम द्वारा या किसी अन्य रीति से नि:शुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा।

अनुच्छेद 41. कुछ दशाओं में काम, शिक्षा और लोक सहायता पाने का अधिकार-
राज्य अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर, काम पाने के, शिक्षा पाने के और बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और नि:शक्तता तथा अन्य अनर्ह अभाव की दशाओं में लोक सहायता पाने के अधिकार को प्राप्त कराने का प्रभावी उपबंध करेगा।

अनुच्छेद 42. काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता का उपबंध
राज्य काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिए और प्रसूति सहायता के लिए उपबंध करेगा।

अनुच्छेद 43. कर्मकारों के लिए निर्वाह मज़दूरी आदि-
राज्य, उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन द्वारा या किसी अन्य रति से कृषि के, उद्योग के या अन्य प्रकार के सभी कर्मकारों को काम, निर्वाह मज़दूरी, शिष्ट जीवनस्तर और अवकाश का संपूर्ण उपभोग सुनिश्चित करने वाली काम की दशाएं तथा सामाजिक और सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का प्रयास करेगा और विशिष्टतया ग्रामों में कुटीर उद्योगों को वैयक्तिक या सहकारी आधार पर बढ़ाने का प्रयास करेगा।

[43क. उद्योगों के प्रबंध में कर्मकारों का भाग लेना-
राज्य किसी उद्योग में लगे हुए उपक्रमों, स्थापनों या अन्य संगठनों के प्रबंध में कर्मकारों का भाग लेना सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त विधान द्वारा या किसी अन्य रीति से क़दम उठाएगा।][5]

अनुच्छेद 45. बालकों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का उपबंध-
राज्य, इस संविधान के प्रारंभ से दस वर्ष की अवधि के भीतर सभी बालकों को चौदह वर्ष की आयु पूरी करने तक नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने के लिए उपबंध करने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद 46. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की अभिवृद्धि-

राज्य, जनता के दुर्बल वर्गों के, विशिष्टतया, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों केशिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उसकी संरक्षा करेगा।

अनुच्छेद 47. पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊँचा करने तथा लोक स्वास्थ्य का सुधार करने का राज्य का कर्तव्य-

राज्य, अपने लोगों के पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊँचा करने और लोक स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों में मानेगा और राज्य, विशिष्टतया, मादक पेयों और स्वास्थ्य के लिए हानिकर औषधियों के, औषधीय प्रयोजनों से भिन्न, उपभोग का प्रतिषेध करने का प्रयास करेगा।

3.3 सारांश

भारतीय संविधान ने एक बहुलतावादी समाज में सामाजिक न्याय को प्राप्त करने हेतु विभिन्न प्रावधान उपलब्ध कराएं हैं। संविधान ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता को महत्ता प्रदान करते हुए मौलिक अधिकारों में सभी नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के समान अधिकार प्रदान किए हैं। अपने नागरिकों में किसी आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव स्वीकार नहीं किया है। राज्य की दृष्टि में सभी नागरिक और उनके हित समान है। ऐसा करते हुए भी संविधान ने राज्य को इस बात के लिए मार्ग प्रदान किया है कि समाज के वंचित तबके के लिए वह विशिष्ट व्यवस्थाएं कर सकता है। यह समानता का उल्लघंन नहीं अपितु वंचित तबकों का सशक्तिकरण कर उन्हेंसमाज में उनका यथोचित स्थान प्रदान करना है। संविधान नीति निर्देशक तत्वोंके माध्यम से राज्यों को यह मार्ग प्रदान करता है कि वे इस प्रकारकी नीतियां बनाएं जिनसे सभी का कल्याण सुनिश्चित हो सके। ऐसा करते हुए समाज के वंचित एवं हाशिए के वर्ग का समुचित ध्यान रखा जाए।

3.4 बोध प्रश्न

1. सामाजिक नीति एवं संविधान के आपसी संबंधों पर प्रकाश डालिए।
2. राज्य के नीति निर्देशक तत्वों को बताइए।
3. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-
    1. अनुच्छेद 39
    2. अनुच्छेद 45
    3. अनुच्छेद 47
    4. अनुच्छेद 39 क

3.5 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ–

- कश्यप, सुभाष(2004). *हमारा संविधान.* दिल्ली : नेशनल बुक ट्रस्ट.
- पाण्डेय, बालेश्वर (2013). *समाज कार्य : सिद्धांत एवं पद्धतियां* जयपुर : रावत पब्लिकेशंस.

- व.म.खु.वि. (2014). *सामाजिक कल्याण प्रशासन : नीति,नियोजन और विकास*. कोटा : व.म.खु.वि.
- सिंह, प्रो. सुरेंद्र, मिश्र, प्रो.पी.डी. , सिंह, डॉ. ए.एन. (2006). *भारत में सामाजिक नीति, नियोजन एवं विकास* . लखनऊ : देवा पब्लिकेशंस
- Bhartiya, A.K.(2000). *Introduction to Social Policy*. Lucknow : New Royal Book Company.
- Bhartiya, A.K. & Singh, D.K.(2009).*Social Policy in India*. Lucknow : New Royal Book Company.
- Kulkarni, P.D.(1959). Social Policy in India, *Indian Journal of Social Work*. Vol.30, No. 3, p. 2.
- Singh, Tarlok (1968). Social Policy. *Encyclopaedia of Social Work in India*. Vol. II, The Planning Commission. New Delhi: Govt. of India .
- https://hi.wikipedia.org/wiki/भारतीय_संविधान
- http://india.gov.in/hi/my-government/constitution-india/constitution-india-full-text#p4

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई - 4 भारत में सामाजिक नीति

रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 भारत में सामाजिक नीति
4.2.1 राष्ट्रीय बाल नीति
4.2.2 वृद्ध जनों के लिए राष्ट्रीय नीति
4.2.3 स्वास्थ्य नीति
4.2.4 जनसंख्या नीति
4.2.5 पोषण नीति
4.2.6 शिक्षा नीति
4.2.7 आवास नीति
4.3 सारांश
4.4 बोध प्रश्न
4.5 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप –

- भारत में सामाजिक नीति संबंधी कार्यक्रमों की जानकारी प्राप्तकर सकेंगे
- सामाजिक नीति कार्यक्रमों से जुड़े महत्पूर्ण पक्षों को जान सकेंगे

4.1 प्रस्तावना

भारतीय संविधान में उल्लिखित सामाजिक नीति के प्रावधान हर सरकार को मार्गनिर्देशन उपलब्ध कराते हैं जिससे वह सामाजिक जीवन में उत्पन्न असमानता, भेदभाव एवं अन्याय को समाप्त कर सके। सामाजिक नीति अपने मूल रूप में एक शोषण रहित एवं समतामूलक समाज की स्थापना के प्रति प्रतिबद्ध है। इसका जोर सामाजिक एवं आर्थिक विकास को परस्पर पूरक बनाना है। यह ऐसे विकास को प्रोत्साहित करती है जो समावेशी और समतापूर्ण हो। इसका लक्ष्य हर व्यक्ति का बहुमुखी विकास और कल्याण है।

भारत की आजादी के बाद नीति-निर्माताओं ने संविधान के उद्देश्योंऔर लक्ष्यों को पूरा करने के लिए विभिन्न सामाजिक नीतियोंका निर्माण किया। इन नीतियों का उद्देश्य उन विभिन्न बाधाओं, कुरीतियों, असमान वितरण व्यवस्थाओं एवं शोषण को समाप्तकरना था जो किसी समाज की बेहतरी को रोकते हैं। किसी भी राष्ट्र के विकास में शिक्षा, स्वास्थ्य,पोषण, आवास, परिवहन, रोजगार आदि क्षेत्र महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन क्षेत्रों का विकास न केवल व्यक्तियों को सक्षम बनाता है अपितु सामूहिक रूप से राष्ट्रनिर्माण की प्रक्रिया में भी योगदान करते हैं।

4.2 भारत में सामाजिक नीति

सामाजिक नीति के जरिए सभी को व्यक्तित्व विकास के अवसर समान रूप से उपलब्ध कराए जाते हैं जिससे सशक्त समाज का निर्माण हो सके। सामाजिक नीति विभिन्न भेदभावों, बाधाओं और अन्यायों को समाप्त कर समाज को एकजुट रखते हुए उन्नति का मार्ग प्रशस्त करती है। परस्परावलंबन और सहयोग को प्रोत्साहित कर सामाजिक नीति सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति करती है। सामाजिक न्याय की प्राप्ति में सामाजिक नीति का महत्वपूर्ण योगदान होता है। भारत में समय-समय पर विभिन्न सामाजिक नीतियों को अपनाया गया उनमें से कुछ प्रमुख नीतियों का परिचय हम प्राप्त करेंगे –

4.2.1 राष्ट्रीय बाल नीति

आज के बालक कल के नागरिक हैं। अत: उनका सर्वांगीण विकास किसी भी राष्ट्र के लिए काफी महत्वपूर्ण होता है। बाल विकास से तात्पर्य बच्चे-बच्चियों का शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं भावनात्मक विकास करना होता है जिससे उनका सामाजिक समायोजन बेहतर तरीके से हो सके। उनका विकास अपने आसपास के परिवेश के साथ सौहार्दपूर्ण तरीके से हो सके।

भारत में राष्ट्रीय बाल नीति 22 अगस्त 1974 को स्वीकार की गयी। जिसमें राज्य का उत्तरदायित्व माना गया कि वह जन्मपूर्व एवं पश्चात बच्चे – बच्चियों के विकास हेतु पर्याप्त एवं समुचित सेवाएं उपलब्ध कराएगा। इस नीति का उद्देश्य देश में हर बच्चे/बच्ची के समग्रतापूर्ण विकास को सुनिश्चित करने की राज्य की वचनबद्धता को दर्शाती है। यह राष्ट्र के बच्चे/बच्चियों को अत्यंत मूल्यवान परिसंपत्तिमानती है और इस तरह से राष्ट्रीय योजनाओं में उनके महत्व को उजागर करती है। इस नीति में निहित आकांक्षाएं समानता के अवसर और समाजिक न्याय के सिद्धांतों पर आधारित हैं। इस नीति का उद्देश्य बच्चे/बच्चियों के लिए विभिन्न संवैधानिक प्रावधानों और राष्ट्र संघ बाल अधिकार घोषणा, 1959 के अधिदेश से मेल खाता है।

राज्य में जन्म से पूर्व और जन्म के बाद तक विकास-काल के दौरान बच्चे/बच्चियों को यथोचित सेवाएं प्रदान करने का भार है ताकि उनका पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास सुनिश्चित किया जा सके। राज्य ऐसी सेवाओं के दायरे का क्रमिक रूप सेविस्तार करेगा जिससे कि उपयुक्त समय में देश के सभी बच्चे/बच्चियां अपने संतुलित विकास की अनुकूलतम स्थितियों का उपयोग कर सकें।

इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए यह नीति बहुआयामी और बहुक्षेत्रीय उपायों की परिकल्पना करती है यह व्यापक स्वास्थ्य एवं पोषण सेवाएं 14 वर्ष तक के सभी बच्चे/बच्चियों को नि:शुल्क शिक्षा प्रदान करने और साथ ही बच्चे/बच्चियों के चहुंमुखी विकास के लिए अन्य प्रकार के मनोरंजनात्मक कार्यकलापों सहित शारीरिक शिक्षा प्रदान करने की पैरवी करती है। साथ ही यह नीति उन बच्चे/बच्चियों पर विशेष ध्यान देने का आवाहन करती है जो बच्चे/बच्चियां समाज के कमजोर तबकों के, विकलांग हैं और सामाजिक रूपसे पिछड़े हैं। इनके अलावा यह नीति बच्चे/बच्चियों की उपेक्षा, दुराचार और क्रूरता से रक्षा का प्रयास भी करती है।

इस नीति का एक उल्लेखनीय लक्षण बच्चे/बच्चियों से संबंधित सभी आवश्यक सेवाओं के उपयुक्त नियोजन, समीक्षा, समन्वयन और विस्तार के लिए राष्ट्रीय बाल बोर्ड का गठन है। नीति इस बात को भी सामने रखती है कि स्वास्थ्य, पोषण और शिक्षा से संबंधित कार्यक्रम तैयार करतेसमय बच्चे/बच्चियों की ज़रूरतों को प्राथमिकता प्रदान

की जायेगी। इसके अलावा यह उपयुक्त कानूनी और प्रशासनिक सहायता के साथ नीति का लक्ष्य हासिल करने में स्वैच्छिक संस्थाओं और जन भागीदारी के योगदान को भी विस्तार से प्रस्तुत करती है।

सन 2001 में बाल विकास से संबंधित जीने, स्वास्थ्य, पोषण, खेलने, शिक्षा, आर्थिक शोषण से संरक्षण प्राप्त करने , समानता प्राप्त करने के अधिकार को स्वीकार किया गया।

राष्ट्रीय बाल नीति 2012 जो 2013 में लागू हुई की मुख्य बातें निम्नानुसार है –

- केंद्रीय मंत्रिमंडलीय समिति ने राष्ट्रीय बाल नीति 2012 को 18 अप्रैल 2013 को स्वीकृति प्रदान की।
- यह नीति 18 वर्ष से कम उम्र के देश के सभी लोगों को बच्चे/बच्चियों के रूप में मान्यता देती है क्योंकि बचपन तथा उस दौरान विकसित मूल्य किसी भी व्यक्ति के जीवन का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण भाग होता है इसलिए बच्चे/बच्चियों की सुरक्षा तथा उनके समन्वित विकास हेतु दीर्घकालीन, संवहनीय, बहुस्तरीय, एकीकृत तथा समावेशी दृष्टिकोण की आवश्यकता है।
- यह नीतिदेश के सभी बच्चे/बच्चियों के अधिकारों की प्राप्ति हेतु सरकार के संकल्पकी पुष्टि करती है।
- इस नीति के मुख्य प्रावधानों में सभी बच्चे/बच्चियों को स्वस्थ वातावरण में जीने का अधिकार, उत्तरजीविता विकास, शिक्षा, सुरक्षा एवं भागीदारी तथा बिना किसी भेदभाव के सभी बच्चेबच्चियों को समान अधिकार, बच्चे/ बच्चियों को प्रभावित करने वाले सभी कार्यों और निर्णयों में प्रारंभिक आवश्यकता के रूप में बच्चे/बच्चियों का बेहतरीन हित तथा उनके बहुमुखी विकास के लिए सबसे अनुकूल बात के रूप में पारिवारिक महौल प्रदान करना शामिल है।
- बच्चे/बच्चियों के समावेशी विकास हेतु बहुस्तरीय, अंतर्संबंधित एवं सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता होती है तथा इसे ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय बाल नीति, 2012 के निम्नलिखित प्रमुख लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं –

❖ प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों और स्तरों में उद्देश्यपूर्ण रूपांतरण एवं सशक्तसमन्वय

❖ सभी हितधारकों के मध्य सक्रिय संलग्नता और भागीदारी

❖ व्यापक एवं विश्वसनीय ज्ञान आधार की स्थापना

❖ पर्याप्त संसाधनोका प्रावधान तथा

❖ बच्चों के लिए एवं बच्चों के साथ काम करने वाले सभी लोगों कोपूरी जानकारी उपलब्ध कराना एवं उनकी क्षमता का विकास करना है।

- इस नीति को लागू करने के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना विकसित की जाएगी। इस नीति को लागू करने की प्रगति की निगरानी के लिए राष्ट्रीय समन्वय एवं कार्रवाई समूह बनाया जाएगा।
- राज्य एवं जिला स्तर भी ऐसी ही योजनाएं और समन्वय एवं कार्रवाई समूह बनाए जाएंगे। राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग और राज्य बाल अधिकार संरक्षण आयोगों को यह सुनिश्चित करना होगा कि हर स्तर पर सभी क्षेत्रों में इस नीति के सिद्धांतों का आदर किया जाए।
- हर पांच साल में इस नीति की समीक्षा का भी प्रावधान किया गया है।

- महिला एवं बाल विकास मंत्रालय इस नीति के अवलोकन और कार्यान्वयन में समन्वय करने के लिए नोडल मंत्रालय होगा तथा समीक्षा प्रक्रिया का नेतृत्व करेगा।

4.2.2 वृद्ध जनों के लिए राष्ट्रीय नीति

किसी भी समाज में वृद्धावस्था उस समाज के अनुभवों का पूँजीभूत रूप होती है।हर व्यक्ति को इस अवस्था से गुजरना होता है। वह समाज श्रेष्ठ है जो समाज के इस समूह से लाभ प्राप्त करता है और उन्हें वे सुविधाएं मुहैया कराता है जो उनके सम्मानजनक जीवन यापन के लिए आवश्यक है। भारत सरकार ने 1999 में राष्ट्रीय वृद्धजन नीति को अपनाया और वर्ष 2000 को वृद्ध व्यक्तियों का राष्ट्रीय वर्ष घोषित किया।

राष्ट्रीय वृद्धजन नीति, 1999:

राष्ट्रीय वृद्धजन नीति वृद्धजनों और विशेषकर निर्धन और निराश्रय लोगों की जरूरतों, सरोकारों और मुद्दों पर केंद्रित है। इसका उद्देश्य समाज में उनके यथोचित स्थान का उपयोग करने और उद्देश्यपूर्ण रूप से, गरिमा और शांति के साथ जीने के उनके अधिकार को मजबूती प्रदान करना है।

यह नीति वृद्ध होती आबादी के निहितार्थों को स्वीकार करती है तथा समाज के सामाजिक-सांस्कृतिक ताने-बाने में तेजी से होने वाले बदलावों -औद्योगीकरण, शहरीकरण, शिक्षा और मूल्यों तथा जीवन शैलियों में बदलाव के कारण वृद्धजनों की असुरक्षाओं और असहायताओं को स्पष्ट करती है।

यह नीति वृद्धजनों की वित्तीय सुरक्षा, स्वास्थ्य देखरेख, आश्रय और कल्याण संबंधी तथा अन्य जरूरतों के लिए सहायता पर विचार करती है। यह वृद्धजनों के पक्ष में सकारात्मक कार्रवाई की जरूरत को मान्यता देती है; यह आयु-समेकित समाज को महत्व देती है और वृद्धजनों को एक संसाधन मानकर चलती है। यह वृद्धजनों के सशक्तिकरण का समर्थन करती है ताकि वे अपने जीवन पर बेहतर नियंत्रण हासिल कर सकें और सामाजिक विकास में समान साझेदारों के अपने को प्रभावित करने वाले मामलों में तथा अन्य मुद्दों पर निर्णय प्रक्रिया में भाग ले सकें। इसमें नीति द्वारा निर्धारित आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए राज्य,नागरिकों, परिवारों, समुदायों और सामाजिक संस्थाओं के बीच सहयोगपूर्ण साझेदारी का आह्वान कियागया है। नीति में शामिल हस्तक्षेप के मुख्य क्षेत्रों और कार्य रणनीतियों में वृद्धजनों की वित्तीय सुरक्षा, स्वास्थ्य देखरेख और पोषण, आश्रय, शिक्षा, कल्याण और जीवन और संपदा की रक्षा शामिल है। कार्य के अन्य क्षेत्र इस प्रकार हैं: विभिन्न लाभों के लिए वृद्धजनों को पहचान पत्र जारी करना, यात्रा के सभी साधनों में किराये में रियायत; स्थानीय सार्वजनिक प्रशासन में सीटों का आरक्षण; आसानी से प्रवेश और विकास के सार्वजनिक वाहनों के डिज़ाइन में सुधार।

इस नीति के कार्यान्वयन के लिए सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय की अगुवाई में मई 1999 में एक राष्ट्रीय वृद्धजन परिषद (एनसीओप) का गठन किया गया। एनसीओपी एक उच्चतम न्यास है जो वृद्धजनों के लिए नीति और कार्यक्रमों के सूत्रीकरण और कार्यान्वयन में सरकार को परामर्श देने की भूमिका निभाती है।यह नीति केंद्र और राज्य सरकारों के समवर्ती दायित्व के रूप में सामाजिक सुरक्षा का अधिदेश देती है।

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरण पोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007: राष्ट्रीय वृद्धजन नीति के विस्तार के रूप में अधिनियमित माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरण-पोषण और कल्याण अधिनियम, 2007 वृद्धजनों के कल्याण और सहायता के लिए वृद्धाश्रमों की स्थापना का प्रावधान करता है।

इस अधिनियम का उद्देश्य संविधान के अंतर्गत मान्य माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों के भरण-पोषण और कल्याण के लिए अधिक प्रभावकारी प्रावधान सुनिश्चित करना है। यह वरिष्ठ नागरिक को भारत के किसी ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित करता है जिसकी आयु 60 वर्ष या अधिक की हो। माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों के लिए ज़रूरत-आधारित भरण-पोषण और कल्याण सुनिश्चित करने के लिए यह अधिनियम निम्नलिखित प्रावधान करता है:

- बच्चों/संबंधियों द्वारा माता-पिता/वरिष्ठ नागरिकों का अनिवार्य भरण-पोषण जिसके अंतर्गत बच्चों के लिए अपने माता-पिता की देखरेख करना अनिवार्य होगा; इस प्रावधान को न्यायाधिकरणों के माध्यम से प्रवर्तित किया जायेगा;
- संबंधियों द्वारा उपेक्षा के मामले में वरिष्ठ नागरिकों द्वारा संपत्ति के हस्तांतरण का प्रतिसंहरण (रिवोकेशन);
- वरिष्ठ नागरिकों को त्यागने के मामले में जुर्माना;
- 'दीनहीन वरिष्ठ नागरिकों' के लिए वृद्धाश्रमों की स्थापना; और
- वरिष्ठ नागरिकों के लिए पर्याप्त चिकित्सा सुविधाएं और सुरक्षा।

इस अधिनियम की धारा 7 में राज्य सरकारों को भरण-पोषण के मामलों के अधिकार क्षेत्र और निबटान के लिए राज्य स्तर पर भरण-पोषण न्यायाधिकरण गठित करने का अधिकार दिया गया है; और भाग 15 में भरण-पोषण न्यायाधिकरण के आदेश के विरुद्ध अपीलों की सुनवाई के लिए अपील न्यायाधिकरण की स्थापना का प्रावधान किया गया है। यह अधिनियम राज्य सरकार को चरणबद्ध तरीके से क्षमतानुरूप हर जिले में वृद्धाश्रमों की स्थापना का दायित्व भी सौंपता है। इसके अलावा यह राज्य सरकार को इस अधिनियम के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु नियम बनाने की शक्तियां भी प्रदान करता है।

इस कानून के अंतर्गत जिला समाज कल्याण अधिकारी या किसी भी ऐसे अधिकारी को जो जिला समाज कल्याण अधिकारी के पद से नीचे के पद का न हो, किसी भी माता-पिता या वरिष्ठ नागरिक का प्रतिनिधित्व करने का और संतान द्वारा या न्यायसम्मत देखरेखकर्ता द्वारा भरण-पोषण या भरण-पोषण सुनिश्चित करने के अधिकार के साथ भरण-पोषण अधिकारी पदनामित करने के लिए कहता है। इस अधिकारी को इस अधिनियम के अंतर्गत गठित भरण-पोषण न्यायाधिकरण या अपील न्यायाधिकरण के सामने वरिष्ठ नागरिक का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार भी होता है।

हिमांशु रथ (2013) ने अपने एक महत्वपूर्ण आलेख में भारत में बुजुर्गों के लिए कल्याण योजनाओं का विस्तार से वर्णन किया है। जिन्हें निम्नानुसार बताया जा सकता है –

भारत में वयोवृद्ध लोगों के लिए प्रमुख सरकारी नीतियां/कार्यक्रम/योजनाएं

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार

वयोवृद्ध लोगों से संबंधित राष्ट्रीय नीति, 1999

अभिभावकों और वरिष्ठ नागरिकों के गुजारे और कल्याण से संबंधित कानून, 2007

अनुदान सहायता योजनाएं

'वयोवृद्ध लोगों के लिए एकीकृत कार्यक्रम' नाम की योजना से गैर-सरकारी संगठनों को वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इस योजना के अंतर्गत मुख्यकार्यक्रम निम्नानुसार हैं-

- वृद्ध सदनों की स्थापना और रख-रखाव
- विश्राम सदनों और निरंतर देखभाल सदनों का रख-रखाव
- बुजुर्गों के लिए बहुसेवा केन्द्र चलाना
- चलते-फिरते चिकित्सा यूनिटों का रख-रखाव
- मानसिक स्वास्थ्यय देखभाल और विशेष देखभाल
- हेल्पलाइन और परामर्श केन्द्र
- वृद्धजनों की देखभाल करने वालों को प्रशिक्षण देना
- वृद्धजनों के कल्याण के प्रति जागरूकता पैदा करना और उनकी देखभाल करने वाले लोगों की व्यवस्था करना
- वरिष्ठ नागरिक समूहों/एसोसिएशनों का गठन करना
- इस योजना के अंतर्गत अन्य कोई उपयुक्त गतिविधि चलाना

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार

वृद्ध देखभाल केन्द्रों की स्थापना

विधि एवं कानून मंत्रालय, भारत सरकार

केन्द्रं सरकार के विधि एवं कानून मंत्रालय ने भी वरिष्ठनागरिकों को निशुल्क कानूनी सहायता देने का प्रस्ताव दिया है।

गृह मंत्रालय: भारत सरकार

सरकारी सहायता प्राप्त विभिन्न योजनाओं तकइनकी पहुंच बनाने के लिए वरिष्ठनागरिकों को स्मार्ट परिचय पहचान पत्र।

श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार

गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले वरिष्ठ नागरिकों को राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के तहत बीमा सुरक्षा।

कार्मिक एवं पेंशन मंत्रालय

कार्मिक एवं पेंशनर कल्याण विभाग ने पेंशनरों को सेवानिवृति लाभ दिलाने के लिए कई प्रयास शुरू किए हैं।

वरिष्ठ नागरिकों के लिए अदालतों में छूट/सुविधाएं

वृद्धजनों से संबधित केसों को प्राथमिकता और उनका त्वरित निपटारा सुनिश्चित करना

सूचना का अधिकार कानून (आरटीआई कानून)

वरिष्ठ नागरिकों की ओर से आरटीआई कानून के तहत दूसरी अपीलों की सुनवाई उच्च प्राथमिकता के आधार पर।

स्वास्थ्य देखभाल सेवा :

- अस्पतालों एवं स्वास्थ्य देखभाल केन्द्रों में वरिष्ठ नागरिकों के लिए अलग से लाइनों की व्यवस्था।
- कुछ राज्य सरकारों ने सरकारी अस्पतालों में वरिष्ठ नागरिकों के लिए विशेष क्लिनिकों की स्थापना की है।

वित्त एव कराधान :

वरिष्ठ नागरिकों के लिए टैक्सो में विशेष छूट तथा अन्य प्रावधान।

बैंकिंग एवं डाकघर

- वरिष्ठ नागरिकों को उनकी बचतों पर अधिक ब्याज दर

- कम बैंकिंग शुल्क

यातायात :

रेल यात्रा :

- सभी वरिष्ठ नागरिकों के लिए यात्रा 30 प्रतिशत सस्ती
- किराए में 50 प्रतिशत छूट
- वरिष्ठ नागरिकों के लिए अलग काउंटर/पंक्तियां

विमान यात्रा :

- इंडियन एयरलाइंस की साधारण श्रेणी के किराए में40 से 50 प्रतिशत छूट।
- वरिष्ठ नागरिकों को अन्य विमान सेवाओं द्वारा इसी तरह की छूटें।

सड़क यातायात :

विभिन्न राज्य परिवहन निगमों में आरक्षण एवं छूट।

4.2.3 स्वास्थ्य नीति

भारत में स्वास्थ्य नीति का इतिहास काफी पुराना है। मिश्रित अर्थव्यवस्था के मार्ग का चयन करने के उपरांत सरकार ने प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं एवं उससे जुड़ी आधारभूत संरचना के विकास पर बहुत जोर दिया। आजादी से पूर्व बनी भोर समिति(1946) ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट किया था कि कोई भी व्यक्ति निवारक या उपचारात्मक (प्रीवेंटिव या क्यूरेटिव) चिकित्सा सुविधा से भुगतान क्षमता न होने के कारण वंचित नही होना चाहिये।

प्रथम दो पंचवर्षीय योजना की समीक्षा व भविष्य की योजना के लिये 1959 मे मुदालियर समिति गठित की गई थी, मुदालियर समिति ने ग्रामीण क्षेत्र मे डाक्टरों व चिकित्साकर्मियों को आकर्षित करने के लिये सेवाशर्तो मे सुधार के प्रस्ताव दिये थे। 1963 मे चढ्ढा कमेटी ने स्वास्थ्य व परिवार नियोजन सेवाओं को एकीकृत करने व प्रति10000 की आबादी पर एक पुरूष व एक महिला बहुउद्देशीय स्वास्थ्यकर्मी की नियुक्ति की अनुशंसा की थी। 1973 में करतारसिन्ह कमेटी ने भी एकउद्देशीय महिला व पुरूष स्वास्थ्यकर्मी को बहुउद्देशीय में रूपांतरित कर व ग्रामीण प्राथमिक हेल्थ केअर से एकीकृत कर प्रति 10 से 12 हजार ग्रामीण आबादी पर एक बहुउद्देशीय स्वास्थकर्मी की नियुक्ति की अनुशंसा की थी।

1977 मे श्रीवास्तव समिति ने ग्रामीण आधार वाले युवाओ को तीन माह का प्रशिक्षण देकर सामुदायिक स्वास्थकर्मी के नये केडर बनाने की अनुशंसा की थी। 1978 की विश्व स्वास्थ्य असेम्बली की " अल्मा अता घोषणा " जिसमे सबके लिये वर्ष 2000 तक स्वास्थ्य का लक्ष्य निर्धारित किया गया था तथा विभिन्न समितियो की अनुशंसाओ के आधार पर 1983 मे देश की पहली स्वास्थ्य नीति घोषित की गई थी. विकेंद्रित हेल्थ केअर प्रणाली, कम खर्चीली स्वास्थ्य सेवाएं, गैरव्यवसायिक दृष्टिकोण व सामुदायिक भागीदारी पहली स्वास्थ्य नीति के आधार तत्व थे तथा प्रति 30000 की आबादी पर एक प्राथमिक चिकित्सा केंद्र व 5000 की आबादी पर एक उपकेंद्र का लक्ष्य रखा गया था। (उपाध्याय:2015)

भारत में राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति

1983 में राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति की घोषणा की गयी जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं का सुदृढ़ीकरण करके सबके लिए स्वास्थ्य का लक्ष्य प्राप्त करना निर्धारित किया गया। जिसके अंतर्गत स्वास्थ्य सेवाओं का विकेंद्रीकरण, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य तथा भारतीय चिकित्सा पद्धतियों के मध्य समन्वय, सर्वव्यापी टीकाकरण, मातृ

शिशु तथा स्कूल स्वास्थ्य सेवाओं परनियंत्रण तथा स्वास्थ्य शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया। विगत50 वर्षों में ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं के सुदृढ़ ढांचे के चलते अनेकस्वास्थ्य समस्याओं से मुक्ति मिली है जिसमें प्लेग, हैजा एवं चेचक काउन्मूलन तथा मलेरिया, इंफ्लूएंज़ा, पोलियो एवं कुकर खांसी पर नियंत्रण प्रमुखहैं। इसके अलावा मृत्यु दर में कमी, औसत आयु में वृद्धि स्वास्थ्य स्तर में उन्नति भी हुई है।वर्ष 1983 में निर्मित राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में भारतीय स्वास्थ्य क्षेत्र के संबंध में निर्धारक तत्वों में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए। 1983 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में वार्णित कुछ नीतिगत पहलों से संतोषजनक परिणाम निकले हैं। किन्तु अन्य अनेक क्षेत्रों में परिणाम आशा के अनुरूप नहीं रहे। 1983 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में कई नीतियां प्रतिपादित की गई थी।

इस नीति के अन्तर्गत महत्वपूर्ण पहल के विषय थे –

प्रथम, बृहत प्राथमिक स्वास्थ्यदेखरेख सेवा के केन्द्र दूर-दूर तक स्थापित करने का एक चरणबद्ध समयबद्ध कार्यक्रम, जो प्रसार और स्वास्थ्य शिक्षा से जुड़ा हो, इस जमीनी हकीकत के संदर्भ में तैयार किया जाए कि प्रारंभिक स्वास्थ्य समस्याएं स्वयं लोगोंद्वारा हल की जा सकें।

दूसरे, समुचित ज्ञान, सादा कौशल और अपेक्षित प्रौद्योगिकी रखने वाले स्वास्थ्य स्वयंसेवियों के जरिए मध्यस्थता।

तीसरे, यह सुनिश्चित करने के लिए कि ऊंचे पदाधिकारियों पर रोगियों का भार उन लोगों द्वारा अनावश्यक रूप से न डाला जाए, जिनका इलाज छोटे स्तर पर किया जा सकता है, सुव्यवस्थित रूप से तैयार रेफरल तंत्र की स्थापना और अंत में, स्वास्थ्य सेवा में निजी।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2002

भारत सरकार ने 1983 में राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति की घोषणा करने के 18 साल बाद राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति की घोषणा वर्ष 2002 में की। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति का मुख्य उद्देश्य सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था के विकेन्द्रीकरण की पहुंच बढ़ाकरदेश के जन-साधारण के बीच बेहतर स्वास्थ्य के स्वीकार्य मानक प्राप्त करना है। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कमी वाले क्षेत्रों में नयी सुविधाएं जुटाने और वर्तमान संस्थानों में उपलब्ध सुविधाओं के स्तर में सुधार लाने हेतु एक योजना बनाई गई है। इस नीति के अंतर्गत सभी को समानस्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने पर बल दिया जाएगा। केंद्र सरकार के योगदान द्वारा कुल सार्वजनिक स्वास्थ्य निवेश में वृद्धि पर विशेष जोर दिया जाएगा। इस कदम से सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रशासन को राज्य स्तर पर प्रभावी सेवाएं प्रदान करने की क्षमता में दृढ़ता आयेगी। स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए निजी क्षेत्र से और अधिक सहयोग लिया जाएगा, विशेषकर उस आय वर्ग के लिए जो इन सेवाओं के लिए धन व्यय कर सकते हैं।

सार्वजनिक स्वास्थ्य निवेश की अभिवृद्धि में केंद्र सरकार की मुख्य भूमिका रहेगी। स्वास्थ्य क्षेत्र व्यय में सकलघरेलू उत्पाद का 5.2 प्रतिशत से बढ़ाकर 6 प्रतिशत करने की योजना बनाई गई है, जिसमें वर्ष 2010 तक सार्वजनिक स्वास्थ्य निवेश द्वारा सकल घरेलू उत्पाद का 2 प्रतिशत (मौजूदा 0.9 प्रतिशत) योगदान रहेगा। केंद्र व राज्य सरकार का योगदान वर्ष 2010 तक कुल बजट का मौजूदा 15 प्रतिशत और 5.5 प्रतिशत से बढ़कर क्रमशः 25 प्रतिशत और 8 प्रतिशत होने की आशा व्यक्त की गई है।

राष्ट्रीय नीति में मौजूदा प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधाओं को बढ़ाने और मजबूत करने के लिए एकरूप/न्याय संगत प्राथमिकता देने पर विशेष बल दिया गया है। इसका प्रस्ताव प्राथमिकस्वास्थ्य क्षेत्र में कुल सार्वजनिक स्वास्थ्य निवेश का 55 प्रतिशत बजट में वृद्धि के माध्यम से किया गया केंद्र द्वारा वित्तीय योगदान के माध्यमसे आवश्यक दवाओं के व्यवस्थापन की नई अवधारणा भी शामिल की गई है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों को राज्य स्तर से विकेंद्रीकृत सार्वजनिक स्वास्थ्य तंत्र और राज्य व जिला स्तरके स्वायत निकायों द्वारा क्रियान्वयन पर बल दिया गया है। इस संबंध मेंराष्ट्रीय नीति में देश के सार्वजनिक स्वास्थ्य क्षेत्र में केंद्र व राज्य सरकार की भूमिका को परिभाषित किया गया है। नीति में सार्वजनिक स्वास्थ्य ढांचे और प्राथमिक स्तर पर निर्दिष्ट सभी स्वास्थ्य कार्यक्रमों के अधिक-से-अधिक उपयोग और धीरे-धीरे उन्हें एकल कार्यक्षेत्र प्रशासन में एकाकार करने पर बल दिया गया है।

इसके साथ ही नीति में विशेष आवश्यकता वाले क्षेत्रों और अनेक मुद्दों को जोड़ा गया है। इसमें स्वास्थ्य क्षेत्र में भागीदार तमाम समूहों की अपेक्षित भूमिका भी शामिल है, जिसमें-सरकार (केंद्र व राज्य दोनों), निजी क्षेत्र, स्वैचिठक संगठन और अन्य नागरिक सोसायटी के सदस्य, बीमारी की देख-रेख, स्वास्थ्य अधिकारी, उनके सिद्धांत और शिक्षा, नसिंग स्वास्थ्य, राष्ट्रीय स्वास्थ्य लेखा की आवश्यकता, सूचना,शिक्षा और संचार की भूमिका, महिला स्वास्थ्य, स्वास्थ्य क्षेत्र पर वैश्वीकरण का प्रभाव, आदि सम्मिलित हैं।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के अंतर्गत कुछ लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए समयसीमा निर्धारित कर दी गई। इनमें कुछ इस प्रकार हैं-

- 2003 चिकित्सा संस्थानों और चिकित्सालयों की स्थापना के लिए मानदंडों का निर्धारण और उसके नियमन के लिए विधेयक लाना।
- 2005 पोलियो उन्मूलन/कुष्ठ रोग उन्मूलन स्वास्थ्य के लिए बजट में 5.5 प्रतिशत से 7 प्रतिशत की वृद्धि।
- स्वास्थ्य के क्षेत्र में संपूर्ण बजट का एक प्रतिशत शोध कार्य के लिए खर्चकरना, जन स्वास्थ्य कार्यक्रमों का विकेंद्रीकरण करना।
- 2007 एच.आई.वी./एड्स की वृद्धि को शून्य स्तर पर लाना।
- 2010 कालाजार रोग का उन्मूलन।
- टी.बी., मलेरिया जैसे संक्रामक रोगों से होने वाली मृत्यु की दर में50 प्रतिशत की कमी लाना।
- अंधापन की वर्तमान स्थिति में0.5 प्रतिशत की कमी लाना।
- जन-स्वास्थ्य सुविधाओं के उपयोग में75 प्रतिशत तक की वृद्धि करना। अभी यह 20 प्रतिशत से भी कम है।
- बजट में स्वास्थ्य पर जी.डी.पी. का कुल दो प्रतिशत खर्च।
- 2015 लिम्फैटिक फाइलेरिया का उन्मूलन।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2015 (मसौदा)

स्वास्थ्य संबंधी विभिन्नविमर्शों, परिवेश बदलाव और आर्थिक पर्यावरण में हुए बदलावों के मद्देनजर वर्तमान सरकार ने एक नयी राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2015 का मसौदा तैयार किया। इस मसौदे की मुख्य बातें निम्नलिखित हैं –

लक्ष्य

समग्र विकासात्मक नीतियों में एक निवारक और स्वास्थ्यवर्धक सुविधा के व्यवस्थापन द्वारा जनता के अच्छे स्वास्थ्य और कल्याण के सर्वोत्तम संभव स्तर को प्राप्त करना और अच्छी गुणवत्ता की स्वास्थ्य सुविधा सेवाओं को सर्व सुलभ बनाना जिसका प्रयोग में लाने के कारण किसी को भी वित्तीय समस्या का सामना न करना पड़े।

3.2 प्रमुख नीतिगत सिद्धांत

साम्य: स्वास्थ्य सुविधा सेवा हेतु सार्वजनिक व्यय का उद्देश्य सर्वाधिक असक्षम लोग,जो रोगग्रस्तता का सबसे अधिक शिकार होते हैं, को प्राथमिकता प्रदान करते हुए निर्धन व्यक्तियों की इन सेवाओं तक पहुंच सुनिश्चित करने और उन्हें वित्तीय संरक्षण प्रदान करने के लिए बृहत्तर निवेश करना है। असाम्य या असमानता कम करने का अर्थ सबसे अधिक निधर्न तबकों तक पहुँच स्थापित करने तथा लिंग, निर्धनता, जाति, अक्षमता, सामाजिक बहिष्करण के अन्य रूपों और भौगोलिक बाधाओं के आधार परभेदभाव को न्यूनतम करने के लिए सकारात्मक कार्यवाही करना भी है।

सर्वसुलभता: स्वास्थ्य प्रणालियों और सेवाओं को इस प्रकार निर्धारित किया जाए किउनसे संपूर्ण आबादी की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके न कि केवल किसी एकलक्षित उप-समूह की। पर्याप्त सावधानी बरतनी होगी ताकि सामाजिक या आर्थिक आधार पर किसी भी व्यक्ति या समूह को इन प्रणालियों और सेवाओं की परिधि सेबाहर न किया जाए।

रोगी केंद्रित और सुविधा की गुणवत्ता: स्वास्थ्य सुविधा सेवाएं प्रभावी, सुरक्षित और सुविधाजनक होंगी तथा लोगों को गोपनीयता एवं प्रतिष्ठा के साथ उपलब्ध होगी। विभिन्न क्षेत्रों में दी जा रही स्वास्थ्य सुविधाओं की गुणवत्ता प्रमाणित करने के लिए मूल्यांकन होगा तथा गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए उन्हें प्रोत्साहन दिया जाएगा।

समावेशी प्रतिभागिता: सभी को स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने का कार्य अकेले सरकार द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता है। इसके लिए उन सभी समुदायों की भागीदारी आवश्यक है जो इस भागीदारी को एक साधन और लक्ष्य के रूप में, एक अधिकार और एक कर्तव्य के रूप में समझें। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शैक्षणिक संस्थाओं, लाभ के लिए काम न करने वाली एजेंसियों के साथ और निजी क्षेत्र के व्यापारिक व स्वास्थ्य सुविधा उद्योग के साथ भी व्यापक प्रतिभागिता की आवश्यकता होगी।

चिकित्सा पद्धति के विकल्पों की सुविधा: जो रोगी आयुष सुविधा का चुनावकरते हैं उन्हें समुचित आयुष सेवा प्रदान करने वाले चिकित्सक तक पहुंचाया जाए जो कि प्रमाणित स्थानीय स्वास्थ्य परम्पराओं के अनुसार इस पद्धति का प्रयोग करते हैं। आयुष व अन्य स्वास्थ्य व चिकित्सा प्रणालियों को सरकार का सहयोग और देखरेख की सुविधा प्राप्त होगी ताकि राष्ट्रीय स्वास्थ्य लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त करने में उनका योगदान सुनिश्चित किया जा सके। साथ ही साथ इन चिकित्सा व स्वास्थ्य पद्धतियों का मूल्यांकन, अनुसंधान प्रकाशन तथा इन सेवाओं को प्रदान करने वाले चिकित्सा व स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के साथ निरंतर चर्चा और सहयोग बनाए रखनहोगा।

निर्णय लेने की क्षमता का विकेंद्रीकरण (आनुषंगिकता): अनुक्रियाशीलता और बृहत्तर भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए व्यावहारिक संदर्भों और संस्थागत क्षमताके आधार पर उपयुक्त समझे जाने वाले अधिकाधिक विकेंद्रित स्तरों पर निर्णयन अधिकारों के अंतरण को प्रोत्साहन प्रदान किया जाएगा। (किसी बृहत्त और अधिक जटिल संगठन द्वारा ऐसा कुछ भी नहीं किया जाएगा जो एक छोटे और सरल संगठन द्वारा भी किया जा सकता है)।

उत्तरदेयता: सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली और निजी स्वास्थ्य सुविधा उद्योग दोनों की स्वास्थ्य सुविधा प्रणाली में वित्तीय और कार्यनिष्पादन की उत्तरदेयता, निर्णयन में पारदर्शिता और भ्रष्टाचार का निराकरण आवश्यक होगा।

व्यावसायिकता, न्याय निष्ठा और उचित अनुचित का विचार: स्वास्थ्य कर्मी और प्रबंधक सर्वोच्च स्तर की व्यावसायिकता, न्याय निष्ठा और विश्वास के साथ अपने कार्य का निर्वहन करेंगे तथा उन्हें इसमें सक्षम बनाने के लिए प्रणाली और नियामक परिवेश द्वारा सहायता प्रदान की जाएगी।

अधिगम और अनुकूली प्रणाली: स्वास्थ्य सुविधा के सक्रिय संगठन में निरंतर सुधारलाना जो ज्ञान और साक्ष्य आधारित हो, सेवित समुदायों को प्रतिबिंबित करता हो औरउनसे प्राप्त ज्ञान तथा प्रयोग में लाए जाने पर स्वयं से और राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीयज्ञान भागीदारों से प्राप्त अनुभव पर आधारित हो।

सुविधा व्यय वहन करने की क्षमता: स्वास्थ्य सुविधा की लागत में वृ. द्धि होने परसमाज के कुछ लोग ज्यादा प्रभावित होते हैं तथा उनकी वित्तीय सुरक्षा पर ध्यान देनेकी आवश्यकता उत्पन्न होती है। जब किसी परिवार द्वारा स्वास्थ्य सुविधा पर किया जाने वाला व्यय उसकी कुल मासिक खपत पर व्यय के 10 प्रतिशत या उसके गैर-खाद्य वस्तुओं की खपत पर व्यय के40 प्रतिशत से अधिक हो जाए तो उसे स्वास्थ्य पर आपाती व्यय कहा जाता है और इसे स्वास्थ्य सुविधा पर अस्वीकार्य लागत माना जाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि स्वास्थ्य की देखभाल पर लागत के कारण निर्धनता का शिकार होना,कहीं अधिक अस्वीकार्य स्थिति है।

3.3 उद्देश्य:

3.3.1 सभी क्षेत्रों में एकीकृत नीतिगत कार्य करके आबादी की स्वास्थ्य संबंधी स्थितिमें सुधार लाना और सार्वजनिक स्वास्थ्य क्षेत्र द्वारा प्रदान की जा रही निवारक, स्वास्थ्य संवर्धक, उपचारात्मक और स्वास्थ्य हेतु लाभकारी सेवा में विस्तार करना।

3.3.2 स्वास्थ्य सुविधा की लागत के कारण इन सुविधाओं पर अतिरिक्त व्यय मेंपर्याप्त कमी लाना और स्वास्थ्य सुविधाओं पर आपातव्यय करने और परिणामस्वरूप निर्धनता का सामना करने वाले परिवारों की संख्या में कमी लाना।

3.3.3 सभी प्रकार के प्रजननात्मको, मातृ, शिशु और किशोर स्वास्थ्य की रक्षा करने तथा जनता को सर्वाधिक व्याप्त संचारी और असंचारी रोगों से बचाने के लिएनि:शुल्क, व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधा सेवाओं की एक हकदारी के रूप में सर्व सुलभता सुनिश्चित करना।

3.3.4 सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं के संबंध में नि:शुल्क अनिवार्य औषधियोंनिदानों, आपातकालीन ऐम्बुलेंस सेवाओं, और आपातकालीन चिकित्सा और शल्य चिकित्सा सेवाओं तक सभी व्यक्तियोंकी पहुंच सुनिश्चित करना ताकि आबादी के सभी तबकों के लिए सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं की वित्तीय संरक्षण भूमिकामें वृद्धि की जा सके।

3.3.5 सरकारी अस्पतालों और निजी स्वास्थ्य क्षेत्र से सेवाओं की आवश्यकता केआधार पर खरीद करके एक संयोजन के माध्यम से द्वितीयक और तृतीयक स्वास्थ्य सुविधा सेवाओं की पहुंच में वृद्धि करना और उन्हें समुचित मूल्य पर उपलब्ध कराना ताकि आम लोग इस खर्च को वहन कर सके।

3.3.6 सार्वजनिक स्वास्थ्य के संबंध में निर्धारित किए गए लक्ष्यों के अनुरूप कार्य करनेतथा स्वास्थ्य सुविधा प्रणाली को अधिक प्रभावी, दक्ष, उपयुक्त, सुरक्षित, मितव्ययी और नीतिपूर्ण बनाने में योगदान करने के लिए निजी स्वास्थ्य सुविधा उद्योग तथा चिकित्सीय प्रौद्योगिकियों के विकास को प्रभावी बनाना।

4.2.4 जनसंख्या नीति

जनसंख्या किसी भी राष्ट्र के लिए महत्वपूर्ण संसाधन होती है। जनसंख्या राष्ट्र के सर्वांगींण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वह राष्ट्र ज्यादा तरक्की करता है जो अपनी जनसंख्याको बेहतर सुविधाओं के माध्यम से विकास कार्य में जोड़ पाता है। इसके लिए आवश्यक है कि जनसंख्या और विकास की दर में सामंजस्य बिठाया जाए। अनेक विद्वान भारत की जनसंख्या वृद्धि को जनसंख्या विस्फोट की संज्ञा देकर उस पर प्रभावी रणनीति को प्रस्तावित करते हैं जबकि कुछ विद्वान जनसंख्या के स्थान पर आर्थिक विकास को ज्यादा प्राथमिकता प्रदान करते हैं। वस्तुत: जनसंख्या और विकास दर में सामंजस्य अत्यन्त आवश्यक है। आजादी के बाद भारत में जनसंख्या नियंत्रण को एक महत्वपूर्ण मुद्दा माना गया। पंचवर्षीय योजनाओं में भी जनसंख्या वृद्धि दर को नियंत्रित करने के लिए इससे संबंधित जागरूकता बढ़ाने के लिए वित्तीय प्रावधान भी किए गए। राष्ट्रीय जनसंख्या नीतियां बनाई गयी।

राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 1976

इस नीति में सरकार का लक्ष्य विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से सुनियोजित प्रयास द्वारा जनसंख्या नियंत्रित करना ही था। इस नीति के प्रमुख बिंदु निम्नलिखित हैं –

1. 1984 तक जनसंख्या वृद्धि दर को 2.2 प्रतिशत से कम कर 1.7 तक लाना।
2. लड़कों के लिये विवाह की न्यूनतम आयु 21 वर्ष तथा लड़कियों की 18 वर्ष करना।
3. केंद्रीय संसाधनों का 8 प्रतिशत धन परिवार नियोजन वाले राज्यों के लिए सुरक्षित रखना।
4. जनसंख्या शिक्षा नीति में शिक्षा प्रणाली एवं स्त्री शिक्षा के विकास पर ध्यान केंद्रित करना।
5. परिवार नियोजन की अवधारणा का जनता के बीच प्रचार-प्रसार करना।
6. परिवार नियोजन के लिए प्रोत्साहन राशि में वृद्धि करना।

सरकार ने परिवार नियोजन कार्यक्रम में जिला परिषदों, पंचायत समितियों, सहकारी संगठनों, अध्यापकों, श्रमिक संघों और स्त्रियों एवं युवकों केस्वैच्छिक संगठनों का सहयोग लिया।जनसंख्या नीति में तो नसबंदी कार्यक्रम को ऐच्छिक रखा गया था, लेकिन व्यवहार में इसे अनिवार्य बना दिया गया। क्योंकि इसको स्वीकार नहीं करने पर कई प्रकार की सुविधाओं से हाथ धोना पड़ सकता था। निष्कर्षत राष्ट्रीय जनसंख्या नीति का उद्देश्य लघु परिवारों के पक्ष में एक जन आन्दोलन का निर्माण करना था, लेकिन नसबन्दी कार्यक्रम को त्रुटिपूर्ण ढंग से एवं अपर्याप्त तैयारी के साथ लागू करने के कारण देशवासियों पर इसका उल्टा असर पड़ा।

1977 में आई जनता सरकार ने परिवार नियोजन के स्थान पर परिवार कल्याण की अवधारणा को स्वीकार किया और जनसंख्या नीति में भी परिवर्तन किया। 1980 में योजना आयोग ने जनसंख्या नीति पर एक कार्यदल का गठन किया। इसने जनसंख्या एवं विकास मापकों के बीच दोतरफा संबंधों की पहचान करने की आवश्यकता पर बल दिया।

वर्ष 1991 में सरकार ने केरल के मुख्यमंत्री श्री करुणाकरण की अध्यक्षतामें जनसंख्या के बारे में एक समिति नियुक्ति की। वर्ष 1993 में इस समिति ने राष्ट्रीय विकास परिषद को सौंपी अपनी रिपोर्ट में राष्ट्रीय जनसंख्या नीति बनाए जाने की सिफारिश की। 1993 में सरकार ने राष्ट्रीय जनसंख्या नीति निर्धारित करने के लिए डॉ. स्वामीनाथन की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ दल का गठन किया। मई 1994 में जनसंख्या नीति का मसौदा प्राप्त हुआ जिसे संसद में पेश किया गया। वर्ष 1994 से 2000 तक केंद्र की अस्थिर नीतियों की वजह से जनसंख्या नीति का यह मसौदा निष्क्रिय पड़ा रहा। वर्ष 1999 में मत्रियों के एक दल ने परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा तैयार किए गए मसौदे की जांच की। फरवरी 2000 में सरकार ने **राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 2000** की घोषणा की। यह नीति डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन की अध्यक्षता में गठित एक विशेष दल की रिपोर्ट पर आधारित है। इस नीति के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित थे –

1. सन् 2045 तक जनसंख्या वृद्धि को स्थिर रखना।

2. गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले लोगों को 5000 रूपये की स्वास्थ्य बीमा सुविधा उपलब्ध करायी जाएगी जिनके सिर्फ दो संतान हो तथा इसके बाद उन्होंने नसबंदी करा ली हो।
3. गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले उन लोगों को पुरस्कृत किया जाएगा जो निर्धारित आयु में विवाह करने के उपरांत 3 वर्ष बाद संतान को जन्म दें और छोटे परिवार के सिद्धांत को अपनाए।
4. बाल-विवाह निरोधक अधिनियम तथा प्रसवपूर्व लिंगपरीक्षण तकनीकी निरोधक अधिनियम सख्ती से लागू हो।
5. ग्रामीण क्षेत्रों में एम्बुलेंस की सुविधा।
6. 14 वर्ष तक बुनियादी शिक्षा निःशुल्क एवं अनिवार्य करना।
7. केंद्रीय सरकार उन स्थानीय एवं स्वशासी निकायों को पुरस्कृत करेगी जो अपने परिवार नियोजन एवं कल्याण के उपायों को अपनाने हेतु लोगों को प्रेरित करेगी।
8. गर्भावस्था, प्रसव एवं जन्म-मृत्यु का पंजीकरण।
9. गैर-सरकारी संस्थाओं को परिवार नियोजन एवं कल्याण कार्य में जुड़ने हेतु प्रोत्साहित करना।
10. राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग का गठन करना।
11. स्कूलों में बीच में ही पढ़ाई छोड़ देने वाले लड़के-लड़कियों की संख्या 20 प्रतिशत से नीचे लाना
12. शिशु मृत्यु दर प्रति एक हजार जीवित बच्चों में 30 से कम करना।
13. जच्चा मृत्यु अनुपात प्रति एक लाख संतानों में एक सौ से कम करना।
14. टीकों से रोके जाने वाले रोगों से सभी बच्चों को प्रतिरक्षित करना।
15. लड़कियों के देर से विवाह को बढ़ावा देना। विवाह 18 वर्ष से पहले न हो, बेहतर होगा अगर यह 20 वर्ष की आयु के बाद हो।
16. अस्सी प्रतिशत प्रसव अस्पतालों, नर्सिंग होमों आदि में और 100 प्रतिशत प्रशिक्षित लोगों से कराना।
17. सभी को सूचना, परामर्श तथा जनन क्षमता नियमन की सेवाएं और गर्भनिरोध के विभिन्न विकल्प उपलब्ध कराना।
18. एड्स का प्रसार रोकना तथा प्रजनन अंग रोगों के प्रबंध तथा राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन के बीच अधिक समन्वय स्थापित करना।
19. संक्रामक रोगों को रोकना और उन पर काबू पाना। प्रजनन और शिशु स्वास्थ्यसुविधाओं को घरघर तक पहुंचाने के लिए भारतीय चिकित्सा प्रणालियों की समेकित करना।

राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग

इसका गठन प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में मई 2000 को किया गया। इस आयोग का उद्देश्य राष्ट्रीय जनसंख्या नीति के अंतर्गत लक्षित उद्देश्यों को प्राप्त करने की प्रक्रिया में केंद्र व राज्य के अभिकरणों द्वारा नागरिक संस्थाओं व निजी क्षेत्रों के मध्य समन्वयन करना तथा अंतरराष्ट्रीय सहयोग की संभावनाओं की गवेषणा करना था।प्रारंभ में यह योजना आयोग के अधीन गठित किया गया था किंतु मई 2005 में इसे पुनर्गठित किया गया तथा प्रधानमंत्री इसके अध्यक्षबने तया केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री व योजना आयोग के उपाध्यक्ष को इसका उपाध्यक्ष बनाया गया।

आयोग के अधिदेश में शामिल है:

1. नीति में निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के दृष्टिगत राष्ट्रीय जनसंख्या नीति के क्रियान्वयन के लिए पुनरीक्षा, निगरानी

करना और निर्देश देना।

2. स्वास्थ्य, शैक्षिक पर्यावरणीय एवं विकासपरक कार्यक्रमों के बीच समन्वय एवं ऊर्जा प्रोत्साहित करना ताकि यथाशीघ्र जनसंख्या स्थिरीकरण किया जा सके।

3. केंद्र एवं राज्यों में विभिन्न क्षेत्रों में एजेंसियों के माध्यम सेकार्यक्रमों के नियोजन एवं कार्यक्रमोंमें अंतरक्षेत्रीय समन्वय को प्रोत्साहित करना।

4. इस राष्ट्रीय प्रयास के समर्थन के लिए एक शक्तिशाली जन कार्यक्रम तैयार करना।

जनसंख्या स्थिरता कोष

राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग के अधीन गठित राष्ट्रीय जनसंख्या स्थिरीकरण कोष अप्रैल 2002 में परिवार कल्याण विभाग को स्थानांतरित कर दिया गया तथा जून 2003 में इसे जनसंख्या स्थिरता कोष नाम प्रदान किया गया।

जून 2005 में इसे पुनर्गठित किया गया तथा स्वास्थ्य मंत्री को अध्यक्ष तथा स्वास्थ्य सचिव को प्रबंधक समिति का प्रमुख बनाया गया। इसके कार्यकारी अधिकारी की नियुक्ति बाह्य क्षेत्र से करने का प्रावधान किया गया है जो समस्त कार्यों के प्रति जवाबदेह होगा।

जनसंख्या स्थिरता कोष के उद्देश्य हैं-

1. 2045 तक, धारणीय आर्थिक संवृद्धि सामाजिक विकास एवं पर्यावरण संरक्षणकी आवश्यकता के साथ जनसंख्या स्थिरीकरण के उद्देश्य को प्राप्त करना।

2. कॉन्ट्रासेप्टिव, और पुनर्उत्पादन और बाल स्वास्थ्य देखभाल की पूरी नहुई जरूरतों को पूरा करने के लिए योजनाओं, कार्यक्रमों, प्रोजेक्टों एवं नवोन्मेषों को प्रोत्साहित करना।

3. राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 के उद्देश्यों की प्राप्ति के दृष्टिगत् सरकार, निजी एवं स्वैच्छिक क्षेत्र में नवाचारी युक्तियों को प्रोत्साहित करना

4. जनसंख्या स्थिरीकरण के राष्ट्रीय प्रयास के पक्ष में जोरदार जनआंदोलन के विकास में मदद करना।

5. राष्ट्रीय स्थिरीकरण के राष्ट्रीय कारणों को बढ़ावा देने के लिए वैयक्तिक, व्यापार संगठनों और देश के अंदर और बाहर अन्य लोगों के योगदान की प्रवाहित करने के लिए एक विंडो मुहैया कराना।

कोष के उद्देश्यों को पूरा करने के दौरान धर्म, जाति, समुदाय या वर्ग के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाएगा।नवीनतम व्यवस्था के तहत, जनसंख्या स्थिरता कोष की जनरल बॉडी की अध्यक्षता स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री द्वारा की जाती है।

ज्ञान शांति मैत्री

4.2.5 पोषण नीति

किसी भी राष्ट्र का यह दायित्व है कि वह अपने नागरिकों को मूलभूत आवश्यकताओं को उपलब्धकराएं। हर नागरिक के व्यक्तित्व विकास हेतु साधन उपलब्ध कराएं। भारत के संदर्भ में आज़ादी से पूर्व भी अनेक प्रयास हुए जिससे समाज में हर व्यक्ति को मूलभूत आवश्यकताएं प्राप्त हो सके। सभी के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है कि उन्हें समुचित पोषण मिले। हर व्यक्ति के विकास के लिए समुचित पोषण आवश्यक है। पोषण की समस्या का जुड़ाव स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार एवं गरीबी से भी है। ये सभी एकदूसरे को प्रभावित करते हैं।खाद्य एवं पोषण बोर्ड का गठन 1964 में किया गया था। इसका उद्देश्य देश में पोषण के स्तर में सुधार लाना था। तब यह कृषि मंत्रालय के अधीन खाद्य विभाग से जुड़ा था। लेकिन 1993 में राष्ट्रीय पोषण नीति के तहत इसे केंद्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के

अधीन कर दिया गया। भारत में 1993 में महिला व बाल विकास विभाग के तत्वावधान में सरकार द्वारा राष्ट्रीय पोषण नीति को अंगीकार किया गया था। इसके द्वारा कुपोषण मिटाने और सबके लिए इष्टतम पोषण का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए बहु-सेक्टर संबंधी योजना की वकालत की गई। यह योजना देश भर में पोषण के स्तर की निगरानी करने तथा अच्छे पोषण की आवश्यकता व कुपोषण रोकने की जरुरत के संबंध में सरकारी मशीनरी को सुग्राही बनाने की वकालत करती है। राष्ट्रीय पोषण नीति में आहार व पोषण बोर्ड भी सम्मिलित है, जिसके द्वारा स्तनपान व पूरक फीडिंग के संबंध में सही तथ्यों का प्रसार करने के लिए पोस्टर, श्रव्य तुकबंदी (ओडियो जिग्गल्स) और वीडियो स्पाट्स विकसित किए जाते हैं।

राष्ट्रीय पोषण नीति देश की आबादी की पोषण संबंधी स्थिति को प्रस्तुत करती है और पोषण स्तरों, विशेषकर महिलाओं, किशोरियों और बालिका शिशु तथा छह वर्ष से कम आयु के सभी बच्चों के पोषण स्तरों में सुधार की एक व्यापक रणनीति की ज़रूरत को रेखांकित करती है। यह देश में अल्पपोषण की व्यापक व्याप्ति को तथा लोगों के जीवन की गुणवत्ता और उत्पादकता पर उसके घातक प्रभाव की समस्या को हल करने की ज़रूरत पर बल देती है। यह आबादी के असुरक्षित समूहों - विशेषकर महिलाओं और बच्चों की पोषण संबंधी स्थिति पर विशेष रूप से ध्यान केंद्रित करती है।

यह विकास प्रक्रिया में पोषण और अधोपोषण की समस्या की जटिलता के महत्व की दृष्टि से राष्ट्रीय पोषण नीति की ज़रूरत को उजागर करती है। अल्पपोषण की समस्या को कृषि प्रौद्योगिकी, वृहत और सूक्ष्म स्तर की नीति जैसे विभिन्न क्षेत्रों के साथ जोड़ कर स्पष्ट किया गया है। इस तरह यह नीति कुपोषण के बहुमुखी और बहुक्षेत्रीय मुद्दे को हल करने हेतु प्रत्यक्ष अल्पकालिक और अप्रत्यक्ष दीर्घकालिक हस्तक्षेपों पर विचार करती है।

प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के अंतर्गत शामिल उपाय इस प्रकार हैं- विशेष रूप से असुरक्षित समूहों के लिए पोषण हस्तक्षेप, आवश्यक खाद्यों का संपुष्टन (फोर्टिफिकेशन), कम लागत के पोषक भोजन को लोकप्रिय बनाना और असुरक्षित समूहों के बीच सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को नियंत्रित करना।

अप्रत्यक्ष नीति उपाय इस प्रकार हैं - खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करना; उत्पादन और प्रदर्शन के माध्यम से खुराक के प्रति प्रतिरूप में सुधार लाना; आय हस्तांतरण हेतु नीतियां, ताकि ग्रामीण और शहरी निर्धनों के लिए हकदारियों में सुधार लाया जा सके; भूमि सुधार; स्वास्थ्य और परिवार कल्याण; बुनियादी स्वास्थ्य और पोषण संबंधी ज्ञान; खाद्य मिलावट की रोकथाम, आदि।

यह नीति इस बात पर बल देती है कि बच्चे आबादी का सर्वाधिक कुपोषित समूह है; और इसलिए समेकित बाल विकास सेवा के तीव्र विस्तार के माध्यम से उनकी पोषण संबंधी स्थिति में सुधार लाने हेतु तत्काल हस्तक्षेप आवश्यक है।

पोषण सुरक्षा के लिए नीतिगत व्यवस्थाएं

- राष्ट्रीय बाल नीति- 1974
- एकीकृत बाल विकास परियोजना आईसीडीएस- 1975
- राष्ट्रीय पोषण नीति- 1993

- नेशनल प्लान ऑफ एक्शन फॉर न्यूट्रीशन- 2005
- एनीमिया को रोकने के लिए विशेष योजना, आइरन टेबलेट के संदर्भ में
- देश के सभी शासकीय प्रायमरी स्कूलों में मध्याह्न भोजन योजना।
- 9 माह से 3 साल तक के बच्चों को विटामिन ए की विशेष खुराक
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली

4.2.6 शिक्षा नीति

भारतीय संविधान के चौथे भाग में उल्लिखित नीति निदेशक तत्वों में कहा गया है कि प्राथमिक स्तर तक के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाय। 1948 में डॉ॰ राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के गठन के साथ ही भारत में शिक्षा-प्रणाली को व्यवस्थित करने का काम शुरू हो गया था। 1952 में लक्ष्मीस्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में गठित माध्यमिक शिक्षा आयोग, तथा 1964 में दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में गठित शिक्षा आयोग की अनुशंशाओं के आधार पर1968 में शिक्षा नीति पर एक प्रस्ताव प्रकाशित किया गया जिसमें 'राष्ट्रीय विकास के प्रति वचनबद्ध, चरित्रवान तथा कार्यकुशल' युवक-युवतियों को तैयार करने का लक्ष्य रखा गया।

इसे 1968 में शिक्षा पर राष्ट्रीय नीति की तरह घोषित किया गया। इसके मुख्य बिंदु निम्नुसार हैं –

- प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण
- नवीन शिक्षा पद्धति का प्रस्ताव
- त्रिभाषा सूत्र
- उच्च शिक्षा में स्थानीय भाषा के प्रयोग का स्वीकार
- कृषि, उद्योग एवं प्रौढ़ शिक्षा के विकास का प्रस्ताव
- समान विद्यालय योजना

1979 में जनता सरकार ने पूर्व की शिक्षा नीति में कुछ बदलाव किए गए। इसमें चौदह वर्ष तक के सभी बालक-बालिकाओं को निशुल्क सार्वजनिक और अनिवार्य शिक्षा देने पर जोर दिया गया। इसमें शिक्षण (टीचिंग) से अधिक अधिगम (लर्निंग) पर बल देने का प्रस्ताव किया गया। पत्राचार पाठ्यक्रम, प्रौढ़शिक्षा को बढ़ावा दिया जाए। 1986 से पूर्व की शिक्षा नीतियों को एक नवीन रूप नई शिक्षा नीति से प्राप्त हुआ।

मई 1986 में नई **राष्ट्रीय शिक्षा नीति** लागू की गई, जो अब तक चल रही है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986

वर्ष1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा हुई। इस नीतिगत दस्तावेज को निम्नलिखित नौ अध्यायों में बाँटा गया-

- भूमिका
- सामान्य मान्यताएं
- शैक्षिक अवसरों की समानता
- शैक्षिक प्रक्रिया
- विभिन्न स्तरों पर शिक्षा का पुनर्गठन

- तकनीकी और प्रबंध शिक्षा
- प्राथमिकता के क्षेत्र
- संसाधन एवं पुरावलोकन
- भविष्य

इस नीति की प्रमुख बातें निम्नानुसार हैं –

- सभी के लिए शिक्षा उद्देश्य रखा गया। शिक्षा को वर्तमान और भविष्य के लिए अद्वितीय पूँजी निवेश माना गया
- 10+2+3 शिक्षा पद्वति को स्वीकार किया गया
- अंग्रेजी और हिंदी के साथ क्षेत्रीय भाषाओं के विकास पर बल
- शैक्षिक अवसरों में क्षेत्रीय असंतुलन दूर करना
- शैक्षिक शोध एवं विकास तथा विज्ञान और तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रयास करना
- प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनिकीकरण, प्रौढ़ साक्षरता आदि के लिए संसाधन उपलब्ध कराना
- मुक्त व दूर शिक्षा के कार्यक्रमों पर बल
- स्त्री शिक्षा पर जोर
- शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर समान सुविधाएं उपलब्धकराना
- अल्पसंख्यकों की शिक्षा पर ध्यान देना
- संचार माध्यमों एवं शैक्षिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग बढ़ाना
- सतत एवं व्यापक मूल्यांकन
- परीक्षा सुधार
- अध्यापक शिक्षा में समग्र परिवर्तन एवं सुधार की आवश्यकता पर जोर
- प्राथमिक विद्यालयों में आवश्यक मूलभूत सुविधाएं उपलब्धकराना
- नि:शुल्क नवोदय विद्यालय खोले जाएं
- तकनीकी एवं प्रबंध शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाए

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है जिसने भारत के शैक्षिक वातावरण को एक नवीन दिशा प्रदान की। इस नीति ने नवोदय विद्यालय, अकादमिक स्टॉफ कॉलेज, डायट(डीआईईटी) जैसी आधारभूत संरचनाओं को जन्म दिया जो आज भी जारी हैं। भारत के शैक्षिक इतिहास में यह नीति आज भी बहुत महत्वपूर्ण है।इस बीच राष्ट्रीय शिक्षा नीति की समीक्षा के लिए 1990 में आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में एक समीक्षा समिति, तथा 1993 में प्रो॰ यशपाल की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। 1992 में इस नीति में कुछ सुधार किए गए और एक कार्ययोजना (प्लान ऑफ एक्शन 1992) बनायी गयी। संशोधित नीति में एक ऐसी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली तैयार करने का प्रावधान है जिसके अंतर्गत शिक्षा में एकरूपता लाने, प्रौढ़शिक्षा कार्यक्रम को जनांदोलन बनाने, सभी को शिक्षा

सुलभ कराने, बुनियादी (प्राथमिक) शिक्षा की गुणवत्ता बनाए रखने, बालिका शिक्षा पर विशेष जोर देने, देश के प्रत्येक जिले में नवोदय विद्यालय जैसे आधुनिक विद्यालयों की स्थापना करने, माध्यमिक शिक्षा को व्यवसायपरक बनाने, उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विविध प्रकार की जानकारी देने और अंतर अनुशासनिक अनुसंधान करने,राज्यों में नए मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना करने, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषदको सुदृढ़ करने तथा खेलकूद, शारीरिक शिक्षा, योग को बढ़ावा देने एवं एक सक्षम मूल्यांकन प्रक्रिया अपनाने के प्रयास शामिल हैं। इसके अलावा शिक्षा में अधिकाधिक लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु एक विकेंद्रीकृत प्रबंधनढांचे का भी सुझाव दियागया है। इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में लगी एजेंसियों के लिए विभिन्न नीतिगत मानकों को तैयार करने हेतु एक विस्तृत रणनीति का भी पीओए में प्रावधान किया गया है।

एनपीई द्वारा निर्धारित राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली एक ऐसे राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढांचे पर आधारित है, जिसमें अन्य लचीले एवं क्षेत्र विशेष के लिए तैयार घटकों के साथ ही एक समान पाठ्यक्रम रखने का प्रावधान है। जहां एकओर शिक्षा नीति लोगों के लिए अधिक अवसर उपलब्ध कराए जाने पर जोर देती है, वहीं वह उच्च एवं तकनीकी शिक्षा की वर्तमान प्रणाली को मजबूत बनाने का आह्वान भी करती है। शिक्षा नीति शिक्षा के क्षेत्र में कुल राष्ट्रीय आय का कम से कम 6 प्रतिशत धन लगाने पर भी जोर देती है।

वर्ष 2009 में मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम की प्रमुख विशेषताएं हैं-

- 6 से 14 वर्ष के वर्ग के सभी बच्चों/बच्चियों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा।
- प्राथमिक शिक्षा पूर्ण होने तक किसी भी बच्चे/बच्ची को रोका नहीं जायेगा, न ही निष्काषित किया जायेगा और न ही बोर्ड परीक्षा हेतु अग्रेषित किया जायेगा।
- यदि 6 वर्ष से अधिक उम्र का बच्चा/बच्ची किसी भी स्कूल में भर्ती नहीं हुआ/हुई है या जो भर्ती हैं, उसने अपनी प्राथमिक शिक्षा पूर्ण नहीं की है, तो वे अपनी उम्र के अनुसार उचित कक्षा में भर्ती किये जायेंगे और यदि कोई बच्चा/बच्ची अपनी उम्र के अनुसार उचित कक्षा में प्रवेश लेता/लेती है, तो वह संबंधित शिक्षा पाने का हकदार होगा/होगी।
- प्राथमिक शिक्षा हेतु प्रवेश लेने के लिए बच्चे/बच्ची की उम्र का निर्धारण जन्म प्रमाण पत्र के आधार पर, जो कि जन्म, मृत्यु और विवाह पंजीकरणअधिनियम, 1856 के प्रावधानों के अनुसार हो या संबंधित अन्य दस्तावेज, जो प्रमाणित कर सकते हों, उनके आधार पर किया जायेगा। उम्र प्रमाण पत्र न होने की स्थिति में बच्चे/बच्ची को प्रवेश से वंचित नहीं किया जायेगा।
- प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करने वाले बच्चे/बच्ची को एक प्रमाण पत्र आवंटित किया जायेगा।
- शिक्षक की स्थिति का आंकलन शिक्षक-विद्यार्थी अनुपात के आधार पर किया जायेगा।
- न्यूनतम 25 प्रतिशत सुविधाहीन तथा कमजोर वर्ग के बच्चों/बच्चियों के प्रवेश, सहायता रहित निजी स्कूलों में कक्षा 1 में किये जायें।
- अच्छी गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान की जाये।
- स्कूल शिक्षक को पांच साल के भीतर पेशेवर डिग्री प्राप्त करना बंधनकारक होगा अन्यथा वे नौकरी खो देंगे।
- स्कूल का बुनियादी ढांचा तीन वर्ष में उन्नत किया जायेगा।
- वित्तीय भार राज्य और केन्द्र शासन के बीच बांटा जायेगा।

नयी शिक्षा नीति 2015

केंद्र सरकार 29 वर्षों के बाद देश में एक नई शिक्षा नीति बनाने जा रही है। इस नीति का उद्देश्य समावेशी, सहभागिता पूर्ण और समग्र दृष्टिकोण से देश के लिए एक नई शिक्षा नीति तैयार करना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में बनाई गई थी और 1992 में संशोधित की गई थी। तब से अब तक अनेक बदलाव हुए हैं, जिसकी वजह से नीति में संशोधन की आवश्यकता है। भारत सरकार, लोगों की गुणवत्तापरक शिक्षा, नवाचार और अनुसंधान संबंधी आवश्यकता के परिवर्तनशील पहलुओं से निपटने के लिए नई शिक्षा नीति लाना चाहती है जिसका उद्देश्य भारत को, इसके विद्यार्थियों को आवश्यक कौशल तथा ज्ञान प्रदान करके ज्ञान के क्षेत्र में महाशक्ति बनाना तथा विज्ञान, प्रौद्योगिकी, शिक्षा एवं उद्योग जगत में श्रमशक्ति की कमी को दूर करना होगा। इस प्रयोजनार्थ विचार-विमर्श के लिए 33 प्रकरणों की पहचान की गई है। इन प्रकरणों को स्कूल शिक्षा (13 प्रकरण) और उच्चतर शिक्षा (20 प्रकरण) के क्षेत्रों में अलग-अलग विभाजित किया गया है।

4.2.7 आवास नीति

हर व्यक्ति के लिए आवास एक मूलभूत आवश्यकता होती है। आजादी के भारत सरकार ने लगातार प्रयास किया है कि वह अपने नागरिकों को आवास की सुविधा प्रदान करें। सरकार इस हेतु बैंकों से सस्ते ऋण, रियायती दरों पर भूखंड, आयकर में छूट इत्यादि सुविधाएं प्रदान करती है। समाज के वंचित तबकों के लिए आवास हेतु प्रबंध करती है। भारत में पहली आवास नीति 1989 में बनायी गयी। इस नीति में जोर दिया गया कि आवास केवल एक वस्तु नहीं बल्कि एक उत्पादक निवेश भी है। इस संबंध में एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में काम करने की आवश्यकता है। इस नीति की प्रमुख बातें निम्नानुसार हैं –

- 2000 तक सभी को भवन उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया
- राष्ट्रीय भवन बैंक की स्थापना
- गृह निर्माण की गति को जनसंख्या वृद्धि के परिप्रेक्ष्य में तेज करना
- गृह निर्माण हेतु बचत को प्रोत्साहन
- गृह निर्माण सहकारी समितियों को प्रोत्साहन
- गृह निर्माण कार्य हेतु विभिन्न मदों में छूट का प्रावधान
- भूमि, संसाधन, तकनीक और वित्त तक आसान पहुँच बना कर बेघर लोगों को आश्रय हेतु गृह निर्माण की सुविधा प्राथमिकता पर उपलब्ध कराना
- गृह निर्माण के साथ-साथ स्वच्छ पेयजल, मल-निस्तारण और अन्य पहलुओं पर जोर देना ताकि स्वस्थ पर्यावरण के जरिए जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो सके।
- अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, मुक्त बंधुआ मजदूरों, ग्रामीण भूमिहीन श्रमिकों और आर्थिक रूप से अक्षम लोगों को प्राथमिकता के आधार पर आवास उपलब्ध कराना

इसके पश्चात 1998 में घोषित राष्ट्रीय आवास नीति का लक्ष्य भी सभी लोगों को आवास की सुविधा उपलब्ध कराना था। इस नीति के प्रमुख तत्वों को निम्नानुसार बताया जा सकता है-

- कम लागत दर पर आवास निर्माण करना
- प्राथमिकता के आधार पर समाज के वंचित एवं हाशिए के वर्गों को घर उपलब्ध कराना और संबंधित सुविधाएं प्रदान करना
- गृह निर्माण से संबंधित विभिन्नआयामों और प्रक्रियाओं को सरल बनाना
- गृह निर्माण में तकनीकी, वित्तीय एवं संसाधनों की समस्याओं को दूर करना
- निजी एवं सरकारी सहयोग के जरिए आवास निर्माण एवं सहकारिता आधारित आवास निर्माण को प्रोत्साहन

राष्ट्रीय शहरी आवास और पर्यावरण नीति (एनयूएचएचपी) 2007

राष्ट्रीय शहरी आवास एवं पर्यावास नीति 2007 (एनयूएचएचपी-2007) शहरी क्षेत्रों के बदलते सामाजिक-आर्थिक मानदंडों और आवासों की बढ़ती मांग व संबंधित बुनियादी सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए तैयार की गई है। इस नीति के अन्तर्गत "सभी के लिए वहनीय आवास" विशेष रूप से शहरी गरीबों के लिए, के लक्ष्य को पाने के लिए सार्वजनिक-निजी भागीदारी को विभिन्न प्रकार से बढ़ावा दिया जा रहा है। आवासों की भारी कमी तथा केन्द्र और राज्य सरकारों के पास बजट की कमी के कारण, एनयूएचएचपी-2007 में विभिन्न पणधारकों यथा निजी क्षेत्र, कारपोरेट क्षेत्र, श्रमिक आवास के लिए औद्योगिक क्षेत्र और कर्मचारियों के आवास के लिए सेवा/संस्थागत क्षेत्र, की ओर विशेष ध्यान दिया गया है।

एनयूएचएचपी-2007 की कार्य योजना में उल्लेख किया गया है कि केन्द्र सरकार राज्यों को राज्य शहरी आवास व सहवर्ती राज्य शहरी आवास एवं पर्यावास कार्य योजना तैयार करने के लिए प्रोत्साहित करेगी व सहायता करेगी जिसके अन्तर्गत राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों द्वारा विधिक व विनियामक सुधारों, वित्तीय रियायतों, वित्तीय क्षेत्र में सुधार करके और आवासों व संबंधित बुनियादी सुविधाओं के विकास के लिए नए उपायों के द्वारा नीतिगत उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विशेष अधिनियम पारित किये जाएंगे।

इस नीति के अन्तर्गत केन्द्र सरकार, राज्य सरकारों, स्थानीय निकायों, बैंकों व आवास वित्त कंपनियों, सार्वजनिक/अशासकीय एजेंसियों के लिए विशेष भूमिकाएं निर्धारित की हैं।

प्रस्तावित राष्ट्रीय शहरी आवास और पर्यावास नीति, 2015

भारत सरकार आवास की बढ़ती कमी को दूर करने के लिए राज्य सरकारों को मार्गदर्शन प्रदान करने हेतु राष्ट्रीय आवास नीति तैयार कर रही है। सर्वप्रथम आवास नीति की घोषणा मई, 1988 में की गई थी। वर्तमान में **राष्ट्रीय शहरी आवास और पर्यावास नीति (एनयूएचएचपी), 2007** लागू है। यह वांछित है कि विगत वर्षों में हुए परिवर्तनों को दर्शाने तथा वर्ष 2022 तक "**सभी के लिए आवास**" के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मौजूदा नीति में संशोधन किया जाए।

इस संबंध में नई "**राष्ट्रीय शहरी आवास और पर्यावास नीति, 2015**" के लिए निम्नलिखित के संबंध में जानकारियां मांगी गई हैं:-

1. वर्ष 2022 तक "सभी के लिए आवास" को प्रोत्साहित करने में भारत सरकार की भूमिका क्या होनी चाहिए?
2. उक्त लक्ष्य/ को प्राप्त करने के लिए राज्यब सरकारों को क्या करना चाहिए?
3. शहरी स्थानीय निकायों की भूमिका क्या होनी चाहिए?

4. इस लक्ष्य को प्राप्त करने में राज्य आवास बोर्डों/निगमों तथा अन्य राज्य संस्थाओं की क्याभूमिका हो सकती है?
5. आवास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में शहरी स्थानीय निकायों से क्या प्रमुख अनुभव प्राप्तहुए हैं?
6. वर्ष 2022 तक "सभी के लिए आवास" में निजी क्षेत्र क्या भूमिका निभा सकता है?
7. उद्योगों की भूमिका क्या है?
8. व्यक्ति विशेष की भूमिका क्या होनी चाहिए?
9. इस लक्ष्य के लिए वित्तीय संसाधनों को किस प्रकार जुटाया जाएगा?
10. सामान्य रूप से आवास तथा विशेष रूप से "सभी के लिए आवास" उपलब्ध कराने के लिए किस प्रकार के विधिक और नियामक ढांचों की आवश्यकता है?
11. आवास के लिए शहरी भूमि की और व्यावस्था किस प्रकार कराई जा सकती है?
12. रोजगार/आजीविका तथा आवास के बीच के संबंध को किस प्रकार अधिक मजबूत बनाया जा सकता है?
13. विशेष रूप से व्यापक स्तर पर तीव्र, सुदृढ़, सुस्थिर और पर्यावरण रूप से अनुकूल मकान बनाने के लिए नई भवन निर्माण प्रौद्योगिकियों को किस प्रकार प्रोत्साहित किया जाएगा?

सरकार जनता एवं विशेषज्ञों द्वारा प्राप्त सुझावों कोआधार बना कर अगली आवास नीति को प्रस्तुत करेगी। सरकार का लक्ष्य सभी लोगों को आवास उपलब्ध कराना है जो उनकी मूलभूत आवश्यकता है।

4.3 सारांश

हमने देखा कि आजादी के बाद किस प्रकार सरकारों ने सामाजिक नीतियों का क्रियान्वयन किया और समाज में व्याप्त भेदभाव को दूर करने में अपनी भूमिका निभायी। सामाजिक नीतियों के माध्यम से समाज के वंचित एवं हाशिए पर रह रहे लोगों की संसाधन तक पहुँच बनाकर उन्हेंसमर्थ बनाने का प्रयास किया जाता है। आजादी के बाद से सरकार का यह प्रयास रहा है कि विकास का लाभ समाज के सभी वर्गों में समान रूप से पहुँचे, इसलिए वह विभिन्न सामाजिक नीतियों के माध्यम से लोगों के बीच न्यायपूर्ण वितरण करने का प्रयास करती है। शिक्षा, पोषण, स्वास्थ्य, आवास आदि न केवल व्यक्ति अपितु समाज के विकास के लिए भी अनिवार्य है और विभिन्नसामाजिक नीतियां इन्हें उन तक पहुँचाने का सशक्त माध्यम है।

4.4 बोध प्रश्न

1. सामाजिक नीति के अंतर्गत राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 पर प्रकाश डालिए।
2. वृद्धजनों से संबंधित सामाजिक नीति काउल्लेख कीजिए।
3. भारत में स्वास्थ्य नीति के विकास पर प्रकाश डालिए।
4. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए –

- पोषण नीति
- राष्ट्रीय आवास नीति 2007
- राष्ट्रीय बाल नीति

ज्ञान शांति मैत्री

4.5 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

- उपाध्याय, सुरेश(2015). *जन स्वास्थ्य व स्वास्थ्य नीति*. http://sureshupadhyay56.blogspot.in/
- जार्ज, सुशील एवं नौटियाल, सुरेश (2009). *भारत में विस्थापन एवं कानून.* नयी दिल्ली : ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क.
- राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग (2013). *बुजुर्ग लोगों के अधिकार* नई दिल्ली: राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग
- व.म.खु.वि. (2014). *सामाजिक कल्याण प्रशासन : नीति,नियोजन और विकास*. कोटा : व.म.खु.वि.
- **हिमांशु रथ (2013). *भारत में बुजुर्गों के लिए कल्याण योजनाएं* http://pib.nic.in/newsite/hindifeature.aspx?relid=24606**
- http://wcd.nic.in/icpsmon/st_usefulresources.aspx
- http://socialwelfare.icdsbih.gov.in/hindi/Policies_Legislations/Policies_Legislations_details.php?grpID=2&PLID=74&SubGroupID=1
- **www.ssgcp.com/राष्ट्रीय-बाल-नीति-2012/**
- https://mygov.in
- http://archive.india.gov.in/hindi/sectors/education/index.php?id=2
- http://www.allrights.co.in/kitni-kargar-nai-shikhsha-niti/
- http://hi.vikaspedia.in/social-welfare/senior-citizen-welfare

इकाई -5 सामाजिक नीति एवं पंचवर्षीय योजनाएं

रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 पंचवर्षीय योजनाओं मेंसामाजिक नीति
5.2.1 पहली पंचवर्षीय योजना
5.2.2 दूसरी पंचवर्षीय योजना
5.2.3 तीसरी पंचवर्षीय योजना
5.2.4 चौथी पंचवर्षीय योजना
5.2.5 पाँचवी पंचवर्षीय योजना
5.2.6 छठवीं पंचवर्षीय योजना
5.2.7 सातवीं पंचवर्षीय योजना
5.2.1 आठवीं पंचवर्षीय योजना
5.2.1 नौवीं पंचवर्षीय योजना
5.2.1 दसवीं पंचवर्षीय योजना
5.2.1 ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना
5.2.1 बारहवीं पंचवर्षीय योजना
5.3 सारांश
5.4 बोध प्रश्न
5.5 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

ज्ञान शांति मैत्री

5.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप –

1. पंचवर्षीय योजनाओं से परिचित हो सकेंगे।
2. विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में सामाजिक नीतिसंबंधी प्रावधानों की जानकारी प्राप्तकर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

सामाजिक नीति का उद्देश्य सभी को समान अवसर उपलब्ध कराना, आय का पुनर्वितरण, असमानताओं की समाप्ति और जीवनस्तर में गुणात्मक वृद्धि लाना है। इसके लिए आवश्यक है कि सरकार अपनी भूमिका का निर्वाह इस प्रकार करे कि सामाजिक नीति के उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके। विकास के लाभ दीर्घकालिक एवं स्थायी हो इसके लिए उनका सामाजिक नीति के पूरक होना आवश्यक है। आर्थिक विकास इस प्रकार होना चाहिए जिससे सामाजिक विकास का मार्ग प्रशस्त हो सके। सामाजिक नीति राज्य को लोककल्याणकारी राज्य बनाने का प्रस्ताव करती है। वह

विभिन्न संगठनों, समुदायों, समूहों के आपसी प्रयासों को प्रोत्साहित करती है जिससे सभी का जीवन कल्याणकारी हो सके। इसका लक्ष्य असमानता को समाप्त करना, समाज में एकीकरण को बढ़ाना, लाभ का समतापूर्ण वितरण तथा संसाधनों तक सबकी पहुँच बनाना आवश्यक है।

5.2 पंचवर्षीय योजनाओं मेंसामाजिक नीति

प्रारंभ से ही भारतीय परिदृश्य में नीति निर्माण के संदर्भ में सामाजिक नीति केंद्रीय तत्व के रूप में विद्यमान रही है। सम्पूर्ण स्वतंत्रता आंदोलन में सामाजिक नीतिसे संबंधित विषय जनचर्चा एवं आंदोलन के केंद्र में रहे। आजाद भारत में इन विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक असमानताओं को दूर करने के लिए नियोजित अर्थव्यवस्था का मार्ग अपनाया गया। ऐसी नीतियों और योजनाओं का निर्माण किया गया जो संविधान में लिखित मूल्योंका संवर्धन कर सके। विकास को सामाजिक न्याय के साथ सम्मिलित किया गया। इन विभिन्न योजनाओं में सामाजिक विकास से संबंधित आयामों– स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, रोजगार आदि – से जुड़ी नीतियों को स्थान दिया गया। इन योजनाओं में निर्धनता उन्मूलन, रोजगार व आय में वृद्धि, आर्थिक एवं सामाजिक असमानता में कमी, सार्वजनिक सुविधाओं एवं संस्थानों की उपलब्धता, कल्याणकारी सेवाओं की पूर्ति जनसहभागिता को प्रोत्साहन, वंचित एवं दलित वर्गों का उत्थान इत्यादि पर जोर दिया गया।

5.2.1 पहली पंचवर्षीय योजना

इस योजना में कृषि क्षेत्र पर विशेष जोर दिया गया जिसका उद्देश्य खाद्यान्न की कमी को पूरा करना था। योजना में सामाजिक न्याय से जुड़े निम्नलिखित महत्वपूर्ण लक्ष्य निर्धारित किए गए-

1. सामाजिक सौहार्द और सांस्कृतिक विकास, सामाजिक न्याय एवं उपयुक्तजीवन स्तर की प्राप्ति।
2. समान अवसर एवं मूलभूत आवश्यकताओं की उपलब्धता।
3. आय का पुनर्वितरण।
4. मानव संसाधनों का विकास।

5.2.2 दूसरी पंचवर्षीय योजना

इस योजना का लक्ष्य 'तीव्र औद्योगकीकरण' था। इसमें भारी एवं मूल उद्योगों पर जोर दिया गया। एक ऐसी प्रणाली को बढ़ावा देने का प्रयास किया गया जिससे देश में समाजवादी व्यवस्था स्थापित हो सके। आर्थिक समानता की प्राप्ति का लक्ष्य रखा गया। इस योजना में शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं को व्यापक रूप से उपलब्ध कराया गया। संतुलित विकास की आवश्यकता पर बल दिया गया। सभी क्षेत्रों विशेषत: पिछड़े क्षेत्रों में विद्युत, सिंचाई, परिवहन, शिक्षा, उद्योग आदि का प्रसार किया गया। इस योजना के उद्देश्य निम्नलिखित थे –

1. राष्ट्रीय आय में वृद्धि करना
2. आधारभूत एवं भारी उद्योगों के विकास पर बल देते हुए तीव्र औद्योगीकरण करना
3. रोजगार के अवसरों को बढ़ाना
4. आय एवं संपत्तिमें असमानता घटाना तथा आर्थिक शक्ति का बेहतर बंटवारा करना

5.2.3 तीसरी पंचवर्षीय योजना

इस योजना में कृषि और गेहूँ उत्पादन पर जोर दिया गया। विभिन्न असमानताओं को दूर करने हेतु विद्युत परिवहन, सिंचाई,शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योग, ऋण आदि का विस्तार किया गया। इस योजना के उद्देश्य निम्नलिखित थे –

1. राष्ट्रीय आय में 5 प्रतिशत से अधिक वृद्धि दर प्राप्त करना और आने वाली योजनाओं में इस दर को बनाए रखना।
2. खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता एवं उद्योग व निर्यात हेतु कृषि उत्पादन को बढ़ावा
3. आधारभूत उद्योगों का विस्तार
4. संसाधनों का पूर्ण उपयोग एवं रोजगार के अवसरों का पर्याप्तविस्तार सुनिश्चित करना
5. समानता के बेहतर अवसरों का विकास एवं आय व संपत्ति की विषमताएं कम करना तथा धन के समान वितरण की उचित व्यवस्था करना।

5.2.4 चौथी पंचवर्षीय योजना

इस योजना का उद्देश्य 'न्याय के साथ वृद्धि' (Growth with Justice) रखा गया। इस योजना में निम्नलिखित उद्देश्य थे –

1. समानता और सामाजिक न्याय को प्रोत्साहित करने वाले कार्यक्रमों के माध्यम से जीवन स्तर को ऊँचा उठाना।
2. विशेष रूप से रोजगार व शिक्षा के माध्यम से समाज के पिछड़े एवं दुर्बल वर्गों की स्थिति में सुधार लाना।
3. समानता बढ़ाने के लिए संपत्ति, आय व आर्थिक सत्ता के केंद्रीकरण को रोकना।

5.2.5 पाँचवी पंचवर्षीय योजना

इस योजना में 'स्थायित्व के साथ विकास' का उद्देश्य रखा गया। इस योजना के दो मुख्य उद्देश्य थे –

1. गरीबी दूर करना
2. विकास दर में वृद्धि, आय का सही वितरण एवं घरेलू बचत में वृद्धि।

इसमें पिछड़े क्षेत्रों के विकास की कोशिश की गयी। पिछड़े क्षेत्रों को दो वर्गों में बांटा गया-

1. भौगोलिक परिस्थिति संबंधी क्षेत्र– विशिष्ट संस्कृति वाले क्षेत्र
2. आर्थिक दृष्टि से पिछड़े क्षेत्र

इस योजना में क्षेत्र –विशेष की संकल्पना बनी तथा सूखा प्रभावित, अनुजाति एवं अनुसूचित जनजाति आदि क्षेत्रों के लिए कार्यक्रम तैयार किए गए। सिंचाई योजनाओं, वनीकरण, मृदा संरक्षण, कृषि, पशुपालन, परिवहन ढांचे, ऊर्जा एवं पेयजल पर ध्यान दिया गया।

इसी पंचवर्षीय योजना में बीस सूत्री कार्यक्रम प्रारंभ किया गया साथ ही एक न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम प्रारंभ किया गया –

1. 44 वर्ष तक की आयु के बालक-बालिकाओं को प्राथमिक शिक्षा की सुविधा प्रदान करना।
2. सभी क्षेत्रों में न्यूनतम सामुदायिक स्वास्थ्य सुविधा प्रदान करना।
3. पेयजल संकट वाले क्षेत्रों में पेयजल की आपूर्ति करना।

4. परिवहन ढांचे को बेहतर बनाने हेतु सड़कों का निर्माण।
5. मजदूरों को आवास हेतु भूखंड देना।
6. ग्रामीण विद्युतीकरण।

5.2.6 छठवी पंचवर्षीय योजना

यह पंचवर्षीय योजना ' गरीबी हटाओ ' के उद्देश्य के साथ प्रारंभ की गयी । इस योजना के उद्देश्य निम्नलिखित थे –

1. अर्थव्यवस्था को मजबूत करना।
2. निर्धनता उन्मूलन
3. कृषि एवं उद्योग क्षेत्र के आधारभूत ढ़ांचे को मजबूत करना
4. विशेष परियोजना निर्माण
5. संसाधनों का बेहतर उपयोग करते हुए उत्पादकता को बढ़ाना
6. बेरोजगारी को दूर करना निर्धनता उन्मूलन
7. घरेलू ऊर्जा स्रोतों का तेजी से विकास
8. लोगों की (विशेषत: वंचित तबके के) जीवन गुणवत्ता में सुधार
9. जनजातियों एवं सेवाओं में पुनर्वितरण पर बल
10. पारिस्थितिकीय संसाधनों का संरक्षण
11. सहभागीमूलक विकास प्रक्रिया पर जोर
12. राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम आदि के माध्यम से रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना।

5.2.7 सातवी पंचवर्षीय योजना

इस योजना में ' उत्पादनकारी रोजगार' पर जोर दिया गया। इस योजना में सामाजिक न्याय की प्राप्ति के उद्देश्य को भी महत्ता प्रदान की गयी । इस योजना के उद्देश्य निम्नलिखित थे –

1. अनाज उत्पादन में वृद्धि
2. रोजगार के अवसर बढ़ाना
3. उत्पादकता का विकास
4. आत्मनिर्भरता एवं सामाजिक न्याय की प्राप्ति
5. लघु एवं खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों को प्रोत्साहित करना
6. प्रौद्योगिकी के माध्यम से खेती की उत्पादकता को बढ़ाना
7. ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत संरचना का तेजी से विकास
8. अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियों के लिए सामाजिक– आर्थिक कार्यक्रम ।

5.2.8 आठवी पंचवर्षीय योजना

इस योजना का उद्देश्य सामाजिक नीति के अंतर्गत 'मानव संसाधन विकास' पर बल देना था। इस योजना में ढाँचागत समायोजन नीति को अपनाया गया। इस योजना के उद्देश्य निम्नलिखित थे –

1. बेहतर आर्थिक विकास
2. कृषि एवं संबंधित क्षेत्रों का बेहतर विकास
3. आयात-निर्यात क्षेत्र का बेहतर विकास
4. वित्तीय घाटे में कमी लाना
5. रोजगार के अवसर बढ़ाना
6. जनसंख्या वृद्धि नियंत्रित करना
7. प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण
8. पेयजल तथा प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं को उपलब्धकराना
9. वृद्धि की प्रक्रिया को सतत बनाए रखने के लिए आधारभूत संरचना को मजबूती प्रदान करना

5.2.9 नौवी पंचवर्षीय योजना

इस योजना का उद्देश्य 'सामाजिक न्याय एवं समानता के साथ विकास' रखा गया। इस योजना में निम्नलिखित उद्देश्यों पर जोर दिया गया –

1. कृषि एवं ग्रामीण विकास को प्राथमिकता
2. मूल्य स्थिरता के साथ वृद्धि दर में तेजी
3. सभी के लिए आहार एवं पोषण की सुरक्षा
4. पेयजल, प्राथमिक स्वास्थ्य, सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा, आवास एवं परिवहन सुविधाओं की उपलब्धता
5. जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण
6. महिलाओं, समाज के पिछड़े वर्ग के लोगों (जैसे – अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति आदि) तथा अल्पसंख्यकों को सामाजिक – आर्थिक परिवर्तन तथा विकास के लिए अधिकार सम्पन्न करना।
7. पंचायत संस्थाओं, सहकारी एवं स्वयंसेवी समूहों का विकास
8. आत्मनिर्भरता
9. विदेशी व्यापार को मजबूत करना
10. पर्यावरणीय धारणीयता

5.2.10 दसवी पंचवर्षीय योजना

इस योजना का उद्देश्य 'समता व न्याय के साथ विकास' था। इस योजना में त्रिसूत्री रणनीति अपनायी गयी –

1. कृषि विकास पर जोर ताकि ग्रामीण निर्धनों को अधिकाधिक लाभ पहुँचाया जा सके
2. लाभकारी रोजगार अवसर सृजित करने वाले क्षेत्रों – निर्माण, परिवहन, सूचना प्रौद्योगिकी, सेवा, लघु उद्योग, पर्यटन, खाद्य प्रसंस्करण आदि – का तीव्र विकास
3. लाभ से वंचित समूहों के लिए विशेष कार्यक्रम

इस हेतु गरीबी उन्मूलन, स्वच्छ पेयजल उपलब्धता, शिशु मृत्युदर में कमी, रोजगार में वृद्धि, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण, विद्युतीकरण, परिवहन सुविधाओं का विकास, ग्रामोद्योगों के विकास पर जोर दिया गया। इस योजना में निम्नलिखित उद्देश्य थे –

1. गरीबी को घटाना
2. जनसंख्या वृद्धि की दशकीय वृद्धि दर को कम करते हुए 16.2 प्रतिशत तक लाना
3. लाभकारी रोजगार सृजन
4. सभी को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराना
5. साक्षरता दर 75 प्रतिशत करना
6. मातृ मृत्युदर को कम करते हुए 45 प्रति हजार तक लाना
7. स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराना
8. वनाच्छादित क्षेत्र को बढ़ा कर 25 प्रतिशत करना
9. नदियों के प्रदूषण को कम करना
10. प्रादेशिक असमानता को कम करना
11. विकास प्रक्रिया में जनता की सहभागिता प्राप्त करना

5.2.11 ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना

इस योजना का उद्देश्य 'समावेशी विकास' था। इस योजना के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित थे –

1. शिक्षित बेरोजगारी को कम करना एवं रोजगार के नए अवसर बढ़ाना
2. श्रमिकों की मजदूरी में वृद्धि करना
3. प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने हेतु आधारभूत संरचना का विकास करना
4. उच्च शिक्षा में नामांकन बढ़ाना
5. शिशु मृत्युदर में कमी लाना
6. विभिन्न सरकारी योजनाओं में महिलाओं एवं बालक-बालिकाओं को लाभ प्रदान करने को सुनिश्चित करना
7. पर्यावरणीय स्थिरता
8. अवसर की समानता

5.2.12 बारहवीं पंचवर्षीय योजना

इस योजना का उद्देश्य 'तीव्र धारणीय एवं अधिक समावेशी विकास' है। इस योजना के मुख्य लक्ष्य निम्नलिखित हैं –

आर्थिक विकास

1. सकल घरेलू उत्पाद का 8 प्रतिशत की दर से वास्तविक विकास।
2. 4.0 प्रतिशत की दर से कृषि विकास।
3. 10.0 प्रतिशत की दर से विनिर्माण विकास।
4. प्रत्येक राज्य द्वारा ग्यारहवीं योजना की तुलना में बारहवीं योजना में औसत विकास दर प्राप्त करना

5. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, पूर्ववर्ती आकलनों की तुलना में, प्रति व्यक्ति उपभोग गरीबी में 10 प्रतिशत अंकों की कमी।
6. बारहवीं पंचवर्षीय योजना में, गैर-कृषि क्षेत्रक में 50 मिलियन नए कार्य अवसरों का सृजन तथा इतनी ही संख्या में कौशल प्रमाण-पत्र प्रदान करना।

शिक्षा

7. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, स्कूल शिक्षा के औसत वर्षों की संख्या को बढ़ाकर सात वर्ष करना।
8. अर्थव्यवस्था में कौशल आवश्यकता के अनुरूप, प्रत्येक उम्र के लिए 20 लाख अतिरिक्त सीटों का सृजन कर उच्चतर शिक्षा तक पहुंच बढ़ाना।
9.विद्यालय पंजीकरण में लैंगिक तथा सामाजिक अंतराल(लड़कियों तथा लड़कों के बीच और अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, मुसलमानों तथा शेष आबादी के बीच) को बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक दूर करना।

स्वास्थ्य

10. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, शिशु मृत्यु दर को घटाकर 25 ,मातृ मृत्यु दर को घटाकर1 प्रति 1000 जीवित जन्म के स्तर तक लाना तथा बाल लिंग अनुपात(0-6 वर्ग) को सुधार कर 950 तक लाना।
11. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, कुल प्रजनन दर को घटाकर 2.1 करना।
12. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक,0-3 वर्ष तक के बच्चों में कुपोषण को घटाकर एनएफएचएस-3 स्तरों के आधे पर लाना।

ग्रामीण अवसंरचना सहित अवसंरचना

13. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, अवसंरचना में निवेश को बढ़ाकर सकल घरेलू उत्पाद के 9 प्रतिशत पर लाना।
14. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, सकल सिंचित क्षेत्र को 90 मिलियन हेक्टेयर से बढ़ाकर 103 मिलियन हेक्टेयर करना।
15. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, सभी गांवों को बिजली उपलब्ध कराना तथा एटी एंड सी नुकसानों को कम कर 20 प्रतिशत पर लाना।
16. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, सभी गांवों को बारहमासी सड़कों से जोड़ना।
17. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, राष्ट्रीय और राज्य राजमार्गों को न्यूनतम दो लेन के मानदंड पर लाना।
18. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, पूर्वी तथा पश्चिमी समर्पित माल ढुलाई गलियारे को पूरा करना।
19. ग्रामीण टेली-डेंसिटी को बढ़ाकर बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक 70 प्रतिशत करना।
20. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक,यह सुनिश्चित करना कि ग्रामीण आबादी के 50 प्रतिशत को नल द्वारा 40 प्रतिशत पेयजल की आपूर्ति सुलभ हो तथा 50 प्रतिशत ग्राम पंचायतों को निर्मल ग्राम का दर्ज़ा मिले।

पर्यावरण और धारणीयता

21. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक, हरित-क्षेत्र (उपग्रह की तस्वीरों से की गई माप के अनुसार) में प्रतिवर्ष 1 मिलियन हेक्टेयर की वृद्धि।
22. बारहवीं योजना में नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता में 30,000 मेगावाट की वृद्धि।
23. सकल घरेलू उत्पाद की उत्सर्जन सघनता को 2020 तक 20 से 25 प्रतिशत घटाने (2005 के स्तरों की तुलना में) का लक्ष्य।

सेवा प्रदायगी

24. बारहवीं योजना के अंत तक 90 प्रतिशत भारतीय परिवारों तक बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराना।

25. बैंक खातों से जुड़े 'आधार' प्लेटफार्म का उपयोग करके बारहवीं योजना के अंत तक, मुख्य सब्सिडियों और कल्याण संबंधी लाभार्थी भुगतानों को ''प्रत्यक्ष नकदी हस्तान्तरण'' योजना के अन्तर्गत लाना।

1.3 सारांश

आजादी के पश्चात भारतीय लोकतंत्र में सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए मिश्रित अर्थव्यवस्था का मार्ग चुना और सरकारी क्षेत्र के जरिए व्यापक आधारभूत संरचना के काम को तरजीह दी। इससे जनता को आधारभूत सुविधाएं मुहैया हुई। पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से सरकार ने विभिन्न क्षेत्रों को समयानुसार तरजीह दी और विशेष कार्यक्रम प्रारंभ कर सामाजिक एवं आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त किया। लोगों को रोजगार, आवास, शिक्षा,स्वास्थ्य, स्वच्छ पेयजल, विद्युत, परिवहन इत्यादि सुविधाएं आसानी से उपलब्ध कराने के लक्ष्य को सामने रख कर पंचवर्षीय योजनाओं में विस्तृत कार्य किए गए। कई बार सामाजिक एवं आर्थिक रूप से वंचित समुदायों को सशक्त करने हेतु विशेष कार्यक्रम चलाए गए। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, महिला, बाल, वृद्ध, विकलांग, अल्पसंख्यक आदि समुदायों को समाज की मुख्यधारा में स्थान प्रदान करने और उन्हें सक्षम बनाने हेतु सरकारी नीतियां और कार्यक्रम बनाए गए। इसका लक्ष्य समाज में होने वाले विकास को समावेशी बनाना और विकास का लाभ समस्त लोगों तक पहुँचाना रहा है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के उद्देश्य एक समतापूर्ण समाज की स्थापना के लक्ष्य को प्राप्त करने के साधन रहे हैं।

5.4 बोध प्रश्न

1. पंचवर्षीय योजनाओं और सामाजिक नीति के मध्य संबंध स्फष्ट कीजिए।
2. पंचवर्षीय योजनाओं की आवश्यकता क्यों हुई ?
3. टिप्पणी लिखिए –

अ) पांचवीं पंचवर्षीय योजना   आ) दसवीं पंचवर्षीय योजना   इ) बारहवीं पंचवर्षीय योजना

5.5 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

- पाण्डेय, बालेश्वर (2013). समाज कार्य : सिद्धांत एवं पद्धतियां जयपुर : रावत पब्लिकेशंस.
- सिंह, प्रो. सुरेंद्र, मिश्र, प्रो.पी.डी. , सिंह, डॉ. ए.एन. (2006). भारत में सामाजिक नीति, नियोजन एवं विकास . लखनऊ : देवा पब्लिकेशंस
- व.म.खु.वि. (2014). *सामाजिक कल्याण प्रशासन : नीति,नियोजन और विकास*. कोटा : व.म.खु.वि.
- ***planningcommission****.gov.in/*
- https://hi.wikipedia.org/wiki/भारत_ का_योजना_आयोग
- Singh, Mohinder (1996). *Social Policy and Administration in India*. New Delhi: M.D. Publications Pvt. Ltd.

खंड 3

सामाजिक नियोजन

इकाई 1

सामाजिक नियोजन : अवधारणा, अर्थ, परिभाषाएँ उद्देश्य एवं प्रक्रिया

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 सामाजिक नियोजन अवधारणा अर्थ, परिभाषा
1.3 सामाजिक नियोजन का उद्देश्य एवं प्रमुख विशेषताएँ
1.4 सामाजिक नियोजन के लक्ष्य
1.5 सामाजिक नियोजन क्रिया के रूप में
1.6 सारांश
1.7 बोध प्रश्न
1.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.0 उद्देश्य –

इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप -

- सामाजिक नियोजन की आवधारणा से परिचित हो सकेंगे।
- सामाजिक नियोजन के अर्थ एवं परिभाषा की व्याख्या कर सकेंगे।
- सामाजिक नियोजन के उद्देश्यों एवं प्रक्रियाओं को रेखांकित कर सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

1.1 प्रस्तावना –

वर्तमान समय में समाज में नियोजन शब्द अत्यधिक प्रासंगिक हो चुका है तथा इसका प्रयोग अत्यधिक होने लगा है। सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत यह एक प्रमुख विषय के रूप में उभरा है। नियोजन की आवश्यकता प्रत्येक काल में रही है क्योंकि नियोजन के बिना विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना आसान नहीं है। नियोजन की प्रक्रिया में सर्वप्रथम लक्ष्य निर्धारित किया जाता है। तथा इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कार्यक्रम की रूपरेखा समस्याओं को ध्यान में रखते हुए तैयार की जाती है। सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए सामाजिक नियोजन आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति एवं समाज संतुलित सामाजिकआर्थिक व्यवस्था चाहता है जिससे कि वह समाज में उपलब्ध समस्त साधनों का सर्वोत्तम उपयोग कर सके। तथा उसे सुख गति एवं समृद्धि के साथसाथ संतोष प्राप्त हो सके। इसलिए वह अपने जीवन के विविध क्षेत्रों में योजनाओं का प्रयास करता है।

नियोजन के बिना किसी भी कार्यकलाप को पूरा नहीं किया जा सकता। यहां हम क्रमबद्ध नियोजन के बारे में चर्चा कर रहे हैं जिसका अर्थ भावी कार्यों को पूरा करने की पहले से योजना बनाना है। हम भविष्यमें सही कदम उठाने के लिए अपने आप को तैयार कर रहें हैं ताकि जनसाधारण की बेहतरी के लिए निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकें। नियोजन का अभिप्राय किसी भी कार्य के अंत तक पहुंचना है और कार्यान्वयन, परीक्षण और मूल्यांकन जैसे प्रबंध के अन्य पहलुओं से भलीभांति सामंजस्य स्थापित करके अपने लक्ष्य की प्राप्ति करना है। अत: नियोजन की अवधारणा को प्रबंध के महत्वपूर्ण प्रकार्य के रूप में समझा जा सकता है जो मुख्यतया क्रमबद्ध तरीके से क्या, कौन सा, कहां, कब, कितना पर विचार करते हुए उद्देश्य, कार्यकलाप और संसाधनों के बारे में निर्णय लेने और यह देखने से संबंधित है कि समूह किस प्रकार कार्य करेगा।

नियोजन पूर्व निर्धारित एक बौद्धिक प्रक्रिया है तथा मानव जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है। सामाजिक कार्य व्यवस्थित रूप में हो जिससे कि वांछित लक्ष्य प्राप्त किया जा सके। इसके लिए नियोजन प्रबंध का एक महत्वपूर्ण कार्य है। लक्ष्य निर्धारित करना, लक्ष्य प्राप्ति के मार्ग बनाना ही नियोजन है। अर्थात इसका तात्पर्य यह है कि वर्तमान में हम अपनी कठिनाईयों को देखते हैं, कमियों एवं शक्तियों का आकलन करते हैं। यानी हम कहाँ है और कहाँ जाना चाहते हैं, दोनों के मध्य खाई को पाटने की क्रियाविधि नियोजन है। भविष्य के लिए कार्यविधियों, प्रकृतियों एवं कार्यक्रमों की रूपरेखा बनाना, इसके लिए संगठन निर्देशन, नियंत्रण और समन्वय आदि कार्य नियोजन के अंतर्गत किए जाते हैं। नियोजन केवल कार्य सूची बनाना ही नहीं है और न ही यह एक राजनीतिक आदर्शवाद है बल्कि नियोजन बुद्धिमत्तापूर्ण, विवेकपूर्ण तथा वैज्ञानिक पद्धति है जिसके अनुसार हम अपने आर्थिक तथा सामाजिक उद्देश्यों को निर्धारित एवं प्राप्त करते हैं।

1.2 सामाजिक नियोजन : अवधारणा, अर्थ एवं परिभाषा –

नियोजन एक विवेकपूर्ण प्रक्रिया है जो समस्त मानव व्यवहारों में पायी जाती है। किसी भी संगठन में व्यवस्थित और उद्देश्य पूर्ण कार्यों के लिए नियोजन अनिवार्य है। साधारण रूप से नियोजन का अभिप्राय उचित ढंग से सोच विचारकर आगे बढ़ना अर्थात सावधानी पूर्वक यह तय करना कि क्या किया जाना है। नियोजन समाज के अतर्गत सामाजिक संबंधों के प्रतिमान को सुनिश्चित करते हुए सामाजिक स्थिरता उत्पन्न करता है। इससे समाज के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक, राजनीतिक, संचार, परिवहन इत्यादि सभी पक्षों को विकास के सुअवसर प्राप्त होते है। नियोजन द्वारा मांग तथा पूर्ति आवश्यकता तथा संसाधनों में समन्वय स्थापित किया जाता है। नियोजन के अभाव में बेकारी तथा मूल्यों में वृद्धि होती है तथा निर्धन वर्ग का शोषण होता है। नियोजन के फलस्वरूप समाज कल्याण में वृद्धि होती है। क्योंकि नियोजन से समाज के निर्बल एवं शोषित वर्गों को शोषण का शिकार बनने से सरलता पूर्वक रोका जा सकता है तथा इन वर्गों के लोगों को जीवन की मुख्य धारा में, सफलतापूर्वक भाग लेने में समर्थ बनाया जा सकता हैं।

अर्थ एवं परिभाषा –

सामाजिक नियोजन दो शब्दों से मिलकर बनी है। सामाजिक + नियोजन । सामाजिक शब्द का अभिप्राय समाज से संबंधित मामलों से है। समाज में अनेक प्रकार के संबंध पाये जाते है जैसे पारिवारिक संबंध, शैक्षिक संबंध, धार्मिक संबंध, राजनीतिक संबंध, शैक्षिक संबंध, औद्योगिक संबंध आदि। नियोजन में लक्ष्यों के निर्धारण, लक्ष्य पूर्ति के लिए संसाधनों की व्यवस्था ही नहीं की जाती बल्कि ऐसी क्रियाओं के संगठित रूपों का प्रयोग किया जाता है जो सामान्य सामाजिक व्यवस्था से उत्पन्न होते हैं। जब हम लक्ष्य का पूर्व निर्धारण कर लेते है तो उसे प्राप्त करने के कई

विकल्प हमारे सामने उपस्थित हो जाते हैं। इन विकल्पों में सर्वोतम विकल्पों के चुनाव की मानसिक प्रक्रिया नियोजन है। नियोजन के अंतर्गत स्थितियों तथा संभावित परिवर्तनों की उपयोगिता को ध्यान में रखकर एक नियमित व्यवस्थित तथा सुगठित लक्ष्यों रूपरेखा तैयार की जाती है ताकि भावी परिवर्तन को अपेक्षित लक्ष्यों के अनुरूप नियंत्रित निर्देशित तथा संशोधित किया जा सके।

सामाजिक नियोजन शब्द के विवेचना के बाद हम कह सकते हैं कि सामाजिक नियोजन वह नियोजन है जो सामाजिक व्यवस्था या उससे अन्तर्सम्बंधित व्यवस्थाओं को पूर्ण या आंशिक रूप से एक निश्चित दिशा में, अपेक्षित परिवर्तन लाने के लिए, एक चेतन एवं संगठित प्रयास करता है। नियोजन का उद्देश्य एक निश्चित दिशा में परिवर्तन लाने के लिए योजना का निर्माण करना है।

परिभाषाएँ

ए.जे. कान्ह के अनुसार – सामाजिक नियोजन के अंतर्गत वैयक्तिक और सामूहिक विकास एवं जीवन यापन के लिए गारंटी युक्त न्यूनतम संसाधनों के कार्यान्वियन एवं अपने सदस्यों के लिए अपनी अभिलाषाओं एवं उद्देश्य की प्राप्ति हेतु समाज के प्रयास समाहित है।

एंडरसन एवं पार्क के अनुसार– *"सामाजिक नियोजन किसी समाज अथवा इसके किसी भाग हेतु, पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निर्मित कार्यक्रम का विकास है।"* दूसरे शब्दों में, नियोजन इस बारे में निर्णय है कि हमें क्या करना है, किसके लिए करना है तथा इसमें प्रभावित लोगों को किस प्रकार सम्मिलित किया जाता है।

एन.वी. सोवानी के अनुसार –"सामाजिक नियोजन भूमि सुधार, असमानता में कमी, आय का साम्यपूर्ण वितरण, लोगों तथा क्षेत्रों में कल्याण एवं समाज सेवाओं के विस्तार, अधिक सेवायोजन तथा मात्र एक दूसरे जुड़ी हुई नहीं बल्कि एकीकृत योजनाओं एवं नीतियों इत्यादि की एक प्रकिया हैं।"

सारत: सामाजिक नियोजन एक ऐसी प्रक्रिया है जो मानवीय संसाधनों के समुचित विकास हेतु समाज की विविध प्रकार की आवश्यकताओं एवं उपलब्ध संसाधनों के बीच प्राथमिकता के आधार पर सामंजस्य स्थापित करती है।

सामाजिक नियोजन का उद्देश्य एवं प्रमुख विशेषताएँ–

सामाजिक नियोजन का उद्देश्य -

1. सामाजिक नियोजन का उद्देश्य सामाजिक समस्याओं की पुनरावृत्ति को रोकना एवं समाज के विभिन्न भागों के मध्य संबंधों का समन्वित अनुकूलन उत्पन्न करना है।

2. सामाजिक नियोजन का कार्य मानव जीवन को श्रेष्ठतर एवं समृद्ध बनाने के साधनों की व्यवस्था करना है।

3. सामाजिक नियोजन का कार्य हमारी संस्कृति को वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार अनुकूलित करना है।

4. सामाजिक नियोजन का उद्देश्य हमारी संस्कृति एवं सामाजिक संस्थाओं के मध्यव्यापक अंतर को दूर करना है।

5. सामाजिक नियोजन जीवन की परिवर्तित परिस्थितियों के साथ संस्थाओं के अनुकूलन द्वारा हमारी सामाजिक संस्थाओं को हमारी भौतिक संस्कृति से पृथक करने वाली विभाजन रेखा को समाप्त करता है।

6. सामाजिक नियोजन का उद्देश्य समाज की संरचना को इस प्रकार से परिवर्तित करना है ताकि तार्किक एवं विवेकशील ढंग से निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सके।

7. सामाजिक नियोजन का उद्देश्य व्यक्तियों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अधिक अवसर प्रदान करना है ताकि वे अधिक समृद्ध जीवन व्यतीत कर सकें।

8. सामाजिक नियोजन जनसमूह के कल्याण का मार्ग है अर्थात् इसका उद्देश्य समाज को और अधिक कल्याणकारी बनाना है। विद्वानों ने जनसमूह के कल्याण को नियोजित सामाजिक परिवर्तन का प्रमुख आधार माना है। उनके अनुसार नियोजित सामाजिक परिवर्तन का उद्देश्य व्यक्तियों की अधिकतर इच्छाओं को पूर्ति करना तथा उन्हें कम-से-कम निराश एवं हतोत्साहित करना है।

9. समाज में उपलब्ध भौतिक एवं मानवीय शक्तियों का अधिकतम प्रयोग करने की क्षमता में वृद्धि करना भी सामाजिक नियोजन का एक मुख्य उद्देश्य है।

10. सामाजिक नियोजन का एक अन्य उद्देश्य समाज को निश्चित दिशा की ओर ले जाने के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करना भी है।

11. जनता के मूल्यों, मनोवृत्तियों एवं विश्वासों में परिवर्तन लाना ताकि लोग समयानुकूल समाज के परिवर्तित लक्ष्यों से तालमेल रख सकें।

12. सामाजिक नियोजन का उद्देश्य युद्ध, क्रान्ति या बिना संकट के वांछनीय परिवर्तन लाना है। यह परिवर्तन विविध प्रकार की सांस्कृतिक मान्यताओं; जैसे सांस्कृतिक एकता, परिवार नियोजन, शिक्षा की समुचित व्यवस्था, व्यवसायों की बहुलता, समान एवं अधिकाधिक अवसर प्रदान करके एवं तकनीकी का विकास करके लाया जा सकता है। सामाजिक नियोजन का उद्देश्य व्यक्तियों में सहयोग, सहकारिता एवं सामाजिक सुरक्षा की भावनाएँ विकसित करना तथा प्रतिस्पर्द्धा एवं संघर्ष जैसी विघटनकारी शक्तियों को नियमित करना भी है।

13. न्याय, एकता, स्वतन्त्रता और अधिकारों के बीच व्यक्ति के व्यक्तित्व को यशाशक्ति विकसित होने का पूर्ण अवसर प्रदान करना है।

14. सभी प्रकार के भौतिक एवं जन-साधनों का विकास करना, लोगों को सम्पूर्ण रोजगार के अवसर उपलब्ध करना, आय में निरन्तर वृद्धि करना, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिरता तथा आर्थिक ढाँचे में सन्तुलन बनाये रखना।

15. साम्राज्यवाद और अन्तर्राष्ट्रीय संघर्षों की समाप्ति कर सभी देशों का विकास करना।

सामाजिक नियोजन की प्रमुख विशेषताएँ –

1) निश्चित लक्ष्य – सामाजिक नियोजन का लक्ष्य निश्चित होता है। विकासशील देशों में नियोजन का लक्ष्य मुख्यत: उत्पादन बढ़ाना, प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग करना, उत्पादकता बढ़ाना अतिरिक्त जनशक्ति का समुचित उपयोग करना तथा आय में समानता लाना होता है।

2) आधारभूत लक्ष्यों की प्राथमिकता – सामाजिक नियोजन से समाज की मूलभूत लक्ष्योंकी प्राथमिकता तय की जाती है। खासतौर से विकासशील देशों में आवश्यकताएँ अधिक होती है तथा संसाधन सीमित होते हैं इसके कारण नियोजकों द्वारा प्राथमिकता का निर्धारण किया जाता है। नियोजन का प्रमुख लक्ष्य कृषि एवं उद्योगों में समन्वय करना तथा आत्मनिर्भर बनाना होता है। आयात कम करने एवं निर्यात को बढ़ावा देते हुए उद्योगों को बढा ने का प्रयास किया जाता है। मानवीय संसाधनों के विकास हेतु समुचित साधनों का प्रयोग करते हुए इनको उचित स्थान प्रदान किया जाता है।

3) आर्थिक एवं सामाजिक उत्पादकता में वृद्धि – सामाजिक नियोजन में आर्थिक एवं सामाजिक उत्पादकता में वृद्धि लाने का प्रयास किया जाता है। नियोजन में आर्थिक उत्पादकता जैसे कृषि, क्षेत्र, उद्योगों को बढ़ावा तो दिया जाता ही है साथ ही सब असामाजिक तत्वों को नष्ट कर सामाजिक तत्वों को सबल एवं कार्यात्मक बनाने की भरपूर कोशिश की जाती है।

4) अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन योजनाएँ – सामाजिक नियोजन के अंतर्गत अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन योजनाएँ तैयार की जाती है क्योंकि अल्पकालीन योजनाएँ प्राय: वार्षिक होती है जबकि दीर्घकालीन योजनाएँ लम्बी अवधि तक चलती है। सामाजिक नियोजन में समय महत्वपूर्ण होता है। भारत में सामाजिक नियोजन के लिए योजना आयोग बनाया गया था जिसके माध्यम से पंचवर्षीय योजनाओं की रूपरेखा तैयार की जाती थी लेकिन जनवरी 2015 से नीति आयोग योजनाओं के निर्माण हेतु कार्य कर रहा है।

5) साधनों का समुचित वितरण – समाज में साधनों के अभाव को दूर करने के लिए या अभाव के कारण उत्पन्न आवश्यकता की पूर्ति के लिए नियोजन की आवश्यकता पड़ती है। नियोजित व्यवस्था में साधनों का वितरण इस प्रकार किया जाता है कि न्यूनतम साधनों के माध्यम से अधिकतम क्षेत्रों के सभी व्यक्तियों को अधिक से अधिक लाभ मिल सके।

6) जन सहभागिता का होना – नियोजन के लिए जनसहभागिता आवश्यक है। नियोजन में उन समूहों और वर्गों की सहभागिता होनी चाहिए जिन वर्गों के लिए नियोजन किया जाता है। नियोजन के फलस्वरूप इन वर्गों की स्थितियों में परिवर्तन लाने की कोशिश की जाती है। बिना जनसहभागिता के परिवर्तन का महत्व नहीं बढ़ सकता तथा उसका स्वागत नहीं हो सकता।

7) स्थितिपरक विश्लेषण – क्रमबद्ध नियोजन मौजूदा स्थिति या समस्या के विश्लेषण पर आधारित है। स्थितिपरक विश्लेषण द्वारा समस्याओं की पहचान करने में और उन्हेंप्राथमिकता देने में भी सहायता मिलती है। अत: नियोजन आनुमानिक स्थिति पर नहीं बल्कि ठोस तथ्यों और प्रमाणों पर आधारित होता है।

8) नियोजन एक चिंतन प्रक्रिया है – योजना बनाने के लिए संकल्पनात्मक कौशल का होना आवश्यक है क्योंकि यह एक बौद्धिक प्रक्रिया है। इसके लिए सोच-विचार, कल्पनाशक्ति और दूरदर्शिता, राय कायम करने, विचार पैदा करने और भविष्य की स्पष्ट छवि सर्जित करने की योग्यता का होना आवश्यक है। नियोजन का एक महत्वपूर्ण पहलू

दूरदर्शिता, अवसरों और चुनौतियों का पूर्वानुमान लगाना और यह पता लगाना है कि भविष्य में कौन-कौन सी समस्याएं हो सकती हैं और इनसे निपटने के तरीके कौन से हैं।

9) निर्णय लेने की प्रक्रिया – नियोजन, निर्णय लेने की प्रक्रिया है। प्रासंगिक जानकारी की उपलब्धता पर निर्णय की गुणवत्ता आधारित है। नियोजन के अंतर्गत उचित सूचना प्रणाली का होना अनिवार्य है ताकि समुदाय के हित के लिए सही निर्णय लिया जा सके। निर्णय किसी भी स्तर पर लिए जा सकते हैं, सामुदायिक स्तर, परियोजना स्तर, खंड स्तर या अन्य स्तर। इस प्रक्रिया में समुदाय में ऐसी क्षमता बनाने का प्रयत्न करना चाहिए ताकि वे अपनी बेहतरी के लिए खुद सही निर्णय ले सकें। यह तभी संभव है जब कार्यक्रम की नियोजन प्रक्रिया में प्रारंभ से ही समुदाय को भी शामिल किया जाए।

10) नियोजन एक गतिशील प्रक्रिया है – नियोजन एक गतिशील प्रक्रिया है। जब आप किसी प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल कार्यक्रम की योजना बना रहे हों तो आपसे संपूर्ण उपागम को अपनाने की आशा की जाती है। जिसका अर्थ है कि अस्पताल आधारित उचित सेवाएं प्रदान करने या प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं तक पहुंच स्थापित करने पर ही स्वास्थ्य निर्भर नहीं करता। ऐसे बहुत से अन्य कारक भी है जो स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं और इसका संवर्धन करते हैं जैसे कृषि, पर्यावरण और स्वस्थ्य सामाजिक व्यवहार। इसलिए यह निश्चित है कि स्वास्थ्य की योजना अलग से नहीं बनाई जा सकती क्योंकि ऐसे बहुत से अन्य संबंधित कारक भी हैं जिन्हें ध्यानपूर्वक समझने की आवश्यकता है।

1.4 सामाजिक नियोजन के लक्ष्य –

विकास के लिए सामाजिक नियोजन के माध्यम से लक्ष्यों को प्राप्त करने की कोशिश की जाती है। सामाजिक नियोजन का लक्ष्य समाज में सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक न्याय को लाना होता है। समाज में सभी को अवसरों की समानता, विचारों का स्पष्टीकरण, धार्मिक स्वतंत्रता, भाई चारे की भावना की रक्षा करना जिससे कि मनुष्य की गरिमा और उसके व्यक्तित्व की रक्षा हो सके। इसके अतिरिक्त बालिकाओं एवं बालको की निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का प्रबंध, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों तथा पिछड़े वर्गों का आर्थिक एवं शैक्षिक विकास, पोषण स्तर , जनस्वास्थ्य तथा जीवन स्तर का चयन, लोक कल्याण हेतु सामाजिक संरचना, आर्थिक असमानताओं में सामंजस्य लाने की कोशिश की जाती है। ये सभी लक्ष्य संविधान में वर्णित प्रस्तावना के आधार पर ही निर्धारित किये जाते है।

नियोजन के लक्ष्यों को मुख्यत: तीन भागों में बाँटा जा सकता है।

1) आर्थिक व्यवस्था में सुधार
2) सामाजिक-आर्थिक सामन्जस्य
3) राजनीतिक-सामाजिक परिवर्तन

i) आर्थिक व्यवस्था में सुधार – इसके अंतर्गत आर्थिक संसाधनों का समुचित उपयोग, बेगारी दूर करने के उपाय, उत्पादकता में वृद्धि, रोजगार के अवसरों में वृद्धि, राष्ट्रीय आय एवं प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि, कृषि में सुधार एवं कृषि से संबंधित उद्योगों का संतुलित विकास, शिक्षा एवं स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओं का समुचित प्रबंध शामिल है। इसके अतिरिक्त एक निश्चित समयावधि में अधिकतम सामाजिक, आर्थिक उन्नति जैसे सामाजिक सुरक्षा का प्रावधान

जिसके अंतर्गत रोजगार, उचित मजदूरी, उचित लाभ, उचित मूल्य, लगान, ब्याज आदि की दरों का निर्धारण एवं विनियमन शामिल है।

ii) सामाजिक-आर्थिक सामन्जस्य – सामाजिक नियोजन का लक्ष्य समाज में विद्यमान सामाजिक एवं आर्थिक असमानताओं को दूर करने का प्रयास करना होता है। सामाजिक नियोजन का संबंध प्रत्यक्ष रूप से, सामाजिक जीवन की समस्याओं, सामाजिक मूल्यों एवं सामाजिक सबंधों से है। सामाजिक कुरीतियों जैसे अपराध, बाल अपराध, वैश्यावृति, भिक्षावृति, जातिगत असमानता, अस्पृश्यता आदि को योजनाबद्ध रूप से समाप्त करना सामाजिक नियोजन है। आर्थिक योजना का मुख्य उद्देश्य आर्थिक व्यवस्था एवं ढांचे में सुधार लाना है यद्यपि इसका प्रभाव अंतत व्यक्तियों पर पड़ता है। वास्तव में, आर्थिक नियोजन एवं विकास भी व्यक्तियों के सहयोग के बिना असंभव है। इस प्रकार की व्यवस्था में योग्यतानुसार विकास तथा जीवनयापन के अवसर प्रदान किये जाते हैं तथा इसके अंतर्गत एक निश्चित सीमा के बाद आय में वृद्धि पर रोक लगाई जाती है। सामाजिक, आर्थिक सामंजस्य के तहत निम्नलिखित क्षेत्रों में समानता स्थापित करने का प्रयास किया जाता है

I. समान आर्थिक विकास
II. आर्थिक स्त्रोतों के उपयोग के समान अवसर
III. शिक्षा ग्रहण करने के समान अधिकार
IV. न्याय के समान अधिकार
V. सामाजिक प्रगति के समान अधिकार
VI. लाभ का समान वितरण
VII. सांस्कृतिक विकास के समान अवसर

iii) राजनीतिक-सामाजिक परिवर्तन - सामाजिक नियोजन का मुख्य उद्देश्य देश की सुरक्षा को स्थयित्व प्रदान करने के साथ-साथ उद्योगों की स्थापना करते हुए अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना होता है। सामाजिक क्षेत्र में नियोजन का लक्ष्य देश में लिंग, जाति, धर्म, रंग आदि के आधार पर भेदभाव को समाप्त करना है ताकि जीवन स्तर न केवल आर्थिक दृष्टिकोण से अपितु सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भी ऊँचा उठ सके।

1.5 सामाजिक नियोजन एक प्रक्रिया के रूप में -

नियोजन प्रक्रिया के क्रमबद्धता का पालन तार्किक रूप से करना अत्यंत आवश्यक होता है ताकि कार्यक्रम समुदाय के सदस्योंकी समस्याओं एवं आवश्कताओं के साथ सार्थक रूप से संबंधित रह सके साथ ही साथ ही साथ वे समुदाय के निर्धारित उद्देश्यों, लक्ष्यों एवं सामाजिक मूल्यों की व्यवस्था के अनुरूप प्रतिपादित एवं कार्यान्वित की जा सके। विकास के लक्ष्यों एवं उद्देश्योंको ध्यान में रखकर जो कार्यक्रम प्रस्तावित किये जाते है उन्हेंनिवेश या लागत का क्रम नाम दे देते है। क्षेत्र तथा सेवार्थियों को जिन्हें इन कार्यक्रमों से विशेष लाभ होता है, कार्यान्वयन हेतु जो निश्चित कार्य किये जाते है, उन्हें लक्ष्य कहते हैं। सामाजिक नियोजन के अंतर्गत विकास की सेवाओं का मूल्यांकन न केवल लक्ष्यों की उपलब्धि के आधार पर जाता है, बल्कि यह उद्देश्योंके संदर्भ में, कार्यक्रम की प्रभाविता के आधार पर भी किया जाता है। इस प्रभावित या प्रभाव को हम परिणाम (Out put) कहते हैं। इस प्रकार के प्रभाव को कार्यक्रम का प्रतिफल कहते हैं।

लक्ष्य की प्राप्ति हेतु अनेक उद्देश्योंको ध्यान में रखना पड़ता है। वे उद्देश्य परस्पर अन्तर्संबंधित होते हैं जिसे कार्यक्रम की रणनीति कहा जाता है। लक्ष्यों का निर्धारण करने से पहले हम उस क्षेत्र के विषय में मूलभूत जानकारियाँ

प्राप्त करते हैं तथा उस क्षेत्र में कार्यान्वित किये गये कार्यक्रमों तथा उनकी कमियों काविश्लेषण करते हैं। इस संदर्भ विश्लेषण (Context analysts) के लिए, कुछ सूचकों को आधार मानकर अध्ययन आधार वर्ष (Base Year) निर्धारित कर लेते हैं। कार्यक्रम का मूल्यांकन निश्चित किए गए लक्ष्य की प्राप्ति के आधार पर की जाती है। इन मध्यवर्ती मूल्यांकनों की इस प्रक्रिया को खण्डीय विश्लेषण के अंतर्गत किय गये कार्यक्रमों का मूल्यांकन, कमियों (gaps) की जानकारी, कार्यक्रमों में आने वाली बाधाओं, आदि का साथ-साथ विश्लेषण करते है जिसे स्थितिपरक विश्लेषण (Sectoral anlaysis) कहते हैं।

स्थिति परक विश्लेषण के आधार पर ही किसी क्षेत्र में प्रस्तावित कार्यक्रमों के उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। ये उद्देश्य राज्य तथा केन्द्र द्वारा संचालित, कार्यक्रम एवं लक्ष्यों के अनुरूप ही होते हैं। नियोजनकर्ता इन उद्देश्यों को निर्धारित कर, वर्तमान कमियों को ध्यान में रखते हुए ऐसे कार्यक्रम प्रस्तुत करता है जिससे इन कमियों को दूर किया जा सके। इन कमियों के गुणात्मक प्रभाव के साथ-साथ भौतिक उपलब्धि के दृष्टिकोण को भी ध्यान में रखना पड़ता है। इस प्रकार इनका कार्य गुणात्मक एवं परिमाणात्मक प्रतिमानों को निश्चित करना भी होता है। यह अवश्य ही ध्यान में रखा जाता है कि जो प्रतिमान केन्द्रीय सरकार ने निर्धारित किया है क्या वे इस क्षेत्र के लिए उपयुक्त है अथवा नये प्रतिमानों की आवश्यकता है। इन प्रतिमानों के आधार पर ही कार्यक्रमों का नियोजन किया जाता है।

योजना के निर्माण एवं कार्यान्वयन में सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह होता है कि उपलब्ध एवं प्रत्याशित संसाधनों का मूल्यांकन करना होता है। संसाधनों को स्थानीय स्तर पर किस प्रकार एवं कैसे गतिशील बनाया जाए। इसे भी दो भागों में विभक्त किया जाता है-

I. मानव शक्ति संसाधन या मानवीय संसाधन
II. भौतिक संसाधन

मानवीय शक्ति संसाधन के अंतर्गत श्रमिकों तथा कार्यकर्ताओं की उपलब्धता, तथा भौतिक संसाधनों के अंतर्गत इकाईयों की संख्याप्रौद्योगिकी के स्तर संसाधनों की लागत इत्यादि को सम्मिलित किया जा सकता है।

सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया को विभिन्न चरणों के माध्यम से गुजरना पड़ता है जो इस प्रकार है–

1) विकास के लक्ष्यों तथा मूल्यों का निर्धारण
2) परिस्थिति विश्लेषण
3) वर्तमान में चल रही योजनाओं के गुणात्मक तथा परिमाणात्मक आयामों का ज्ञान
4) क्षेत्रीय संगठनों का गठन ताकि सेवाओं का समुचित उपयोग हो सके
5) विशिष्ट उद्देश्यों तथा रणनीति का निर्धारण
6) खण्डीय नियोजन का कार्य (निवेश, लक्ष्य, क्षेत्र इत्यादि का निर्धारण)
7) आर्थिक तथा सामाजिक निवेशों के बीच अन्तर्सम्बन्धों की स्थापना
8) प्रशिक्षण तथा संसार सम्बन्धी प्रस्ताव
9) क्रिया नियोजन तथा कार्यों का स्पष्टीकरण
10) बजट की स्थापना

(क) सामाजिक तथा आर्थिक विकास योजनाओं का एकीकरण
(ख) प्रशिक्षण तथा अभिमुखीकरण
(ग) परिवीक्षण तथा मूल्यांकन
(घ) कार्य के लिए अपेक्षित उपकरणों का निर्माण

(ङ) सेवायें प्रदान करने की विधि का निर्धारण
(च) संस्थाकी स्थापना

सामाजिक नियोजन की आधारभूत कार्यरीति – नियोजन की प्रक्रिया के अन्तर्गत निम्न बातों का स्पष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाता है :

1. सम्भावित साधनों तथा कार्य लक्ष्यों से सम्बन्धित मूल्यों की प्राथमिकताओं का स्पष्ट चित्रण।
2. सामाजिक समस्या का उचित निदान जिस पर कार्य करने की आवश्यकता है (यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि कौन-कौन सी स्थितियाँ किस समस्या को उत्पन्न करने तथा बनाये रखने के लिए उत्तरदायी हैं)।
3. प्रचलित सामाजिक मूल्यों के साथ प्रक्रिया प्रारूप, जिसका उपयोग समाधान के लिये किये जा रहा है, की अनुरूपता का निर्धारण (यदि यह अनुरूपता सकारात्मक है तो निरोधात्मक अथवा उपचारात्मक विधि कार्य करेगी अन्यथा असफलता हाथ आयेगी।)
4. उपलब्ध ज्ञान का अवलोकन (उपलब्ध सभी सम्बन्धित तथ्यों का वर्तमान समस्या के सन्दर्भ में अध्ययन)।
5. अध्ययन के आधार पर योजना का प्रस्तुतीकरण।
6. सम्भावित परिणामों का अवलोकन
7. सम्पूर्ण कार्यान्वयन प्रक्रिया का मूल्यांकन

1.6 सारांश –

प्रस्तुत अध्याय में सामाजिक नियोजन की अवधारणा अर्थ एवं परिभाषा को समझाने का प्रयास किया गया। सामाजिक नियोजन एक ऐसी प्रक्रिया है जो समाज के मानवीय संसाधनों के समुचित विकास के लिए समाज की विविध प्रकार की आवश्यकताओं के एवं समाज में उपलब्धविभिन्न प्रकार के संसाधनों के बीच प्राथमिकता के आधार पर स्थापित किया जाता है। सामाजिक नियोजन का उद्देश्य सामाजिक समस्याओं की पुनरावृत्ति को रोकना एवं समाज के विभिन्न भागों के मध्य संबंधों का समन्वित अनुकूलन उत्पन्न करना है। सामाजिक नियोजन की प्रमुख विशेषताएँ, निश्चित लक्ष्य, आधारभूत लक्ष्यों की प्राथमिकता, आर्थिक एवं सामाजिक उत्पादकता में वृद्धि, अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन योजनाएँ, साधनों का समुचित वितरण जन सहभागिता इत्यादि की भी चर्चा की गई है। सामाजिक नियोजन के लक्ष्यों को मुख्यत: तीन भागों में बाँटकर, अर्थव्यवस्था में सुधार सामाजिक आर्थिक सामंजस्य, राजनीतिक सामाजिक परिवर्तन इत्यादि की भी चर्चा की गई है।

1.7 बोध प्रश्न

1) सामाजिक नियोजन से क्या अभिप्राय है?
2) सामाजिक नियोजन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसे परिभाषित करें।
3) सामाजिक नियोजन की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन करें।
4) सामाजिक नियोजन के लक्ष्यों को स्पष्ट करें।

1.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. धर्मवीर (2007): *परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र* जयपुर : राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी।

2. महीपाल (2012): *ग्राम नियोजन* नई दिल्ली : नेशनल ट्रस्ट बुक।

3. भूषण, बिद्या एवं सचदेवा,डी.आर. (2012): *समाजशास्त्र* नई दिल्ली : डार्लिंग किंग्सले (इंडिया) प्रा.लि.।

4. सिंह ,सुरेन्द्र एवं मिश्र,पी .डी & सिंह एएन. (2006): *भारत में सामाजिक नीति*, नियोजन एवं विकास लखनऊ :देवा पब्लिकेशन।

5. Agnihotri, I.K.&Awasthi, A.K. (1999): *Economic Principles*. Allahabad : Alok prakashn.

6. Kahan, A.J. (1969): *Studies in social policy and planning*, Newyork : Russel sage foundation.

7. Singh,Tarlok(1968): Social policy Encyclopedia of Social Work in India Vol 02 Planning commission GOI India

8.https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%86%E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%9C%E0%A4%A8

9.http://gradestack.com/IBPS-Bank-PO/-2344-2367-2351-/%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4-%E0%A4%AE%E0%A5%87%E0%A4%82/19712-4064-42792-study-wtw

इकाई – 2

सामाजिक नियोजन : प्रकार्य सिद्धांत एवं प्रकार

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 सामाजिक नियोजन के प्रकार्य
2.3 सामाजिक नियोजन के सिद्धान्त
2.4 सामाजिक नियोजन के प्रकार
2.5 सामाजिक नियोयजन को प्रभावित करने वाले कारक
2.6 सामाजिक नियोजन की सफलता के आवश्यक शर्तें
2.7 सामाजिक नियोजन के सफलता के महत्वपूर्ण तत्व
2.8 सारांश
2.9 बोध प्रश्न
2.10 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

2.0 **उद्देश्य** –

इस इकाई के अध्ययन उपरांत आप

- सामाजिक नियोजन के प्रकार्यों की व्याख्या कर सकेंगे।
- इसके विभिन्न सिद्धान्तों को रेखांकित कर सकेंगे।
- सामाजिक नियोजन के प्रकार में अंतर कर सकेंगे।
- सामाजिक नियोजन से जुड़े महत्वपूर्ण तत्वोंको रेखांकित कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

सामाजिक नियोजन एक ऐसा आंदोलन है जिस्ने हाल ही में महत्ता प्राप्त की है। अधिकांश समाज वैज्ञानिकों का मानना है कि मनुष्यको अपनी समस्याओं के प्रभावी समाधान हेतु वैज्ञानिक शोध द्वारा खोजे गए तथ्यों के आधार पर नियोजन करना चाहिए। इनका यह अनुभव है कि अधिकांशत: सामाजिक समस्याएँ मानव निर्मित होती है एवं इनका समुचित उपचार मनुष्य द्वारा किया जा सकता है। अत: मनुष्य अपने सामाजिक एवं आर्थिक विकास हेतु सामाजिक नियोजन का सहारा लेता है। सामाजिक नियोजन का प्रमुख कार्य आर्थिक विकास की निरंतर वृद्धि हेतु आवश्यक सामाजिक निवेशों को प्रोत्साहन देना है तथा उसकी उपलब्धता को सुनिश्चित कराना है ताकि मानव द्वारा

उत्पन्न किये गये ये सामाजिक निवेश, मानव समाज व व्यक्ति के जीवन स्तर को उपर उठाने में सक्रिय रूप से सहायक हो साथ ही साथ इसका कार्य सामाजिक एवं आर्थिक कारकों के बीच इच्छित समन्वय स्थापित करना है ताकि विकास प्रक्रिया तीव्र गति से चलाई जा सके। आत्मनिर्भरता की दृष्टि से विकास की प्रक्रिया का इस प्रकार कार्यान्वयन करना ताकि नियोजन, कार्यान्वयन, मूल्यांकन इत्यादि सभी स्तरों पर जन सहभागिता को प्रोत्साहित किया जा सके।

सामाजिक नियोजन के प्रकार्यों को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत समझा जा सकता है

1) विकास के प्रतिफल को समाज के विभिन्न वर्गों तक समान रूप से उपलब्ध कराने के लिए संरचनात्मक परिवर्तन तथा समाज सुधार की गति को तीव्रता प्रदान करना।
2) संस्थागत तथा प्रशासनिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाना ताकि समाज से संबंधित योजनाओं को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सके।
3) विकास के लक्ष्यों को निर्धारित करने से संबंधित निर्णय प्रक्रिया में समुदाय को संवेगात्मक रूप से सम्मिलित करना।
4) समुदाय के उत्पादन एवं उत्पादकता को अधिक से अधिक बढ़ाने के लिए प्रेरित करना।
5) स्थानीय शक्तियों स्त्रोतों तथा ज्ञान का उपयोग अधिकाधिक करना ताकि विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।
6) उचित तकनीकी ज्ञान को उपलब्ध कराना ताकि समुदाय रोजगार के अवसरों को बढ़ाया जा सके एवं निर्धन वर्ग को अधिक से अधिक लाभान्वित किया जा सके।
7) निर्धन वर्ग को लाभकारी योजनाओं, तथा कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए प्रेरित करना तथा निर्णय लेने, लिये गये निर्णयों को लाभों से लाभान्वित कराना।
8) पिछड़े वर्ग से संबंधित समुदाय को स्वास्थ्य, शिक्षा, पेयजल की उपलब्धता तथा उत्पादन एवं कार्यक्षमता स्तर को बढ़ाने के लिए विशेष अवसर उपलब्ध कराना तथा आवश्यक प्रशिक्षण का प्रबंध कराना।
9) ग्रामीण जनसंख्या के प्रवास को रोकना तथा संतुलित नगरीयग्रामीण संबंधों द्वारा जनसंख्याका समुचित वितरण प्रारूप प्रदान कराना जिससे शहरों पर बोझ कम हो सके।
10) विकास संबंधी कार्यक्रमों के लिए पर्यावरण का सावधानीपूर्वक उचित प्रयोग करना।
11) आर्थिक एवं स्थानिक नियोजन को एकीकृत करना जिससे सामाजिक विकास की प्रक्रिया बढ़ाई जा सके।
12) व्यवस्था को इस प्रकार कार्यान्वित करना कि उच्चस्तरीय प्रयासों और विकास में पारस्परिक संबंध स्थापित किया जा सके।
13) सामाजिक नियोजन के अंतर्गत समाज की आर्थिक उन्नति के साथ-साथ स्वास्थ्य, शिक्षा, कार्यक्षमता, सांस्कृतिक उन्नति, जीवन स्तर में सुधार, वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि का भी विकास महत्वपूर्ण है।

2.3 सामाजिक नियोजन के सिद्धान्त -

सामाजिक नियोजन के प्रमुख सिद्धांतों को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत समझा जा सकता है

1) समय के उचित प्रयोग का सिद्धांत – सामाजिक नियोजन की योजना बनाते समय योजना के पुरे होने का समय अवश्य निश्चित कर देना चाहिए ताकि विभिन्न कार्यक्रमों के पालन में समय का ध्यान रखा जा सके। योजना बनाते समय प्रभावकारी पक्षों का विस्तृत अध्ययन करते हुए प्राथमिकता तय करने के बाद कार्यान्वयन पर लगने वाले समय का मूल्यांकन करते हुए समय की रूपरेखा तैयार करनी चाहिए।

2) लोचशीलता का सिद्धान्त – नियोजन लोचशील होना चाहिए क्योंकि यह भविष्य के पूर्वानुमानों पर आधारित होता है। नियोजन इतना लोचशील होना चाहिए कि अनिश्चित घटनाओं के कारण होने वाली हानियों को कम किया जा सके। प्रत्येक समाज या समुदाय का सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश एवं भौतिक पर्यावरण के भिन्न होने के कारण, योजना को कार्यान्वित करते समय हमेशा एक ही रणनीति अथवा प्रणाली प्रभावी नहीं होती। अत: यह आवश्यक है योजना लचीली हो ताकि परिस्थितियों की आवश्यकतानुसार इसमें संशोधन किया जा सके। लोचशीलता से तात्पर्य है कि योजना में आसानी से परिवर्तन किया जा सके व नए मार्गों को अपनाया जा सके।

3) प्राकृतिक संसाधनों के समुचित उपयोग का सिद्धान्त - सामाजिक नियोजन करते समय, नियोजकों को यह ध्यान रखना चाहिए कि प्राकृतिक संसाधनों का उचित प्रयोग उत्पादन करने हेतु तथा उसका सावधानी पूर्वक उपयोग करने के साथ-साथ उन्हें बढ़ाने तथा सुरक्षित रखने का प्रयास करना चाहिए। प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस तरीके से करना चाहिए कि उसका दोहन न हो तथा इसकी धारणीयता भी सुनिश्चित हो सके।

4) समन्वय का सिद्धान्त – सामाजिक नियोजन मुख्यत: निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के बेहतर समन्वय पर निर्भर करता है। अल्पविकसित एवं विकासशील देशों में प्राय: समन्वय का अभाव पाया जाता है। नियोजन की सफलता बेहतर ताल मेल यानी समन्वयव पर निर्भर करती है।

5) प्राथमिकता का सिद्धान्त – इस सिद्धान्त के अनुसार नियोजन एक महत्वपूर्ण प्रबंधकीय कार्य है। सामाजिक नियोजन के दौरान सामाजिक विकास पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है अत: पिछड़े क्षेत्रों के विकास को सर्वप्रथम प्राथमिकता देना चाहिए इसके लिए अधिक धन तथा पूँजी की आवश्यकता होती है। यह पूँजी सरकार के पास सर्वाधिक उपलब्ध होती है। अत: सामाजिक नियोजन की दृष्टि से यह अधिक उपयोगी होगा कि देश में पिछड़े हुए क्षेत्रों के विकास का दायित्व केन्द्र सरकार द्वारा प्राथमिकता के साथ ग्रहण किया जाए।

6) जनसहभागिता का सिद्धान्त – किसी भी प्रकार का सामाजिक नियोजन, समाज के विकास एवं कल्याण हेतु किया जाता है। नियोजन द्वारा समाज जिन समूहों या वर्गों से संबंधित परिवर्तन होने है उनकी नियोजन में सहभागिता होनी चाहिए। क्योंकि सहभागिता के बिना समाज में परिवर्तन का महत्व नहीं समझा जा सकता साथ ही साथ सरकार के पास भी इतने तथा ऐसे संसाधन नहीं होते कि वह योजना निर्माण एवं कार्यान्वयन से संबंधित विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति संतोषजनक ढंग से केवल सरकारी तंत्र का प्रयोग करते हुए कर सके। अत:जन सहभागिता एवं जन सहयोग आवश्यक हो जाता है।

7) बचत वृद्धि एवं पूँजी सृजन का सिद्धान्त– सामाजिक नियोजन प्राय: पूँजी के आधार पर आधारित होती है। पूँजी अधिक होगी तभी योजनाएँ उचित रूप से कार्यान्वित हो पाएगी तथा लक्ष्यों की अधिकतम प्राप्ति संभव हो सकेगी। अत: नीतियों का निर्धारण एवं कार्यान्वयन इस दृष्टिकोण से करना चाहिए कि बचत हो सके तथा पूँजी का सृजन हो सके।

8) संसाधनों को आवंटन का सिद्धान्त– नियोजन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संसाधनों की आवश्यकता पड़ती है। अत: योजना के लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए आवश्यकतानुसार संसाधनों को आवंटित किया जाना चाहिए।

9) नीति संरचना का सिद्धान्त – यह सिद्धान्त यह बतलाता है कि नियोजन को सुसंगत एवं प्रभावी बनाने के लिए सुदृढ़ नीतियों कार्यक्रमों एवं समूह रचनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए।

10) मूल्यांकन का सिद्धान्त – किसी भी कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग मूल्यांकन होता है। योजना के समुचित एवं सामयिक मूल्यांकन से यह पता चलता है कि निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हो रही है, उद्देश्यों की प्राप्ति में

संसाधन कहाँ तक उपयोगी हो रहे हैं, इनकी प्राप्ति के मार्ग में कौन-कौन सी बाधाएँ है तथा इनको कैसे दूर किया जा सकता है। अत: मूल्यांकन से हमें यह जानकारी मिलती है कि कहाँ योजना में संशोधन किये जानेकी आवश्यकता है।

अवधि के आधार पर	प्रकृति के आधार पर	स्तर के आधार पर	अन्य आधार पर
1. अल्पकालिक	1. स्थायी	1. उच्च	1.भौतिक
2. मध्यकालिक	2. अस्थायी	2. मध्य	2.वितीय
3. दीर्घकालिक		3. निम्न	3.संरचनात्मक
			4.प्रकार्यात्मक

(1) अल्पकालिक नियोजन – यह सामान्यत: एक वर्ष और इससे कम की अवधि के लिए तैयार किया जाता है। इसके अंतर्गत अल्पकालीन क्रियाओं का निर्धारण इस प्रकार से किया जाता है ताकि दीर्घकालीन नियोजन के उद्देश्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सके। इसके द्वारा तात्कालीन समस्याओं को ध्यान में रखकर योजना बनाई जाती है। इसे परिचालनात्मक (Action or operational) नियोजन भी कहा जाता है। अल्पकालीन नियोजन का संबंध चूँकि अल्पकाल से होता है इसलिए इसका पूर्वानुमान लगाया जाना आवश्यक है। इनका क्रियान्वयन सफलता पूर्वक किया जा सकता है तथा इसमें आवश्यक संशोधन एवं परिवर्तन संभव है। बाढ़,भूकम्प, ऐसे प्राकृतिक या मानवीय आपदा के समय का नियोजन हो या किसी व्यापक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए, सहायक योजना के लिए किया गया नियोजन हो, दरअसल यह कार्यात्मक नियोजन होता है जो कार्य संपादित करते हुए बनाया जाता है। अल्पकालीन नियोजन की कुछ सीमाएँ हैं। इसमें उपक्रम के विकास एवं स्थायित्व को पर्याप्त महत्व नहीं मिल पाता और कर्मचारियों को निर्णयन में हिस्सेदारी देना कठिन है। इसके अलावा उतावले निर्णयों का नुकसान भी इस नियोजन में होता है।

(2) मध्यकालिक नियोजन – सामान्यता यह योजना 1 वर्ष से अधिक लेकिन 5 वर्ष से कम की अवधि की होती है तथा इनमें उन तमाम क्रियाओं का निर्धारित किया जाता है। जिनसे आधारभूत समस्या का समाधान करने में मदद मिले।

(3) दीर्घकालिक नियोजन – लम्बे समय के लिए बनाए गए नियोजन को व्यूहरचनात्मक नियोजन भी कहा जाता है। यह नियोजन संस्थाको दीर्घकाल तक प्रभावित करता है इसमें अनिश्चितता होती है। यह समयावधि संगठन की प्रकृति, आकार, विकासदर और वातावरण पर निर्भर करती है। इसमें खण्ड मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। शोध, विकास, क्षमता निर्माण, सशक्तिकरण, न्यायपूर्ण समाज व्यवस्था, आदि के लिए दीर्घकालीन नियोजन करना होता है। साधारणतया ये योजनाएं 5 वर्ष या उससे अधिक की अवधि के लिए तैयार की जाती है। आधारभूत समस्याओं को पूर्व में ही पहचानने तथा उनके बार में निर्णय लेने की बात इनयोजनाओं में निहित होती है।

प्रकृति के आधार पर नियोजन – प्रकृति के आधार पर नियोजन को दो भागों में बाँटा जा सकता है-

1) स्थायी नियोजन – यह नियोजन स्थायी प्रकार का होता हैं जिसे बार-बार उपयोग में लाया जाता है। इसमें उपक्रम की नीतियाँ, संगठन का ढाँचा, प्रमाणित प्रक्रिया एवं विधियाँ सम्मिलित की जाती है। ये दीर्घकाल तक उपयोगी बने रहते हैं। इनका निर्धारण पूर्व में कर लिया जाता है ताकि संगठन के क्रियाकलापों को व्यवस्था प्रदान करने के आधार के रूप में काम लिया जा सके।

2) अस्थायी नियोजन – यह वह नियोजन है जो किसी विशेष स्थिति के लिए बनाया जाता है और उस उद्देश्य के पूरा हो जाने के साथ ही यह समाप्त होता है। इन्हें एकल प्रयोग नियोजन के नाम से भी जाना जाता है। इनकी प्रकृति अस्थायी एवं नवीनता की होती है। बजट इसका अच्छा उदाहरण है।

स्तर के आधार पर नियोजन –

स्तर के आधार पर नियोजन को तीन भागों में बाँटा जा सकता है।

1) उच्च स्तरीय नियोजन – इस नियोजन में उच्च स्तर पर कार्य करने वाले प्रबंधको द्वारा बनाई गई योजनाएँ होती है जो कि सम्पूर्ण उपक्रम के क्रिया कलापों को प्रभावित करती है। इसमें संस्था की सामान्य नीतियाँ स्पष्ट की जाती है।

2) मध्यस्तरीय नियोजन – इन योजनाओं का निर्माण मध्यस्तरीय प्रबंधकों द्वारा किया जाता है जो कि निम्न स्तरीय नियोजन के लिए आधार का कार्य करती है।

3) निम्नस्तरीय नियोजन – निम्नस्तर पर कार्य करने वाले प्रबंधकों द्वारा बनाई गई योजनाएं, मध्यस्तरीय योजनाओं को कार्यरूप देने का कार्य करती है।

इनके अतिरिक्त नियोजन के प्रकारों को कुछ बिंदुओं के अंतर्गत समझा जा सकता है

I. **भौतिक नियोजन** – उपलब्ध भौतिक संसाधनों के आधार पर नियोजन के लक्ष्यो को भौतिक वस्तुओं के रूप में व्यक्त किया जाता है तो उसे भौतिक नियोजन के नाम से जाना जाता है। सड़क के लिए लम्बाई, भवन की संख्या, इत्यादि।

II. **वित्तीय नियोजन** – इसमें योजना के विभिन्न मदों पर व्यय का लक्ष्य निर्धारित किया जाता है। व्यय कितना और किस रूप में होगा इसका निर्धारण महत्वपूर्ण पक्ष के रूप में होता है। भौतिक नियोजन और वित्तीय नियोजन परस्पर आश्रित होते हैं। उदाहरणार्थ यदि सड़क बनानी है, इसकी लम्बाई बढ़ायी जाएगी तो वित्तीय लागत भी बढ़ेगी। रूपये के अवमूल्यन, बाजारभाव मजदूरी आदि का प्रभाव इस नियोजन पर पड़ता है। जो पूर्वानुमानके बाहर भी हो सकता है।

III. **संरचनात्मक नियोजन** – संरचनात्मक नियोजन को क्रांतिकारी नियोजन भी कहा जाता है। इसके अंतर्गत समाज की सम्पूर्ण संरचना में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है। समाज के सामाजिक-आर्थिक सांस्कृतिक ढाँचे में परिवर्तन लाने के लिए नवीन पद्धतियों का विकास करते हुए प्रयोगात्मक परीक्षण किया जाता है जिसके फलस्वरूप सामाजिक एवं आर्थिक व्यवहार के नये आयाम स्थापित होते है तथा रूढ़िवादी व्यवस्था समाप्त होती है। उदाहरण के रूप में महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज की अवधारणा और उनके प्रयोग को समझा जा सकता है। गांधी की वर्धा या सेवाग्राम परियोजना के साथ-साथ उनके ग्राम स्वराज के सपने को प्रयोग रूप में इस नियोजन को परीक्षित किया जा सकता है। आदर्श समाज व्यवस्था के लिए ऐसे कई प्रयोग किए गए है।

IV. **प्रकार्यात्मक नियोजन** – प्रकार्यात्मक नियोजन के अंतर्गत सामाजिक व्यवस्था के अभावो को जो विकास कार्य में बाधक होता है, दूर करने का प्रयास किया जाता है। प्रकार्यात्मक नियोजन का संरचनात्मक नियोजन से घनिष्ठ संबंध होता है। दीर्घकालीन कार्यान्वयन के बाद संरचनात्मक नियोजन का रूपांतरण प्रकार्यात्मक

नियोजन में हो जाता है। सामाजिक संरचना में जब परिवर्तन होता है तो सुधार की आवश्यकता होती है। समाज की संरचना में सुधार के लिए पहले संरचनात्मक नियोजन किया जाता है। भारत में छुआछूत समाज की संरचना में मौजूद था इसे विधि द्वारा निषिद्ध माना गया। फिर विभिन्न सुधारात्मक तथा निरोधात्मक नियोजन के द्वारा व्यवस्था में विद्यमान कुरीतियों को धीरे-धीरे समाप्त करने हेतु प्रकार्यात्मक नियोजन किया गया।

सुधारात्मक नियोजन –

विकास की प्रक्रिया में अवरोधों को दूर करने के लिए सुधारात्मक नियोजन किया जाता है। इसमें राज्य का हस्तक्षेप होता है। सुधारात्मक नियोजन के अंतर्गत निजी उत्पादकों एवं विनियोजकों को सहायता तथा निदेशन प्रदान किया जाता है तथा आवश्यकता पड़ने पर नियंत्रण किया जाता है। सुधारात्मक नियोजन का लक्ष्य आर्थिक अस्थिरता को दूर करना होता है किंतु राज्यअर्थव्यवस्था में आवश्यकता से अधिक हस्तक्षेप नहीं करता।

विकासात्मक नियोजन –

विकासात्मक नियोजन के अंतर्गत भौतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक उन्नति का प्रयास किया जाता है। आवश्यकतानुसार दूसरे सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक एवं समाज के विभिन्न संरचनाओं में परिवर्तन किये जाते है।

विकास की ऐसी प्रक्रिया में संसाधनों की मैपिंग की जाती है। ये संसाधन प्राकृतिक और मानवीय हो सकते हैं। प्राकृतिक संसाधन की उपलब्धता के पर्यावरणीय विश्लेषण में उसके संरक्षण का भी नियोजन शामिल है। मानवीय संसाधन की योग्यता क्रम के आधार पर मैपिंग की जाती है। उपयोग लागत का अनुमान संसाधनों के उपयोग की वरीयता/आवश्यकताओं के वरीयता क्रम के आधार पर किया जाना चाहिए। आज संतुलित, सतत और स्थायी विकास पर जोर दिया जाने लगा है क्योंकि असंतुलित विकास क्षेत्रीय विषमता को जन्म देता है। क्षेत्रीय हिंसा, नक्सलवाद इसका परिणाम माना जाता है। विकास एक सतत चलने वाली प्रक्रिया है स्थायी विकास का मूल्यांकन विकास के परिणाम के आधार पर किया जाता है। सिंचाई के लिए बांध बनाया जाना अनिवार्य है लेकिन इससे जंगल नष्ट हो, बाढ़ आए तो फिर यह विकास स्थायी परिणाम का नहीं माना जा सकता है। दीर्घकालीन योजना के प्रस्तुत करने के बाद उसे अल्पकालीन सहायक योजना में विभाजित किया जाता है। कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योग, यातायात आदि के विकास से रोजगार सृजन और जीवन स्तर में सुधार का लक्ष्य पूरा होता है।

प्रजातांत्रिक नियोजन –

प्रजातांत्रिक नियोजन जन सहभागिता एवं जन सहयोग पर आधारित होता है। यह नियोजन निम्न स्तर से प्रारंभ होकर उच्च स्तर की तरफ बढ़ता है। प्रजातांत्रिक नियोजन की सफलता राष्ट्र की जनसंख्या, उसकी शिक्षा, जागरूकता एवं अनुशासन के स्तर पर निर्भर करता है।

तानाशाही नियोजन –

तानाशाही नियोजन फासिस्ट नियोजन के नाम से जाना जाता है। इस नियोजन में उत्पादन के सभी अंगों का राष्ट्रीयकरण कर दिया जाता है। निजी क्षेत्र में केवल अधिकृत सीमित संपति रह जाती है। उत्पादन, उपभोग, विनिमय तथा वितरण सभी पर राज्य का अधिकार होता है। योजना के लक्ष्यों को केन्द्रीय नियोजन समिति निर्धारित कर देती है।

योजना के कार्यकाल को निश्चित कर दिया जाता है। तानाशाही नियोजन में निर्धारित मानदण्डों का पालन किया जाता है।

2.5 सामाजिक नियोजन को प्रभावित करने वाले कारक – सामाजिक नियोजन निम्नलिखित कारकों से प्रभावित होता है-

1) राजनीतिक इच्छाशक्ति – सामाजिक नियोजन संपूर्ण तथा अंतिम रूप से राज्यद्वारा किया जाता है। इसलिए इसमें राजनीतिक इच्छा शक्ति होनी चाहिए क्योंकि भारत में राजनीतिक नेताओं के द्वारा ही विकास योजनाओं का निर्माण किया जाता है। राजनीतिक नेताओं तथा समाज के प्रबुद्ध वर्ग के बुद्धिजीवियों के बीच प्रत्यक्ष समन्वय होना चाहिए। जिससे कि इसको प्रभावी तरीके से क्रियान्वित किया जा सके।

2) संस्थागत विकास – सामाजिक नियोजन के प्रभावपूर्ण प्रतिपादन एवं क्रियान्व्यवन के लिए उपयुक्त सामाजिक संस्थाओं का होना आवश्यक होता है। सामाजिक विकास के अंग के रूप में सामाजिक संस्थाओं को देखा जाना चाहिए। संस्थाओं का स्वस्थ विकास व्यक्तियों को विकास कार्यक्रमों में, भाग लेनें तथा लाभ उठाने के अवसर प्रदान करता है।

3) स्थानीय संसाधनों का उपयोग – स्थानीय संसाधनों का बेहतर उपयोग तथा स्थानीय संसाधनों को गतिशील बनाकर प्रभावपूर्ण सामाजिक योजना बनायी एवं क्रियान्वित की जा सकती है।

4) भूमिकाओं एवं प्रविधियों की स्पष्टता – सामाजिक नियोजन तभी प्रभावपूर्ण बन सकता है जब सामाजिक योजना के निर्माण एवं कार्यान्वयन से संबंधित भूमिका को स्पष्ट कर दिया जाए कि किस व्यक्ति की भूमिका क्या होगी तथा इसमें प्रयोग की जाने वाली प्रविधियों को भी स्पष्ट कर देना चाहिए।

5) ऐच्छिक एवं सरकारी संस्थाओं में स्पष्ट विभेद – ऐच्छिक एवं सरकारी दोनों प्रकार की संस्थाएँ अपनी-अपनी भूमिका का प्रतिपादन योजना के निर्माण एवं क्रियान्वयन में करती है। इसलिए जनता को इनके द्वारा प्रतिपादित भूमिकाओं एवं प्रविधियों की स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए जिससे इनका उचित मूल्यांकन किया जा सके।

6) स्थानीय प्रबंध तथा आत्म निपुणताएँ – विभिन्न प्रकार की सामाजिक संस्थाओं का विकास एवं प्रबंध स्थानीय स्तर पर किया जाये जिससे सामाजिक योजनाओं को प्रभावपूर्ण तरीके से कार्यान्वित किया जा सके। साथ ही साथ ये सामाजिक संस्थाएँ स्थानीय स्तर पर ऐसी निपुणताओं का स्वतः विकास कर सके जो इनकी प्रभाव पूर्ण क्रिया में सहायक सिद्ध हो सके।

7) जन संवेदनशीलता – जन संवेदनशीलता से तात्पर्य यह है कि समाज में रहने वाले लोग सामाजिक समस्याओं एवं महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दों के प्रति जागरूक रहे। यदि वे जागरूक रहते हैं तो सामाजिक नियोजन का प्रतिपादन एवं कार्यान्वयवन प्रभावपूर्ण होगा।

2.6 सामाजिक नियोजन की सफलता की आवश्यक शर्तें –

सामाजिक नियोजन तभी सफल हो सकता है जब इसका नियोजन कुछ बातों को ध्यान में रखकर की जाए। सामाजिक नियोजन की सफलता निम्नलिखित शर्तों को ध्यान में रखकर की जा सकती है-

1) वास्तविक और विस्तृत आंकड़ों की उपलब्धता – सामाजिक नियोजन के दौरान योजना बनाने का कार्य प्रारंभ करने के पहले विभिन्न प्रकार के आँकड़े उपलब्ध करने की कोशिश करनी चाहिए। ये आँकड़े सामाजिक-आर्थिक क्षेत्रों से होने चाहिए तथा ये वास्तविक एवं विस्तृत आँकड़े होने चाहिए। बचत, पूँजी निर्माण, उत्पादन, उत्पादकता,

रोजगार, बेरोजगारी, लागत, रहन-सहन, आदतों, स्वास्थ्य स्तर, शैक्षिक उपलब्धियों मनोवृतियों, मूल्यों, विश्वासों इत्यादि से संबंधित विस्तृत एवं यथार्थ सूचना उपलब्ध होनी चाहिए।

2) नियोजन के क्रमिक चरणों का समुचित उपयोग – नियोजन के कुछ चरण होते हैं इन चरणों का क्रमबद्ध तरीके से समुचित उपयोग करना चाहिए। ये चरण निम्न क्रम में हो सकते है योजना का निर्धारण, योजना का स्वीकृतिकरण, योजना का कार्यान्वयवन तथा योजना का मूल्यांकन। इन सभी चरणों का क्रमानुसार अनुपालन किया जाना आवश्यक है।

3) प्राथमिकता का उचित निर्धारण – अल्पविकसित एवं विकासशील देशें में सामान्यतः लोगों की आवश्यकता अधिक होती है तथा संसाधन सीमित होते हैं। अत नियोजन के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु, प्राथमिकताओं का निर्धारण किया जाना आवश्यक होता है। प्राथमिकता के आधार पर ही हम यह तय करते है कि कौन सा कार्य अत्यधिक आवश्यक एवं उपयोगी है तथा कम संसाधन में अधिक लाभ मिलेगा।

4) उचित राजनीतिक निर्देश – किसी भी लोकतांत्रिक देश में नियोजन की सफलता, ईमानदार कर्तव्य निष्ठ तथा उत्साही राजनेताओं पर निर्भर करती है। अत राजनेताओं का यह कर्तव्यबनता है कि वे सामाजिक नियोजन के क्षेत्र में, समुचित मार्गदर्शन एवं प्रोत्सहन प्रदान करें।

5) उचित प्रोत्साहन – योजनाओं के सफल संचालन के लिए तथा सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में कार्य करने वाले कुशल एवं कर्तव्यनिष्ठ कार्यकर्ताओं को समयसमय पर उचित पारितोषिक एवं प्रोत्साहन प्रदान करना चाहिए तथा कार्यान्वयन का दायित्व निर्धारित करने की व्यवस्था का विकास कर अयोग्य अकुशल एवं भ्रष्ट कार्यकर्ताओं को उदाहरण स्वरूप दण्ड दिया जाना चाहिए।

6) जन सहभागिता – नियोजन के लिए जनसहभागिता आवश्यक है। नियोजन के लिए जन सहयोग के उपलब्ध होने पर ही लोगों की अनुभूत आवश्यकताओं का सही पता चल सकता है तथा इनके कार्यान्वयन में जन सहभागिता हो सकती है।

7) समानता पर बल – सामाजिक नियोजन का अंतिम उद्देश्य सामाजिक-आर्थिक विषमता को दूर कर अधिक से अधिक सामाजिक तथा आर्थिक समानता को उत्पन्न करना होता है। समानता लाने के लिए निर्बल एवं समाज के कमजोर वर्गों के उत्थान पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता होती है। इसके लिए कुछ विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रम का आयोजन करते हुए इन वर्गों को विशेष सहायता प्रदान किये जाने की आवश्यकता होती है।

8) वैकल्पिक व्यवस्थाओं की अनिवार्यता– सामाजिक नियोजन के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु वैकल्पिक व्यवस्थाओं, रणनीतियों एवं साधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करनी चाहिए क्योंकि अगर कोई व्यवस्था या रणनीति असफल होती है तो उसके जगह पर अन्य विकल्प को प्रयोग में लाया जा सके।

9) अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन लक्ष्यों का निर्धारण – सामाजिक नियोजन में अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन दोनों प्रकार के लक्ष्यों का समावेश होना चाहिए। अल्पकालीन लक्ष्य अनुभव से प्राप्त आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक सिद्ध होते है तथा दीर्घकालीन लक्ष्यभावी विकास के लिए अपेक्षित संदर्भ प्रदान करते हुए प्रारंभकी गई क्रिया एवं उपलब्धि की निरंतरता को बनाए रखती है।

10) योजना का प्रचार एवं प्रसार– प्रचार एवं प्रसार के माध्यम से योजना के स्वरूप कार्यान्वयवन की रणनीति तथा प्रगति इत्यादि की जानकारी सामान्य वर्गों को प्रदान करती रहनी चाहिए ताकि अपेक्षित जन सहयोग प्राप्त होता रहे। जन सहभागिता के माध्यम से योजना को सफलता पूर्वक कार्यान्वित किया जा सकता है।

2.7 सामाजिक नियोजन के सफलता के महत्वपूर्ण तत्व

सामाजिक नियोजन आज प्रत्येक समाज में सर्वांगीण विकास के लिए अपनाया जाता है, फिर भी भारत जैसे देशों में इसका महत्व अधिक है क्योंकि इन समाजों को नागरिकों की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति एवं उनमें समानता लाने के लिए तथा विकसित देशों के बराबर पहुँचने के लिए अभी काफी रास्ता तय करना है। नियोजन की प्रक्रिया एक संपूर्ण प्रक्रिया होती है। इससे संबंधित विभिन्नपहलुओं के अनेक प्रकार के तत्वों में आवश्यक अंतर्संबंधको ध्यान में रखकर एकीकृत योजना बनायी जानी चाहिए। न केवल सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन को एक-दूसरे के पूरक के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए बल्कि इनके विभिन्न तत्वों को भी एक-दूसरे पर निर्भर मानते हुए योजनाका निर्माण एवं कार्यान्वयन किया जाना चाहिए। सफल नियोजन के लिए निम्नलिखित महत्वपूर्ण तत्वोंको ध्यान में रखा जाना चाहिए-

1. योजना का निर्माण योजना के कार्यान्वयन संबंधी पहलू पर विशेष ध्यान देते हुए किया जाना चाहिए।
2. योजना का निर्माण स्थानीय स्तर पर गाँव एवं शहर के मोहल्ले को इकाई मानकर किया जाना चाहिए।
3. योजना के निर्माण एवं कार्यान्वयन में अधिक से अधिक जन सहभागिता होनी चाहिए जिससे अनुभूत आवश्यकताओं का परावर्तन हो सके तथा योजना यथार्थवादी बन सके।
4. योजना के अंतर्गत किसी भी कार्यक्रम की शुरूआतकरने से पहले संबंधित लक्ष्यसमूह को इसकी जानकारी उपलब्ध करानी चाहिए।
5. योजना के निर्माण तथा कार्यान्वयन से संबंधित ढंग एवं कार्यरीतियाँसरल एवं स्पष्ट होनी चाहिए तथा इसके बारे में सभी लोगों को जानकारी होनी चाहिए।
6. योजना न केवल वर्तमान बल्कि भविष्य की आवश्यकताओं एवं समस्याओं को ध्यान में रखकर क्रियान्वित करनी चाहिए।
7. नियोजन की प्रक्रिया में स्थानीय लोगों, संस्थाओं तथा संबंधित सरकारी तंत्र से संबंधित कर्मचारियों के अलावा विषय विशेषज्ञों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए।
8. लोगों की सांस्कृतिक सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर योजना का निर्माण करना चाहिए।
9. योजना में सम्मिलित की जाने वाली प्रविधियों को स्थानीय आवश्यकताओं एवं समस्याओं के अनुरूप होना चाहिए।
10. योजना के लक्ष्यों का निर्धारण यथार्थवादी ढंग से होना चाहिए। इन लक्ष्यों के संबंध से संबंधित कर्मचारियो को छूट प्रदान करनी चाहिए। जो प्रत्यक्षत: लोगों की स्वीकृति से संबंधित हो, उदाहरण के रूप में परिवार नियोजन के अंतर्गत बंध्यकरण संबंधी लक्ष्य/लक्ष्यों को स्वयं को अंतिम उद्देश्यन मानकर इनके माध्यम से लक्ष्य समूहों को होने वाले लाभों को अंतिम उद्देश्यके रूप में स्वीकार करना चाहिए।

2.8 सारांश

इस अध्याय में सामाजिक नियोजन के प्रकार्यों के बारे में अध्ययन किया गया इसके अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं की चर्चा की गई। तत्पश्चात सामाजिक नियोजन के विभिन्न सिद्धान्तों जैसे- समय के उपयोग का सिद्धान्त, लचीलेपन का सिद्धान्त, प्राथमिकता का सिद्धान्त, संसाधनों के आवंटन का सिद्धान्त, मूल्यांकन का सिद्धान्त, जनसहभागिता का सिद्धान्त, के बारे में आपको अवगत कराया गया। सामाजिक नियोजन के विभिन्न प्रकारों को अवधि के आधार पर, स्तर के आधार पर, महत्व के आधार पर समझाने की कोशिश की गई। इसके अतिरिक्त नियोजन के अन्य प्रकारों, भौतिक नियोजन, सुधारात्मक नियोजन, विकासात्मक नियोजन, लोकतांत्रिक नियोजन तथा तानाशाही नियोजन के बारे में बताने की कोशिश की गयी। इसके अतिरिक्त सामाजिक नियोजन को प्रभावित करने

वाले कारक, सफल सामाजिक नियोजन की आवश्यक शर्ते, तथा सामाजिक नियोजन के सफलता के महत्वपूर्ण तत्वो को भी समझने की कोशिश की गयी।

2.9 बोध प्रश्न –

1. सामाजिक नियोजन के प्रकार्य से क्या तात्पर्य है?
2. सामाजिक नियोजन के विभिन्न सिद्धान्तों को स्पष्ट करें।
3. सामाजिक नियोजन के सफलता के महत्वपूर्ण तत्वों का वर्णन करें।
4. निम्नलिखित पर टिप्पणी करें
   (क) संरचनात्मक नियोजन
   (ख) सुधारात्मक नियोजन
   (ग) जन सहभागिता का सिद्धान्त
   (घ) मूल्यांकन का सिद्धान्त

2.10 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. धर्मवीर (2007): *परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र* जयपुर :राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी।
2. महीपाल (2012): *ग्राम नियोजन* नई दिल्ली:नेशनल बुक ट्रस्ट।
3. भूषण, बिद्या एवं सचदेवा, डी .आर. (2012): *समाजशास्त्र* नई दिल्ली : डार्लिंग किंग्सले (इंडिया) प्रा.लि.।
4. सिंह, सुरेन्द्र एवं मिश्र, पी .डी. & सिंह ए.एन. (2006): भारत में सामाजिक नीति, नियोजन एवं विकास लखनऊ : देवा पब्लिकेशन।
5. Agnihotri, I.K. & Awasthi, A.K. (1999): *Economic Principles* . Allahabad : Alok prakashn.
6. Kahan, A.J. (1969): *Studies in social policy and planning* . Newyoark : Russel sage foundation.
7. Singh, Tarlok (1968): Social policy *Encyclopedia of Social Work in India Vol 02* Planning commission GOI India.

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई -3

सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाएं

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजना
3.3 सारांश
3.4 बोध प्रश्न
3.5 सन्दर्भ एवं उपयोगी ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप

1. सामाजिक नियोजन और पंचवर्षीय योजनाओं के आपसी संबंध को प्रदर्शित कर सकेंगे
2. सामाजिक नियोजन से संबंधित पंचवर्षीय योजनाओं की भूमिका को स्पष्ट तौर से विश्लेषित कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

समाज विज्ञान अनुशासन में सामाजिक नियोजन का अध्ययन और व्यवहार काफी होने लगा है। उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग करते हुए संतुलित सामाजिक, आर्थिक योजनाओं को जीवन और समाज के सभी क्षेत्रों में लागू करने के लिए नियोजन आवश्यक हो गया है। नियोजन एक जागरूक बौद्धिक प्रक्रिया है। सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखकर योजनाएं बनाई जातीहै। यह लक्ष्य को प्राप्त करने आवश्यक है। किसी कार्य व परियोजना के लिए एक लक्ष्य होते है उस लक्ष्य को प्राप्त करने के कई साधन होते है उन साधनों में कुछ मुख्य कुछ सहायक होते है। नियोजन का मतलब श्रेष्ठ विकल्प की खोज करना भी होता है। समस्या की पहचान, क्षेत्र जहाँ समस्या है, क्या करना चाहिए, कैसे, कब, क्यों , कौन, कहाँ का पूर्व निर्धारण नियोजन है।

3.2 सामाजिक नियोजन और पंचवर्षीय योजनाएं

प्रत्येक समाज अपने समय में अपनी समस्याओं को दूर करने के लिए अपनी शक्ति का आंकलन कर योजना बनाता है। भारत में सामाजिक नियोजन का विचार उपनिवेशकाल से ही देखा जा सकता है। जीवन स्तर में सुधार के लिए योजना बनाने पर दादा भाई नौरोजी, एम.जी.रानाडे और आर.जी. दत्ता ने बल दिया। अंग्रेजी सरकार ने भारत में बढ़ते असंतोष को कम करने के लिए कई आयोग गठित किए। Montage Chelmsford Reform द्वारा स्थानीय स्वशासन, कृषि, सामुदायिक विकास और शिक्षा पर प्रांतीय विधान बनाए गएलेकिन कोई राष्ट्रीय नीति नहीं बनाई जा सकी। साइमन

कमीशन और गोलमेज सम्मलेन में भी इस पर चर्चा हुई। डॉ.भीमराव अम्बेडकर ने दलितों के सवाल को हल करने के लिए सरकार को आवश्यक प्रावधान करने पर बल दिया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1929 में अपने प्रस्ताव द्वारा तत्कालीन समाज की आर्थिक समस्याओं के समाधान पर जोर दिया। 1931 में भी कांग्रेस द्वारा एक प्रस्ताव में राजनीतिक आजादी को आर्थिक आजादी के साथ जोड़ने की कोशिश की गयी। 1935 में 8 राज्यों में अंतरिम सरकार गठित हुई। 1937 में कांग्रेस कार्यसमिति द्वारा एक प्रस्ताव पारित कर विशेषज्ञों की अंतरप्रांतीय समिति गठित कीगयी जिसे राष्ट्रीय विकास में बाधक बनने वाले तत्वों और गंभीर समस्याओं पर विचार कर समाधान के लिए सुझाव प्रस्तुत करना था।

अर्थशास्त्री एम.विश्वेश्वरैया ने 1934 में *प्लांड इकॉनमी* नामक पुस्तक प्रकाशित कर भारत में नियोजित सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए सुझाव दिया। 1938 में सुभाष चंद्र बोस भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष बने। इन्होनें इसके लिए एक राष्ट्रीय नियोजन समिति बनाई। इसमें 15 सदस्य रखे गए। जवाहरलाल नेहरू इसके अध्यक्ष थे। नेहरु जी ने इस कार्य की The Discovery of India में समीक्षा भी की थी। 21 उपसमितियाँ भी बनाई गई थी कुल 350 सदस्य सभी समितियों में थे।

1944 में ब्रिटिश सरकार द्वारा नियोजन तथा विकास विभाग स्थापित किया गया। 1945 में औद्योगिक नीति घोषित हुई। 1946 में कांग्रेस लीग मंत्रालय ने इस विभाग को समाप्तकर नियोजन बोर्ड बनाया।

आजादी के बाद 1950 में संविधान लागू हुआ।1951 में सामाजिक और आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिए पंचवर्षीय योजना को प्रांरभ किया गया। अब भारत एक सम्प्रभुता सम्पन्न लोकतांत्रिक गणराज्य था। भारत को एक सम्प्रभु, संपन्न, लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने के लिए पंचवर्षीय योजनाओं में निम्न लक्ष्य रखे गए –

- तीव्र आर्थिक विकास
- आय और सम्पति में विषमताओं को कम करते हुए संतुलित करना
- सेवा के क्षेत्रों और रोजगार के व्यवहरों में वृद्धि करना, समान अवसर उपलब्ध कराना
- देश को आत्मनिर्भर बनाना
- जीवन स्तर में सुधार
- विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास ,

पंचवर्षीय योजनाओं में सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्रों को एकदूसरे का पूरक मानते हुएमिश्रित अर्थव्यवस्था का आधार रखा गया। बुनियादी एवं भारी उद्योगों, जिसमें अधिक पूँजी निवेश की जरूरत होती है, की जिम्मेदारी सार्वजनिक क्षेत्रों को और निजी क्षेत्रों को जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति की जिम्मेदारी दी गई।

विभिन्न पंचवर्षीय योजना की अवधि निम्नवत है –

1. प्रथम पंचवर्षीय योजना - 1951-56
2. द्वितीय पंचवर्षीय योजना - 1956-61
3. तृतीय पंचवर्षीय योजना - 1961-66
4. तीन वार्षिक योजनाएँ - 1966-67, 1967-68 तथा 1968-69
5. चतुर्थ पंचवर्षीय योजना - 1969-74
6. पाँचवी पंचवर्षीय योजना - 1974-78
7. छठी पंचवर्षीय योजना - 1980-85

8. सातवी पंचवर्षीय योजना - 1985-1990
9. आठवी पंचवर्षीय योजना - 1992-1997
10. नवमी पंचवर्षीय योजना - 1997-2002
11. दसवी पंचवर्षीय योजना - 2002-2007
12. ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना - 2007-2012
13. बारहवी पंचवर्षीय योजना - 2012-2017

प्रथम पंचवर्षीय योजना

1951 में योजना आयोग ने प्रथम पंचवर्षीय योजना के दो उद्देश्यनिर्धारित किए थे-

1. अर्थव्यवस्था में उत्पन्न असंतुलन को ठीक करना
2. संतुलित विकास की प्रक्रिया के लिए खाद्य एवं कच्चेमाल के उत्पादन में वृद्धि करना, ऐसी योजनाओं को कार्यान्वित करना जिससे आर्थिक स्थिति मजबूत हो तथा सेवायोजना के अवसर बढ़ सके। समाज सेवा का विस्तार भी योजना का उद्देश्य था।

पहली पंचवर्षीय योजना में सार्वजनिक क्षेत्र हेतु 2069 करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान लगाया गया था जिसे पुनः बढ़ाकर 2378 करोड़ रुपये कर दिया गया था किन्तु वास्तविक व्यय 1960 करोड़ रुपये ही रहा। इस प्रकार यह मौलिक अनुमान से भी कम रहा। कृषि एवं सामुदायिक विकास पर लगभग 15% सिंचाई पर 16% बिजली पर 13% ग्रामीण तथा लघु उद्योगों पर 2% परिवहन तथा संचार पर 27% तथा समाज सेवाओं पर23% खर्च किया गया। इस अवधि में राष्ट्रीय आय में भी 18% की वृद्धि हुई। राष्ट्रीय आय 9110 करोड़ रूपये से बढ़कर 10800 करोड़ रूपये हो गयी। इसी योजना अवधि में 2 अक्टूबर 1953 को सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय प्रसार सेवाएं एवं 1953 में केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड का गठन किया गया।

इस योजना काल में निसंदेह प्रगति हुई लेकिन जो प्रगति होनी चाहिये थी वो नहीं हुई। बहुत कम लोगों को सेवा योजना का लाभ मिल सका ,भारी उद्योग भी पर्याप्त संख्या में नहीं स्थापित हो पाये। शिक्षा के क्षेत्र में भी प्रगति नहीं हो सकी और सबसे बड़ा कारण इसमें जन सहभागिता का नहीं हो पाना था।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना

उद्देश्य

- समाजवादी ढाँचे की स्थापना
- राष्ट्रीय आय में वृद्धि करना
- औद्योगीकरण, भारी उद्योगों का विकास
- रोजगार के अवसरों की वृद्धि
- असमानता को कम करना
- आर्थिक विकेंद्रीकरण को प्रोत्साहित करना

ज्ञान शांति मैत्री

यह योजना प्रमुखतः सिंचाई तथा परिवहन पर आधारित थी।इसमें प्रारंभिक विकास से सम्बंधित सार्वजनिक क्षेत्र में परिव्यय 4800 करोड़ रूपये तथा निजी क्षेत्र में 2400 करोड़ रूपये था। इसमें वास्तविक सार्वजनिक निवेश 4600 करोड़ तथा निजी निवेश 2150 करोड़ रूपये रहा। द्वितीय पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य 5% वार्षिक वृद्धि दर प्राप्त करना था। 10 करोड़ लोगों को अतिरिक्त रोजगार प्रदान करना तथा औद्योगीकरण को बढ़ावा देना था। राष्ट्रीय आय में मामूली बढ़ोतरी हुई निर्धारित 25 % की जगह 29% की वृद्धि हुईइस योजना की अवधि में पूंजीपति अधिक सुदृढ़ हुये और मूल्यों में पर्याप्त वृद्धि हुई।

तृतीय पंचवर्षीय योजना

उद्देश्य

- राष्ट्रीय आय और निवेश में वृद्धि करना
- कृषि उत्पादन को बढ़ाकर खाद्यान के क्षेत्र में आत्मनिर्भर होना
- आधारभूत उद्योगों को विस्तार देना
- मशीनों के निर्माण के लिए दक्षता हासिल करना
- सेवा योजना में व्यवहारों की वृद्धि कर जनशक्ति का अधिकतम उपयोग सुनिश्चित करना
- आय की असमानता को कम करना
- आर्थिक शक्ति का समानतापूर्ण वितरण सुनिश्चित करना

दूसरी पंचवर्षीय योजनाकी अपेक्षा इसमें 54 प्रतिशत अधिक धनराशि निर्धारित की गई थी। फिर भी इस योजना की अवधि में औद्योगिक क्षेत्र ,कृषि ,सामान्य शिक्षा एवं सेवायोजन के क्षेत्र में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई फिर भी तकनीकी शिक्षा में प्रगति उत्साहवर्धक रही। जनस्वास्थ्य ,चिकित्सा ,पिछड़े वर्गों एवं जनजातियों के कल्याण ,निम्न आय समूहों के लिए आवास इत्यादि के प्रावधान में वृद्धि हुई

वार्षिक योजनाएं –(1966-67,1967-68,1968-69)

31 मार्च 1966 को तीसरी पंचवर्षीय योजना की समाप्ति के बाद चौथी पंचवर्षीय योजना नहीं बन सकी। तीन वार्षिक योजना के बाद 1969 से चतुर्थ योजना प्रारंभ की जा सकी।इन वार्षिक योजनाओं का लक्ष्य उन कठिनाईयों को दूर करना था जो तीसरी योजना की अवधि के दौरान कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं तथा भारतपाकिस्तान युद्ध के कारण उत्पन्न हो गयी थी। इन वार्षिक योजनाओं में संबंधित क्षेत्रों पर व्यय निम्नलिखित रूप में हुआ

कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्रों पर 16.7%, सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रणपर 7.12% बिजली पर 18.03%, खाद्य एवं लघु उद्योग 1.9%, उद्योग तथा खनिज 22.8%, परिवहन तथा संचय18.5%, समाज सेवाओं पर– 14.72% इन वार्षिक योजनाओं काकुल योजना व्यय 6625.4 करोड़ रूपये था। राष्ट्रीय आय में भी 1.1% वृद्धि हुई।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना

उद्देश्य

सामाजिक न्याय को प्रोत्साहन तथा समाजवादी समाज की स्थापना करना इसका सामान्य लक्ष्य था।

इस योजना का विशिष्ट उद्देश्य निम्नलिखित था

I. आयात को कम करते हुए निर्यात को बढ़ाना
II. आत्मनिर्भरता प्राप्त करना

III. घाटे की अर्थव्यवस्था को दुरूस्तकर मूल्य को स्थिर रखने का प्रयास
IV. ग्रामीणों की आय में वृद्धि के लिए कृषि उत्पादन को बढ़ाना
V. सामान्य आवश्यकताओं की वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि करना
VI. परिवार नियोजन द्वारा जनसंख्या वृद्धि में कमी लाना
VII. कृषि उत्पन्न तथा कृषि संसाधन (रसायनिक खाद, कीटनाशक, कृषि यंत्र) की व्यवस्था करना
VIII. मानव संसाधनों के विकास हेतु प्रयास
IX. परिवार नियोजन का विस्तार कर जनसंख्या वृद्धि में कमी लाना तथा जनता का जीवन स्तर ऊपर उठाना

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये 5% वार्षिक वृद्धि दर का लक्ष्य निश्चित किया गया। कृषि में 5.6% वार्षिक वृद्धि दर का लक्ष्य निर्धारित किया गया। 1970-71के बाद पी.एल 480 के अंतर्गत खाद्यानों का आयात न किया जाय एवं उद्योगों में8 से 10% वार्षिक वृद्धि हों ,निर्यात को 7% प्रतिवर्ष की दर से बढाया जाय। अखाद्य सामग्री के आयात को 5% की दर से घटाया जाय। इस योजना का कुल परिव्यय 16,000 करोड़ रूपये का था।

पाँचवी पंचवर्षीय योजना –

उद्देश्य

- निर्धनता को दूर करना
- आत्मनिर्भर समाज बनाना
- कृषि तथा उद्योग के क्षेत्र में वृद्धि करना
- आर्थिक शक्ति के केन्द्रियता को कम करने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र को मजबूत बनाना।
- समाज में सभी की न्यूनतम आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए निर्धनता को कम करना इसके लिए विभिन्न कार्यक्रम संचालित करना
- 14 वर्ष तक के बच्चों को प्राथमिक शिक्षा की सुविधाएं उनके घर के आसपास प्रदान करना
- सामुदायिक स्वास्थ्य सेवा प्रदान करना
- पेयजल, सड़क, भूमिहीनों को जमीन, ग्रामीण विद्युतीकरण की योजना के लिए प्रावधान करना

निर्धनता और बेकारी जैसी समस्याओं की दिशा में सफलता नहीं मिली। कृषि उत्पादन बढ़ा परन्तु यह लक्ष्य से औसत रहा वार्षिक वृद्धि पहले की सभी योजनाओं से अधिक रही लेकिन जनसंख्या वृद्धि के कारण 5.2 प्रतिशत वृद्धि दर तो बनी रही लेकिन प्रति व्यक्ति आय वृद्धि दर मात्र 2.29 प्रतिशत ही रही।

छठी पंचवर्षीय योजना

उद्देश्य

- निर्धनता और बेकारी पर नियंत्रण करनाएवं उसको कम करना
- अर्थव्यवस्था में सुधार लाना,वृद्धि दर को बढ़ाना तथा आधुनिकीकरण को प्रोत्साहन प्रदान करते हुए प्रौद्योगिकी तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता को प्राप्त करना
- पारम्पारिक उर्जा के स्रोत के विकास के साथ ही साथ गैरपरम्परागत उर्जा स्रोतों का तीव्र गति से विकास करना
- सामाजिक एवं आर्थिक रूप से अक्षम लोगों के जीवन स्तर में सुधार करना

- जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण के प्रयास
- शिक्षा और संचार का प्रसार कर सभी को विकास प्रक्रिया में शामिल करना
- आय एवं धन की असमानता को कम करना
- पर्यावरणीय संरक्षण को प्रोत्साहित करना

इस योजना काल में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार शुरू किया गया जिससे ग्रामीण अंचलों में निर्धनता को दूर किया जा सके। इस योजना अवधि के दौरान आर्थिक वृद्धि दर का लक्ष्य 5.2% रखा गया तथा प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि दर का लक्ष्य 3.3% प्रतिशत रखा गया। इसमें कुल योजना व्यय 172210 करोड़ रूपये रखा गया। इस योजना के दौरान आर्थिक स्थायित्व आया तथा वृद्धि एवं विकास की गति तीव्र हुई।

सातवीं पंचवर्षीय योजना

योजना लक्ष्य –

विकास दर - 5.00 प्रतिशत रखी गई
कृषि विकास दर – 4.00 प्रतिशत रखी गई
औद्योगिक विकास दर – 7.00 प्रतिशत रखी गई

उद्देश्य –

- खाद्यान उत्पादकता को बढ़ाने के लिए सिंचाई ,सघन खेती एवं कृषि संबंधी नई प्रौद्योगिकी का विकास
- सेवा योजन के अवसरों को बढ़ाना
- उत्पादकता में वृद्धि करना
- विकास कार्यक्रम में जनता की सहभागिता को बढ़ाना
- निर्धनता को दूर करना, विभिन्न राज्यों, प्रदेशों, शहरों तथा गांवों के बीच असमानता को कम करना
- खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता हेतु प्रयास करना
- शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, स्वच्छता और पोषाहार एवं आवास के क्षेत्रों में सामाजिक उपभोग के उच्च स्तर को प्राप्त करना
- महिलाओं की भागीदारी बढ़ाना
- उर्जा संरक्षण पर बल देना तथा ऊर्जा के गैर–परंपरागत स्रोतों का विकास करना
- पर्यावरण संरक्षण एवं परिवेशके लिए प्रयास करना
- निर्यात को बढ़ावा एवं आयात प्रतिस्थापन के माध्यम से आत्म निर्भरता में आंशिक वृद्धि करना
- उद्योगों में प्रतिस्पर्धा, कार्य कुशलता एवं आधुनिकीकरण की दर में वृद्धि करना

सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान ही राष्ट्रीय ग्रामीण सेवायोजन कार्यक्रम ,ग्रामीण भूमिहीन श्रमिक सेवायोजन गारंटी कार्यक्रम का प्रावधान भी किया गया।

ज्ञान शांति मैत्री

आठवीं पंचवर्षीय योजना

इस योजना में मानव विकास पर विशेष जोर दिया गया। इस योजना के लक्ष्य थे-

1. रोजगार के अवसर उपलब्ध कराते हुए 2000 तक पूर्ण रोजगार के स्तर को प्राप्त करना
2. जनसंख्या नियंत्रण के लिए जन सहभागिता को बढ़ावा देना
3. 15 से 35 वर्ष आयु वर्ग के सभी लोगों की निरक्षरता को खत्म करना तथा प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाना
4. स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराना
5. ऊर्जा, सिंचाई, संचार और परिवहन जैसे स्थायी विकास के आधारभूत ढ़ाँचे को विकसित करना।
6. खाद्यान्न में आत्म निर्भरता प्राप्त कर निर्यात हेतु प्रयास करना, आर्थिक सुधारों को इस अवधि में प्रारम्भ किया गया।
7. आर्थिक सुधार प्रारंभ होने की वजह से अर्थव्यवस्था की औसत वृद्धि दर में बढ़ोतरी हुई। इस योजना अवधि के दौरान यह औसत वृद्धि दर 6.8 प्रतिशत रही जबकि सातवीं योजना काल में यह 6% थी।

नौवी पंचवर्षीय योजना

इस योजना में वृद्धि के साथ सामाजिक न्याय और समानता पर जोर दिया गया। नौवीं योजना का विशिष्ट लक्ष्य बाजार शक्तियों पर अधिक विश्वास और सार्वजनिक नीति की अनिवार्यताओं से उत्पन्न था। इसके उद्देश्य निम्नवत थे -

1. उत्पादक रोजगार कायम करने तथा गरीबी को दूर करने के लिए कृषि और ग्राम विकास को प्राथमिकता देना।
2. कीमतों में स्थिरता के साथ अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर को त्वरित करना।
3. समाज के कमजोर वर्गों का ध्यान रखते हुए, सभी के लिए खाद्य और पौष्टिक सुरक्षा उपलब्ध कराना।
4. न्यूनतम बुनियादी सेवाएँ निश्चित समय में उपलब्ध कराना। इसके अंतर्गत प्राथमिक शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधाएँ तथा पेयजल उपलब्ध कराना सभी को आवास यातायात एवं परिवहन द्वारा सभी से संबंध स्थपित करना।
5. जनसंख्या वृद्धि दर को रोकना एव नियंत्रण प्राप्तकरना।
6. स्त्रियों और सामाजिक रूप से निर्बल वर्ग के लोगों को अधिक अधिकार संपन्नबनाकर सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन एवं विकास का एजेन्टबनाना।
7. ऐसे साधनों को सबल बनाना जिससे आत्म निर्भरता को बढ़ाया जा सकता है।
8. विकास की प्रक्रिया एवं पर्यावरण संपोषणीयता के बढ़ानेके लिए सामाजिक गतिशीलता और सभी स्तरों पर जन साहभागिता को बढ़ाना।
9. जन सहभागिता को प्रोत्साहित एवं विकसित करना और इसके लिए सहभागी संस्थाओं, सहकारिताओं और अन्य स्वयं सहायता समूहों को बढ़ावा देना।

इस पंचवर्षीय योजना में वार्षिक वृद्धि दर कम हो गयी। जहाँ आठवीं पंचवर्षीय योजना में वार्षिक वृद्धि दर 6.5% रही वही इस योजना में वृद्धि दर 5.35 % हो गयी। कृषि विकास दर एवं विनिर्माण दर में भी कमी आ गयी।

दसवीं पंचवर्षीय योजना–

इस योजना के अधिकांश लक्ष्य विशेषकर शिक्षा, स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण के क्षेत्र में सामाजिक संकेतकों में महत्वपूर्ण सुधारोंसे संबंधित थे। जिनका संबंध विकास तथा रोजगार से संबंधित लक्ष्योंकी प्राप्ति से है। इस योजना के निम्नलिखित उद्देश्य थे -

I. महिला सशक्तिकरण की नीति लागू करने के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना तैयार करना
II. बच्चों के लिए राष्ट्रीय नीति तथा चार्टर तैयार करना
III. बच्चों के अधिकारों की सुरक्षा को सुनिश्चित करन के लिए राष्ट्रीय बाल आयोग का गठन
IV. दसवीं योजना में 8 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर प्राप्त करने का प्रावधान किया गया।

ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना -

इस योजना का लक्ष्य 7 वर्ष या उससे अधिक के बच्चे व व्यक्तियों के साक्षरता दर को 85% तक बढ़ाना और रोजगार को 700 लाख नए रोजगार के अवसर पैदा करना जैसे मुख्य लक्ष्य थे। इस योजना के निम्नलिखित उद्देश्य थे -

1. जीडीपी वृद्धि दर को 8% से बढ़ाकर 10% करना और इसे 12 वीं योजना के दौरान 10% बरकार रखना ताकि 2016-17 तक प्रतिव्यक्ति आय को दोगुना किया जा सके।
2. कृषि आधारित वृद्धि दर को 4% प्रतिवर्ष तक बढ़ाना।
3. रोजगार के 7 करोड़ नए अवसर पैदा करना।
4. साक्षर बेरोजगारी की दर को 5% से नीचे लाना।
5. 2011 से 2012 तक प्राथमिक स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की दर में 2003-04 के 52.2% की तुलना में 20% की कमी करना।
6. 7 वर्ष या उससे अधिक के बच्चों व व्यक्तियों की साक्षरता दर को 85% तक बढ़ाना।
7. प्रजनन दर को घटाकर 2.1 के स्तर पर लाना।
8. बाल मृत्युदर को घटाकर 28 प्रति 1000 व मातृमृत्युदर को 1 प्रति 1000 तक करना।
9. 2000 तक सभी के लिए पीने का स्वच्छ पानी उपलब्ध कराना।
10. 0.3 वर्ष की आयु में बच्चोंके बीच कुपोषण के स्तर में वर्तमान के मुकाबले 50% तक की कमी लाना।
11. लिंग अनुपात को बढ़ाकर2011-12 तक 935 व 2016-17 तक 950 करना।
12. सभी गाँवों तक बिजली पहुँचाना।
13. नवम्बर 2007 तक प्रत्येक गाँव में टेलीफोन की सुविधा मुहैया कराना
14. देश के वनक्षेत्र में 5.7% की वृद्धि कराना।
15. देश के प्रमुख शहरों में 2011-12 तक 'विश्व स्थास्थ्य संगठन' के मानकों के अनुरूप वायु शुद्धता का स्तर प्राप्त करना।
16. 2016-17 तक उर्जा क्षमता में 20% की वृद्धि करना।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना–

बारहवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि 2012 से 2017 तक निर्धारित है। इसमें 10% वार्षिक वृद्धि दर हासिल करने का लक्ष्य रखा गया है।

12वीं योजना के लक्ष्य –

1) योजना आयोग में वर्ष 2011 से 2017 तक चलने वाली 12 वीं पंचवर्षीय योजना में सलाना 10 फीसदी की आर्थिक विकास दर हासिल करने का लक्ष्य निर्धारित किया है।
2) वैश्विक आर्थिक संकट का असर भारतीय अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा है। इसी के चलते 11 पंचवर्षीय योजना में आर्थिक विकास दर की रफ्तार को 9 प्रतिशत से घटाकर 8.1 प्रतिशत करने का लक्ष्य रखा गया है।
3) सितम्बर 2008 में शुरू हुए आर्थिक संकट का असर इस वित वर्ष में बड़े पैमाने पर देखा गया है। यही वजह थी कि इस दौरान आर्थिक विकास दर घटकर 6.7 प्रतिशत हो गयी थी। जबकि इसमें पहले के तीन वित्त वर्ष में अर्थव्यवस्था में नौ फीसदी से ज़्यादा की दर में आर्थिक विकास हुआ था।

3.3 सारांश

इस इकाई में विभिन पंचवर्षीय योजनाओं में सामाजिक नियोजन की चर्चा की गयी है।पहली पंचवर्षीय योजना से लेकर बारहवीं पंचवर्षीय योजना तक विस्तृत व्याख्या की गयी है।योजना के उदेश्यों तथा लक्ष्यों को स्पष्ट रूप से इंगित किया गया है।

3.4 बोध प्रश्न

1. पहली पंचवर्षीय योजना का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
2. तीन वार्षिक योजनाओं की विस्तृत व्याख्या कीजिये
3. बारहवीं पंचवर्षीय योजना के उद्देश्यों की व्याख्या करें।
4. दसवीं पंचवर्षीय योजना की रुपरेखा को स्पष्ट करें।

3.5 सन्दर्भ एवं उपयोगी ग्रन्थ

1. धर्मवीर (2007) : *परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र* जयपुर :राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी
2. महीपाल (2012) : *ग्राम नियोजन* नई दिल्ली:नेशनल ट्रस्ट बुक
3. भूषण, बिद्या एवं सचदेवा, डी.आर. (2012): *समाजशास्त्र* नई दिल्ली:डार्लिंग किंग्सले (इंडिया)प्रा.लि.
4. सिंह,सुरेन्द्र एवं मिश्र,पी .डी सिंह ए,एन (2006): *भारत में सामाजिक नीति नियोजन एवं विकास* लखनऊ : देवा पब्लिकेशन
5. Agnihotri, I.K.&Awasthi, A.K (1999): *Economic Principles* Allahabad : Alok prakashn
6. Kahan, A.J. (1969): *Studies in social policy and planning* New Yark : : Russel Sage foundation.
7. Singh, Tarlok (1968): *Social policy* Encyclopedia of Social Work in India vol 02 Planning commission GOI India.
8.www.bharatdiscovery.org.india

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई -4

भारत में सामाजिक नियोजन

इकाई की रूपरेखा

4.1 उद्देश्य
4.2 प्रस्तावना
4.3 भारत में सामाजिक नियोजन
4.4 भारत में सामाजिक नियोजन की समस्याएँ
4.5 सारांश
4.6 बोध प्रश्न
4.7 सन्दर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

4.1 उद्देश्य –

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. भारत में सामाजिक नियोजन की स्थिति का विश्लेषण कर पायेंगें।
2. भारत में सामाजिक नियोजन के विभिन्न क्षेत्रों का वर्णन कर पायेंगें।
3. सामाजिक नियोजन के क्षेत्र में आने वाले विभिन्न समस्याओं को रेखांकित कर सकेंगें।

4.2 प्रस्तावना

भारत में सामाजिक नियोजन की आधार शिला रखने का श्रेय भारत के महान अर्थशास्त्री एम. विश्वेश्वैरया को जाता है। सन् 1934 में उन्होंने सबसे पहले अपनी पुस्तक *Planned Economy* को प्रकाशित करते हुए नियोजन की सामाजिक-आर्थिक विकास की आधारशिला रखी। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1937 में भारत की परिस्थितियों के अनुरूप नियोजन के मुद्दे पर विचार विमर्श किया। 1938 में नेताजी सुभाष चन्द्र बोस जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष बनें, तब उन्होंने नियोजन के माध्यम से सामाजिक-आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिए राष्ट्रीय नियोजन समिति (National Planning Committee) बनायी। अंग्रेजी सरकार द्वारा 1944 में नियोजन तथा विकास विभाग खोला गया। 1945 में औद्योगिक नीति की घोषणा की गई। 1946 में कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग मंत्रालय ने सलाहकार नियोजन बोर्ड का गठन किया तथा नियोजन एवं विकास विभाग को समाप्त कर दिया। 15 अगस्त, 1947 को भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई तथा संविधान के जनवरी 1950 ई. में लागू होने के बाद एक संप्रभुत्व संपन्न प्रजातांत्रिक गणतंत्र बना।

मार्च 1950 में भारत सरकार द्वारा स्थापित योजना आयोग देश में सामाजिक नियोजन का कार्यक्रम तैयार करता रहा किंतु 15 अगस्त 2014 को भारत के प्रधानमंत्री श्रीनरेन्द्र मोदी द्वारा योजना आयोग के जगह पर दूसरी

संस्था को लाने की बात की गई जिससे योजना आयोग के कमियों को दूर किया जा सके।1 जनवरी 2015 को भारत में नीति आयोग की स्थापना की गई। नीति आयोग ने योजना आयोग का स्थान लिया है।

आर्थिक तथा सामाजिक नियोजन को भारतीय संविधान की सातवीं अनुसूची में केन्द्रीय सूची के अंतर्गत रखा गया है और राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्तों के अधीन भारतीय समाज के विकास की विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की गयी है। भारत में सामाजिक-आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिए 1951 में पंचवर्षीय योजनाओं काप्रारंभ किया गया। तीव्र और अनवरत आर्थिक विकास करना, आय और संपत्ति में पायी जाने वाली असमानता को दूर करना, रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना, आर्थिक शक्ति पर एकाधिकार में कमी करना और देश को हरेक दृष्टिकोण से समृद्ध तथा आत्मनिर्भर बनाना, इन पंचवर्षीय योजनाओं का मूल उद्देश्य था। पंचवर्षीय योजनाओं में मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया अर्थात सार्वजनिक एवं निजी दोनों क्षेत्रों को एक-दूसरे के पूरक के रूप में अपनाया गया। जिनमें अधिक पूँजी निवेश की आवश्यकता थी, जैसे बुनियादी एवं भारी उद्योग, के प्रोत्साहन की जिम्मेदारी सार्वजनिक क्षेत्र को दी गयी और लोगों की आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति हेतु आवश्यक व्यवस्था करने का उत्तरदायित्व, निजी क्षेत्र पर ड़ाला गया। पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत सामाजिक एवं निजी हितों के बीच आवश्यक सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया गया।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनओं के माध्यम से देश के सर्वांगीण विकास हेतु प्रयत्न किये गये।1953 में इसी उद्देश्य से केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड तथा 1985 में एक कल्याण मंत्रालय की स्थापना की गई। समाज के कमजोर और सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित समुदायों को अधिकार दिलाने के उद्देश्य से एवं कल्याण कार्यक्रमों के दबावों के कारण 25 सितम्बर, 1985 को इसकी स्थापना की गयी। कल्याण मंत्रालय को 25 मई, 1998 में नया नाम दिया गया सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय।

सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया में वृहत् रूप से पूर्व निर्धारित सामाजिक एवं आर्थिक उद्देश्योंको स्थानिक एवं अल्पकालीन संदर्भ में प्राप्त करने हेतु स्पष्ट रुपरेखा का रेखांकन किया जाता है। इसमें प्राथमिक आवश्यकताएँ और स्पष्ट रूप से परिभाषित लक्ष्य होते हैं। इसमें वर्तमान में प्राप्त किये जा सकने वाले संसाधनों, मानव संपदा, वस्तु, संगठनों और तकनीक की भी समीक्षा की जाती है। जिससे कम से कम लागत पर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके। सामाजिक योजनाओं का निर्माण सामाजिक न्याय के साथ-साथ आर्थिक विकास के अवसरों को बढ़ाने,आय वृद्धि, प्रादेशिक और जातिगत भिन्नताओं को हटाने, गरीबी उन्मूलन आदि अन्तर्निहित उद्देश्यों के साथ किया जाता है।

4.3 भारत में सामाजिक नियोजन के क्षेत्र –

भारत में सामाजिक नियोजन के क्षेत्रों का विवरण निम्नलिखित बिन्दुओं के अंतर्गत समझा जा सकता है।

4.3.1 स्वास्थ्य नियोजन –हर दृष्टि से जनता का स्वस्थ होना समाज व देश के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। विश्व स्वास्थ्य संगठन का कहना है कि स्वास्थ्य से आशय रोगो एवं शारीरिक दुर्बलताओं के अभाव मात्र से ही नहीं है बल्कि शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक रूप से मनुष्य का पूरी तरह ठीक होना है। मनुष्य केवल जीना ही नहीं चाहता बल्कि वह स्वस्थ भी रहना चाहता है। स्वास्थ्य का न केवल शारीरिक व मानसिक दृष्टि से ही महत्व होता है बल्कि इसका सांस्कृतिक महत्व भी होता है। किसी भी देश की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक उन्नति के लिए उस देश के व्यक्तियों का स्वास्थ्य स्तर अच्छा होना आवश्यक होता है। वास्तव में किसी भी राष्ट्र की निधि उसके स्वस्थ दीर्घ आयु और कार्यकुशल नागरिक होते हैं। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए तथा भारत में स्वास्थ्य की

स्थिति को देखते हुए सबको अच्छी स्वास्थ्य सुविधायें मुहैया कराने की कोशिश सरकार द्वारा स्वास्थ्य नियोजन के माध्यम से की गई है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व भोरसमिति की संस्तुतियों के आधार पर एकीकृत स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार के लिए अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन योजनाएँ बनायी गयीं। अक्टूबर, 1943 में भारत सरकार ने एक "स्वास्थ्य सर्वेक्षण और विकास समिति" की नियुक्ति की थी इसके अध्यक्ष तत्कालीन स्वास्थ्य निर्देशक सर जोसेफ भोर (Sir Joseph Bhore) थे। इस समिति को भोर समिति के नाम से जाना गया। यह स्वास्थ्य विकास की एक विस्तृत योजना थी जिसमें भारत की स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को पहली बार एकीकृत करने तथा वैज्ञानिक ढंग से सुलझाने का प्रयास किया गया।

भोर समिति की योजना के प्रमुख सिद्धान्त -

भोर समिति ने अपने प्रतिवेदन में बहुत ही महत्वपूर्ण स्वास्थ्य विकास संबंधी योजना प्रस्तुत की। समिति का मूल उद्देश्य देश के नागरिको के स्वास्थ्य संबंधी दशाओं में सुधार करना,स्वास्थ्य सेवाओं की एक विकेन्द्रीकृत योजना प्रस्तुत करना तथा इन सेवाओं में जनता से अधिकाधिक सहयोग प्राप्तकरना था।

भोर समिति की योजना के प्रमुख सिद्धान्त इस प्रकार थे –

1) जनता को उपचारात्मक तथा निरोधात्मक दोनों प्रकार की स्वास्थ्य सेवाएं एवं सुविधाएँ मिलनी चाहिए। जिससे लोग प्रत्यक्षत: लाभान्वित हो सकें।
2) स्वास्थ्य सेवाएँ जनता के अधिकाधिक नजदीक होनी चाहिए जिससे प्रत्येक व्यक्ति आसानी से इसका लाभ ले सके।
3) स्वास्थ्य से संबंधित संगठन इस प्रकारहों कि जनता आसानी से सहयोग कर सके तथा जनता बिना किसी कठिनाई या संकोच के सहयोग व लाभ प्राप्त कर सके। समिति ने स्वास्थ्य संगठन में अफसरशाही को दूर रखने की बात पर विशेष बल दिया।
4) स्वास्थ्य कार्यक्रम की योजना ऐसी होनी चाहिए कि उसमें चिकित्सा, औषधि और परिचर्या से संबंधित समस्त व्यक्ति अपना सही प्रतिनिधित्व कर सके और इस संबंध में बनाई जाने वाली नीतियों में उनकी राय अवश्य ली गयी हो।
5) स्वास्थ्य सेवाओं का इस प्रकार प्रबंध करना जिसमेंविभिन्न विषयों के विशेषज्ञ शामिल हो और अपेक्षानुकूल उनका योगदान चिकित्सामें प्राप्त हो सके।
6) जनता की निर्धनता का ध्यान रखते हुए इस प्रकार की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे गरीब से गरीब व्यक्ति भी चिकित्सा व्यय बोझ की असमर्थता के कारण स्वास्थ्य और चिकित्सा सेवाओं से वंचित न रहे।
7) चिकित्सा संबंधी कार्यक्रमों में महिलाओं बच्चे और मानसिक रोग संबंधी चिकित्सापर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। खास तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं के प्रसार में अधिक बल दिया जाना चाहिए।
8) भोर समिति ने नि:शुल्क चिकित्सा एवं स्वास्थ्यप्रद वातावरण के निर्माण पर बल दिया।

समिति के माध्यम से स्वास्थ्य सेवाओं का जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया, उस योजना के दो भाग हैं- (1) अल्पकालीन योजना एवं (2) दीर्घकालीन योजना। अल्पकालीन योजना के अंतर्गत प्रत्येक 40000 की जनसंख्या पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खोलने से सम्बंधित प्रावधान किया गया।

दीर्घकालीन योजना के तहत प्रत्येक 10 से 20 हजार की आबादी पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, हर 3 से 5 स्वास्थ्य केन्द्रों पर 150 शैयाओं वाले एक द्वितीयक केन्द्रऔर जिला स्तर पर 25000 रोगी शैयाओं वाले जिला स्वास्थ्य केन्द्र को स्थापित करने का निर्णय लिया गया।

पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारंभ किये जाने के बाद स्वास्थ्य के क्षेत्र में नियोजित प्रयासों का शुभारंभ हुआ। आरंभ के तीनों पंचवर्षीय योजनाओं में प्राथमिक स्वास्थ्य, केन्द्रों की स्थापना तथा उनको प्रभावपूर्ण बनाने के लिए कार्य किए गए। 1951 में क्षय रोग नियंत्रण अभियान प्रारंभ किया गया। 1953 में मलेरिया नियंत्रण अभियान आरंभ किया गया। 1954 में घेंघा रोग (Goittre) नियंत्रण अभियान आरंभ किया गया। 1954-55 में कुष्ठ रोग निवारण अभियान शुरू किया गया। 1953 में फाइलेरिया नियंत्रण के लिए कार्यक्रम चलाया गया। 1958 में मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम शुरू किया गया और 1962 में चेचक उन्मूलन अभियान शुरू किया।

चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण सुविधाओं का प्रसार, स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार और उपचारात्मक तथा निरोधात्मक दोनों तरह की सेवाओं का विस्तार किया गया। पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान इन्हीं कार्यक्रमों को सुदृढ़ तरीके से लागू किया गया तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों को और अधिक प्रभावशाली बनाने की कोशिश की गई। इसी दौरान न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम चलाया गया तथा गर्भवती माताओं तथा बच्चों में कुपोषण की कमीं को न्यूनतम करने एवं उसको दूर करने की कोशिश की गयी।

छठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान सामुदायिक स्वास्थ्य स्वयं सेवकों की नियुक्ति करने का प्रावधान किया गया जिसके तहत एक हजार जनसंख्या पर एक स्वास्थ्य स्वयं सेवक रखने की व्यवस्था की गई। इस योजना में संक्रामक रोगों को रोकने, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम चलाने, बहुउद्देशीय कार्यकर्त्ताओं की नियुक्ति कर उन्हें प्रशिक्षण प्रदान करने पर बल दिया गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान प्रत्येक गाँव में जिनकी जनसंख्या 1 हजार के आस-पास थी। सामुदायिक स्वास्थ्य स्वयं सेवक की नियुक्ति की गई। प्रत्येक पाँच हजार की जनसंख्या पर एक स्वास्थ्य उपकेन्द्र तथा 30 हजार की जनसंख्या पर एक सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना का प्रावधान किया गया। साथ ही साथ एक लाख की जनसंख्या पर एक सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना का भी प्रावधान किया गया। ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यक्रम को आयोजित करने, नगरीय सेवाओं में वृद्धि करने तथा संक्रामक रोगों पर नियंत्रण करने के लिए इस योजना में बल दिला गया।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत, स्वास्थ्य नियोजन के तहत प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र को आधुनिक स्वरूप प्रदान करने, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम को जिला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर लागू करवाने हेतु योजना बनाना एवं क्रियान्वित करना, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र को जनजातीय आबादी वाले क्षेत्रों में स्थापित करने पर बल देना, गंभीर बीमारियाँ जैसे– मलेरिया, कालाजार एवं जैपनीज बुखार, कुष्ठरोग निवारण एवं रोकथाम एड्स नियंत्रण, कैंसर की रोकथाम एवं पल्स पोलियों जैसी बीमारियों के नियंत्रण के लिए जन जागरूकता अभियान चलाना, इत्यादि प्रयास किये गये।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के क्रियान्वयन के दौरान यह भी देखा गया कि जन्म दर (CBR) एवं मृत्युदर (CDR) 37 और 129 (1971) से 29.9 एवं 80 हो गयी। जीवन प्रत्याशा में बढ़ोतरी महसूस की गयी तथा 2000 ई. तक ''सभी के लिए स्वास्थ्य'' की परिकल्पना भी की गयी। इस योजना के दौरान टी.वी. रोकथाम, अंधापन को रोकने का अभियान तथा आयोड़ीन की कमी को पूरा करने वाले कार्यक्रमों का क्रियान्वयन भी किया गया। जिससे इन बीमारियों पर काफी हद तक नियंत्रण एवं प्रभावी रूप से रोकथाम संभव हो पाया है।

नौवीं पंचवर्षीय योजना में विभिन्न प्रयासो के माध्यम से जन्म दर (CBR) 1996-2001 में, 24.10 से 2011-16 तक 21.14 लाने की कोशिश की गई। मृत्युदर (CDR) 8.99 से घटकर 7.48 तक पहुँचने की संभावना की गयी। यह भी माना गया कि शिशु मृत्युदर पुरूषों के लिए 63 से 38 और महिलाओं के लिए64 से घटकर 39 हो जाएगी। यह भी कोशिश की गई गई कि जीवन प्रत्याक्षा भी लगभग बढ़े तथा 60 की आयु में महिलाओं से संबंधित जितने भी कार्यक्रम चलाये गये हैं उससे उनकी गुणवत्ता में सुधार हुआ है।

दसवीं पंचवर्षीय योजना में जीवन प्रत्यशा 1951 में 36.7 वर्ष से बढ़ाकर इसमें 64.6 वर्ष होने की उम्मीद की जा रही थी। उसी प्रकार जन्मदर (CBR) 40.8 से घटाकर 26.1 तथा मृत्युदर (CDR) घटाकर 8.7 होने की संभावना व्यक्त की जा रही थी। शिशु मृत्युदर (IMR) भी 146 से घटकर 70 तक होने की उम्मीद थी। दसवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान ही राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (NRHM – National Rural Health Mission) जैसी महत्वाकांक्षी योजनाएँ, ग्रामीण जनसंख्या को उत्कृष्ट स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध कराने, स्वास्थ्य सेवा अतंरालों को भरने, स्वास्थ्य क्षेत्र में विकेन्द्रीतकृत योजना को सुगम बनाने और अंतर क्षेत्रीय समस्पता लाने के लिए 2005 में शुरू किया गया बेहतर अवसंरचना, मानव शक्ति, दवाओं और उपकरणों की उपलब्धता और विभिन्न स्तरों में,स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार स्वास्थ्य मानव संसाधन के संवर्धन, स्वास्थ्य सेवा सुपुर्दगी में सुधार और बहिरंग रोगी विभाग(OPD, Out Patient door) जैसी सेवाओं में भी वृद्धि की गई है।राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन की मूल अवधि 2012 तक यानी ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना तक थीं, जिसे 12वीं पंचवर्षीय योजना अवधि के लिए 5 वर्षों तक विस्तारित किया गया है। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के प्रस्तावित लक्ष्य शिशु मृत्युदर (IMR) में कमी करके उसे प्रति हजार जीवित जन्म पर 30 से नीचे लाना, मातृत्व मृत्यु अनुपात(MMR) को प्रति एक लाख जीवित जन्म पर 100 से नीचे लाना तथा सकल प्रजनन दर (TFR) को 2.1 पर लाना शामिल है।

राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य (NCHP – National Child Health Programme) - राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य मिशन NCHP के अतंर्गत एक पहल के रूप में 'राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम' (National Child Health Programme) प्रारंभ किया गया है। इस कार्यक्रम का पूरा नाम 'Child Health Screening and Early Intervention Services Programme' है, जिसका प्राथमिक उद्देश्य बच्चों को सार्वभौमिक स्वास्थ्य जांच के माध्यम से उनके भावी जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना है। महाराष्ट्र के ठाणे जिले के जनजातीय प्रखण्ड पालघर से 6 फरवरी, 2013 को इस कार्यक्रम का शुभारंभ किया गया। राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम के अंतर्गत देश के लगभग 27 करोड़ बच्चों(0-18 वर्ष) को चरणबद्ध रूप से आच्छदित किया जाएगा।

राष्ट्रीय शहरी स्वास्थ्य मिशन (NUHM – National Urban Health Mission) –

बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत वर्ष 2005 में प्रारंभ ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (NUHM) की तर्ज पर केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने देश के शहरी क्षेत्रों के लिए राष्ट्रीय शहरी स्वास्थ्य मिशन (NUHM) प्रारंभ किए जाने हेतु 1 मई, 2013 को स्वीकृति प्रदान की है। NRHM और NUMH दोनों महत्त्वांकाक्षी राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (NHM) के दो घटक या उप-मिशन होंगे। राष्ट्रीय शहरी स्वास्थ्य मिशन की 12वीं योजनावधि के लिए कुल लागत 22,507 करोड़ रू. (16,955 करोड़ रू. के केन्द्रीय आवंटन के साथ) आकलित है जिसमें केन्द्र एवं राज्यों की भागीदारी 75:25 के 90:10) होगी। शहरी निर्धन वर्ग हेतु प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं पर मूलत केंद्रित करते हुए यह मिशन देश के 779 शहरों एवं कस्बों (जिनकी जनसंख्या 50 हजार से अधिक है) में क्रियान्वित किया जाएगा। इसकी पहुंच देश के लगभग 8 करोड़ लोगों तक होगी।

जननी सुरक्षा योजना (JSY) –

वर्ष 2005 में शुरू की गई इस योजना का लक्ष्य दक्ष जन्म परिचारकों द्वारा किए जाने वाले सांस्थानिक प्रसव को प्रोत्साहित करके मातृत्त्व मृत्यु अनुपात (MMR) को नीचे लाना है। सांस्थनिक प्रसव की संख्या में निरन्तर बढ़ोतरी हो रही है।इसके अतिरिक्त, 'जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम' (जेएसएसके), एक नई पहल है, जिसमें जनस्वास्थ्य संस्थान में संभावित प्रसव करने वाली सभी गर्भवती महिलाओं के लिए निःशुल्क शल्यक्रिया, मुफ्त दवाएं, निदान, रक्त एवं आहार सहित प्रसव और परामर्श के दौरान घर से संस्थान तक मुफ्त परिवहन को शामिल करते हुए पूर्णतया नि:शुल्क प्रसव की सुविधा भी कार्याधीन है। इस कार्यक्रम को जून 2011 में हरिणाया के मेवात जिले में प्रारंभ किया गया था।

प्रधानमंत्री स्वास्थ्य सुरक्षा योजना (PMSSY) –

पीएमएसएसवाई का लक्ष्य किफायती एवं भरोसेमंद तृतीयक स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं की उपलब्धता में क्षेत्रीय असंतुलन को ठीक करना और देश में गुणवत्ता चिकित्साशिक्षा के लिए सुविधाओं में सुधार करना है।

आयुर्वेद, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध एवं समचिकित्सा (आयुष) (AYUSH) –

भारत में प्रचलित सभी चिकित्सा पद्धतियों को एकीकृत कर एक आयुष (Ayush – Ayurvedic, Yoga and Naturalpathy, Unani, Siddha and Homeopathy) प्रणाली प्रारम्भ की गई है। इसका उद्देश्य हमारी देशज एवं परम्परागत चिकित्सा एवं औषधि पद्धतियों का आधुनिक प्रणाली के साथ समेकित कर आम लोगों तक इनका लाभ पहुंचाना है।

मातृत्व और बाल अल्प–पोषण हेतु बहु-क्षेत्रीय कार्यक्रम (MCUMP) –

केन्द्रीय मंत्रिमण्डल द्वारा 24 सितंबर, 2013 को मातृत्व और बाल अल्प-पोषण (Maternal and child Under-untrition) के मुद्दे से निपटने के लिए बहु-क्षेत्रीय कार्यक्रम (Multi Sectoral Programme) के क्रियान्वयन के प्रस्ताव को अनुमोदित कर दिया गया। बहु-क्षेत्रीय पोषण कार्यक्रम 12वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान देश के उन 200 उच्च भारित जिलों (High Burden Districts) में चलाया जाएगा, जहां मातृत्व और बाल अल्प-पोषण या कुपोषण की समस्या अत्यंत गंभीर है।

मातृत्व और बाल अल्प–पोषण हेतु बहु-क्षेत्रीय कार्यक्रम के तहत परिणामों के रूप में निम्नलिखित दो मुख्य लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं (i) बाल अल्प-पोषण (3 वर्ष से कम आयु के बच्चों में वजन की कमी की व्यापकता के संदर्भ में) की रोकथाम तथा उसमें कमी लाना; तथा (ii) बच्चों, किशोरियों तथा महिलाओं में रक्त-अल्पता (Anemia) के स्तरों को कम करना।

एकीकृत बाल विकास सेवा स्कीम (आईसीडीएस) (ICDS)

इस स्कीम का उद्देश्य 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों का समग्र विकास और गर्भवती महिलाओं तथा स्तनपान कराने वाली माताओं के लिए उचितपोषण और स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करना है। इस योजना में प्रारंभ में 1975 में 33 परियोजनाएं और 4891 आंगनवाड़ी केन्द्र (AWC) खोले गए थे। ग्रासरूट लेबल पर बालकों के समग्र विकास का यह कार्यक्रम सरकार की फ्लैगशिप योजनाओं में शामिल है।

इंदिरा गांधी मातृत्व सहयोग योजना (IGMSY) –

आईजीएमएसवाई गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं के लिए सशर्त नकदी हस्तांतरण स्कीम है जो प्रारंभ में अक्टूबर, 2010 से देश के 53 चुनिंदाजिलों में प्रायोगिक आधार पर क्रियान्वित की गई। अब इसे पूरे देश में लागू करने की योजना है।

पोलिया मुक्त भारत (Polio Free India) –

केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री गुलाम नबी आजाद ने 13 जनवरी, 2014 को भारत में पिछले तीन वर्षों से लगातार पोलियों का एक भी रोगी न पाए जाने की घोषणा कर दी। टीकाकरण द्वारा भारत में पूरी तरह समाप्त होने वाला यह दूसरा मानव रोग है। इससे पूर्व 1980 में चेचक का पूर्ण सफाया हुआ था।

4.3.2 पोषाहार नियोजन -

पहली पंचवर्षीय योजना में बाल कल्याण केन्द्रों से बच्चों/बच्चियों तथा धात्री माताओं के लिए आहार कार्यक्रम चलाने, समुदाय में पोषाहार सम्बन्धी शिक्षा प्रदान करने, उपलब्ध खाद्यान्नों को खाने योग्य बनाने के लिए उपयुक्त ढंगों का विकास करने, खाने की आदतों में सुधार करने तथा केन्द्र एवं राज्यों में जन स्वास्थ्य विभाग के अधीन पोषाहार अनुभागों की स्थापना करने पर बल दिया गया।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में पहली योजना में प्रावधानित कार्यक्रमों के अतिरिक्त पोषक शोध तथा सर्वेक्षण और चिकित्सालयों में रोगियों को प्रदान किये जाने वाले भोजन में सुधार करने का प्रावधान किया गया।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में बड़े पैमाने पर पोषक खाद्यानों का उत्पादन तथा संरक्षण करने, स्वास्थ्य, कृषि, पशुपालन तथा मत्स्य विभागों के बीच समन्वय स्थापित करने, व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम प्रारम्भ करने, स्थानीय उत्पादों के लिये ग्रामवासियों तथा कृषि प्रसार कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने, भोजन में पोषक तत्वों की प्रचुरता पर बल देने तथा मध्याह्न आहार (Mid-day meals) कार्यक्रम को प्रारम्भ करने का प्रावधान किया गया।

चौथी पंचवर्षीय योजना में शोध के माध्यम से पोषाहार सम्बन्धी ज्ञान में वृद्धि करने तथा शिक्षा, प्रशिक्षण एवं प्रसार सेवाओं के माध्यम से इस ज्ञान का प्रचार करने, भोजन की आदतों में सुधार करने तथा पोषक तत्वों के उपभोग के लिए अपेक्षित ज्ञान प्रदान करने के कार्यक्रम चलाने, पोषाहार सम्बन्धी कमियों का पता लगाने और समस्याग्रस्त समूहों, विशेष रूप से विद्यालय जाने वाले तथा न जाने वाले बच्चों के लिए अतिरिक्त भोजन की व्यवस्था करने तथा पोषाहार कार्यक्रम के कार्यान्वियन से सम्बन्धित सभी संस्थाओं के बीच समन्वय को बढ़ाने के सम्बन्ध में प्रावधान किये गये।

पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में विभिन्न पोषाहार कार्यक्रम के बीच समन्वय स्थापित करने, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत पोषाहार कार्यक्रमों को सम्मिलित किये जाने तथा समेकित बाल विकास सेवाओं का शुभारम्भ किये जाने पर बल दिया गया। समेकित बाल विकास सेवाओं जिनका शुभारम्भ 1975-1976 में किया गया, के अधीन 0-5 वर्ष के बच्चों तथा गर्भवती एवं धात्री माताओं के लिये स्वास्थ्य एवं शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रम चलाये गये।

छठीं पंचवर्षीय योजना में पोषाहार नियोजन तथा पोषाहार से सम्बन्धित विभिन्न योजनाओं में समन्वय पर बल दिया गया।

सावतीं पंचवर्षीय योजना में कुपोषण तथा अर्द्धपोषण की समस्याओं पर नियन्त्रण, पेयजल की व्यवस्था तथा विभिन्न पोषाहार सम्बन्धी कार्यक्रमों के शिक्षण संस्थाओं द्वारा मूल्यांकन के सम्बन्ध में प्रावधान किये गये।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में खाद्य उत्पादन बढ़ाना, खाद्य वितरण में सुधार लाना, क्रयशक्ति में सुधार, काम के बदले अनाज कार्यक्रम, प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष खाद्य सब्सिडी (आर्थिक सहायता), कमजोर वर्गों की

आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए खाद्य की अनुपूर्तितथा एकीकृत बाल विकास सेवाओं के सम्बन्ध में प्रावधान किये गये।

नौवीं पंचवर्षीय योजना में पोषाहार नियोजन तथा पोषाहार से सम्बन्धित योजनाओं में समन्वय पर बल दिया गया।

दसवीं योजना के मुख्य लक्ष्य हैं –

1. शिशु और बाल भोजन और देखभाल की आदतों में सुधार के लिए पोषण और स्वास्थ्य में तीव्रता लाना।
2. रक्ताल्पता की व्यापकता को 25 प्रतिशत तक कम करना और मध्यम गम्भीर रक्ताल्पता को 50 प्रतिशत तक कम करना।
3. जनस्वास्थ्य समस्या के रूप में विटामिन 'ए' की कमी को दूर करना।
4. वर्ष 2010 तक देश में आई.डी.डी. की व्यापकता कम करके 10 प्रतिशत से कम तक लाना।

4.3.3 पेयजल नियोजन -

केन्द्र सरकार ने 1954 में राष्ट्रीय जल प्रदाय एवं स्वच्छता योजना (National Water Supply and Sanitation) प्रारम्भ की जिसके अधीन राज्य सरकारों को नगरीय क्षेत्रों में इन कार्यों के लिए लम्बी अवधि के ऋण तथा ग्रामीण क्षेत्रों के लिए समुचित आर्थिक अनुदान देने की व्यवस्था की गयी। पहली, दूसरी तथा तीसरी योजनाओं में गाँवों में पेयजल की व्यवस्था करने को प्राथमिकता प्रदान की गयी। इन तीनों योजनाओं में इस कार्यक्रम पर कुल मिलाकर 201.1 करोड़ रूपये खर्च किये गये तथा 57,800 गाँवों में पीने के पानी की सुविधा प्रदान की गयी। चौथी पंचवर्षीय योजना में 373 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया। पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण पेयजलके लिए 381.24 करोड़ रूपये निर्धारित किये गये तथा नगरीय क्षेत्रों के लिए 539.17 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया। छठीं पंचवर्षीय योजना में सभी गाँवों में पेयजल की सुविधा प्रदान करने हेतु2007 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया तथा नगरीय क्षेत्रों के लिए 1753.56 करोड़ रूपये की व्यवस्था की गयी। सातवी पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण पेयजल हेतु 2350 करोड़ रूपये तथा नगरीय पेयजल हेतु 2935.64 करोड़ रूपये की धनराशि निर्धारित की गयी।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में नगरीय पेयजल हेतु 70000 करोड़ रूपये तथा ग्रामीण पेयजल हेतु 10055 करोड़ रूपये की राशि निर्धारित की गई।

नौवीं पंचवर्षीय योजना में नगरीय पेयजल हेतु230750 करोड़ रूपये एवं ग्रामीण पेयजल हेतु 8252 करोड़ रूपये निर्धारित की गई।

दसवीं पंचवर्षीय योजना में पेयजल हेतु 14200 करोड़ रूपये का अनुमोदित परिव्यय निर्धारित किया गया। जिसके अन्तर्गत त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम पर 13245 करोड़ रूपये तथा ग्रामीण सफाई कार्यक्रम पर 955 करोड़ रूपये का परिव्यय रखा गया।

4.3.4 शिक्षा नियोजन -

शिक्षा के क्षेत्र में नियोजित विकास का आरंभ योजना आयोग की स्थापना के साथ ही शुरू हुआ। पहली पंचवर्षीय योजना में शिक्षा व्यवस्था में पुर्वाभिमुखीकरण(ओरिएंटेशन), प्राथमिक एवं सामाजिक शिक्षा के विस्तार

एवं व्यावसायिक शिक्षा में सुधार, उपलब्ध शिक्षा सुविधाओं के सुदृढ़ीकरण, महिला शिक्षा, विशेष रूप से ग्रामीण अंचलों में, के विस्तार तथा अध्यापकों, विशेष तौर से महिला अध्यापकों, के प्रशिक्षण के संबंध में प्रावधान किये गये

दूसरी पंचवर्षीय योजना में शिक्षा सुविधाओं में परिमाणात्मक विकास की बात कही गयी। इस योजना में माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा पर अधिक बल दिया गया।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में प्राथमिकताएं दूसरी पंचवर्षीय योजना जैसी ही रहीं। चौथी पंचवर्षीय योजना में गुणात्मक सुधार पर बल दिया गया। अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया गया।

पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में प्रारम्भिक शिक्षा पर पुन बल दिया गया। भवन, श्यमापट्ट, टाट पट्टी इत्यादि जैसी भौतिक सुविधाओं की व्यवस्था को प्राथमिकता प्रदान की गयी। पाठ्यक्रम में सुधार का प्रस्ताव रखा गया। अध्यापक प्रशिक्षण सुविधाओं में वृद्धि करने की व्यवस्था की गयी। माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के व्यवसायीकरण का प्रस्ताव रखा गया। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़े वर्गों के लिए सांयकालीन कक्षायें चलायी गयीं। पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने की बात की गयी। उन्नत शिक्षा के लिए केन्द्र स्थापित करने तथा कम्प्यूटर सुविधाओं का विकास करने हेतु प्रावधान किया गया। राष्ट्र भाषा विकास के लिए दो हजार अतिरिक्त हिन्दी अध्यापकों की नियुक्ति का प्रस्ताव रखा गया। राष्ट्रीय सेवा योजना तथा नेहरू युवक केन्द्रों को और अधिक सुदृढ़ बनाने की संस्तुति की गयी। तकनीकी शिक्षा में गुणात्मक विकास के लिए नये तकनीकी केन्द्रों तथा शिक्षा की व्यवस्था की गयी। इंजीनियरिंग महाविद्यालयों को खोलने और उन्हें आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित करने का भी प्रस्ताव रखा गया।

छठीं पंचवर्षीय योजना में ये निश्चित किया गया कि 8.26 करोड़ बच्चों को प्राथमिक स्तर पर तथा 2.58 करोड़ को माध्यमिक स्तर पर निवेशित किया जायेगा और इस प्रकार से 6-11 वर्ष के बच्चों में से 95 प्रतिशत तथा 11-14 वर्ष के बच्चों में 50.3 प्रतिशत का प्रवेश सुनिश्चित किया जायेगा। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु अनौपचारिक शिक्षा पर बल दिया गया। इसके साथ ही साथ प्रौढ़ शिक्षा पर भी बल दिया गया और 1977-78 में राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना में सार्वभौमिक की संकल्पना प्रारम्भिक शिक्षा प्रदान करने, 15-33 वर्ष की आयु के लोगों में निरक्षरता को हटाने, शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर व्यवसायीकरण करने, शिक्षा के सभी स्तरों का आधुनिकीकरण करने तथा प्रत्येक जिले में अच्छी शिक्षा की व्यवस्था करने से सम्बन्धित प्रावधान किये गये।

शिक्षा नीति आठवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत लागू हुई जिसकी उपलब्धियां महत्वपूर्ण थीं। नवीं योजना में शिक्षा को सबसे महत्वपूर्ण निवेश माना गया।विशेष क्रियायोजना में शिक्षा को सबसे महत्वपूर्ण माना गया है।

सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा की संकल्पना पंचायतीराज संस्थाओं, राज्य एवं केन्द्र संस्थाओं स्वैच्छिक संस्थाओं, सामाजिक एवं अन्य समूहों के प्रयासों से सम्भव हो पायेगी ।प्रौढ़ शिक्षा के ऊपर बल देना बहुत आवश्यक है, सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा (UEE) कार्यक्रम की तरह इसे भी सबकी साझेदारी से आगे बढ़ाना होगा।

माध्यमिक शिक्षा हेतु पाठ्यक्रम में बदलाव किए गए। छात्रवृत्ति, छात्रावास व अन्य सुविधायें प्रदान की गयी जिससे महिलाओं एवं अन्य पिछड़े समूहों के सदस्यों का शैक्षिक स्तर ऊपर उठ सके।

शिक्षा के व्यवसायीकरण पर बल दिया गया तथा मुक्त शिक्षा प्रणाली एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली जैसी अन्य प्रणालियां उपलब्ध करायी गयीं। जिससे साक्षरता बढ़ सके।

अध्यापकों की सेवावधि में समय-समय पर प्रशिक्षण आयोजित किया जायेगा तथा शिक्षण पूर्व प्रशिक्षण दिया जाएगा। शिक्षा की नवीनतम तकनीकों का अध्ययन एवं उनका इस्तेमाल सम्भव कराया जाएगा।

1951-2011 तक की साक्षरता दर के आंकड़े निम्नलिखित हैं:

	पुरुष	महिला	योग
1951	24.95	7.93	16.67
1961	34.44	12.95	24.02
1971	39.44	39.45	29.45
1981	56.50	29.85	43.67
1991	64.13	29.29	52.21
2001	75.85	54.16	65.37
2011	80.9	64.6	73

2.3.5 परिवार नियोजन -

पहली पंचवर्षीय योजना में परिवार नियोजन के नाम पर कोई विशेष कार्यक्रम नहीं प्रस्तावित किये गये थे। केवल सरकारी अस्पतालों तथा स्वास्थ्य केन्द्रों पर स्वेच्छानुसार आने वाले विवाहित दम्पत्तियों को परिवार नियोजन सम्बन्धी तरीकों का ज्ञान कराने, परिवार नियोजन के व्यावहारिक पक्ष को सुदृढ़ बनाने तथा शिक्षा के माध्यम से परिवार को अपनाने के लिए प्रेरित करने तथा मासिक धर्म चक्र को ध्यान में रखते हुए आत्म-संयम कर परिवार को नियोजित करने की बात कही गयी।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में परिवार नियोजन कार्यक्रम की आधार शिला रखी गयी। केन्द्रीय स्तर पर नियोजन निदेशालय की स्थापना की गयी तथा राज्य स्तर पर परिवार नियोजन अधिकारी के पद का सृजन किया गया। इस योजना में परिवार नियोजन के आधुनिक ढंगों से सम्बन्धित ज्ञान का प्रसार करने, परिवार नियोजन क्लीनिकों की स्थापना के माध्यम से निरोधों का वितरण करने तथा नसबन्दी को प्रोत्साहन प्रदान करने से सम्बन्धित प्रावधान किये गये।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय स्तर पर परिवार नियोजन सम्बन्धी शिक्षा का प्रसार करने, सीमित परिवार की अवधारणा को समुदाय द्वारा स्वीकार कराने हेतु प्रयास करने, 90 प्रतिशत विवाहित दम्पत्तियों को परिवार नियोजन की जानकारी कराने, लूप विधि को प्रारम्भ करने, क्षेत्रीय परिवार नियोजन निदेशालयों की स्थापना करने, परिवार नियोजन से सम्बन्धित कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था करने, घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर परिवार नियोजन से सम्बन्धित विभिन्न तरीकों के गुणों एवं सीमाओं के बिय में अनौपचारिक रूप से बातचीत करते हुए अर्थात् कैफेटीरिया अभिगम अपनाते हुए लक्ष्य दम्पत्ति को उसके द्वारा सर्वोत्तम समझे गये तरीके को अपनाने के लिए प्रेरित करने, तथा निरोध को लोकप्रिय बनाने से सम्बन्धित प्रावधान किये गये।

चौथी पंचवर्षीय योजना में मातृ तथा शिशु कल्याण कार्य को परिवार नियोजन कार्यक्रम के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया। इसमें माताओं तथा बच्चोंमें पोषाहार की कमी को दूर करने,अन्धेपन को रोकने के लिये विटामिन ‘ए’ की कमी को दूर करने, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत परिवार नियोजन को सम्मिलित करने तथा मातृ तथा शिशु कल्याण से सम्बन्धित कार्य को परिवार कल्याण, विशेष रूप से परिवार नियोजन, के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाने तथा इसका नाम बदलने से सम्बन्धित प्रावधान किये गये।

पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में परिवार कल्याण पर विशेष बल दिया गया। 1976 में राष्ट्रीय जनसंख्या नीति निर्धारित की गयी। परिवार नियोजन को स्वीकार कराने के लिए विशेष अभियान चलाये गये। 1 हजार प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों तथा 325 तालुका स्तर के चिकित्सालयों में नसबन्दी की सुविधा उपलब्ध कराने की योजना बनायी

गयी। भारत जनसंख्या परियोजना का शुभारम्भ किया गया। 288 नये ग्रामीण परिवार कल्याण केन्द्रों की स्थापना का प्रावधान किया गया।

छठीं योजना में लोगों को परिवार नियोजन स्वीकार करने के लिए दबाव न डालकर समझाने-बुझाने, परिवार की सीमा को 4.2 से घटकार 2.3 निर्धारित करने, जन्मदर को 33 से घटाकर 21 तक करने, मृत्युदर को 14 से घटाकार 9 तक लाने, शिशु मृत्युदर को 129 से घटाकर 60 तक लाने, तथा नियोजन के अधीन सम्मिलित किये गये दम्पत्तियों की संख्या को 22 प्रतिशत से बढ़ाकर 60 प्रतिशत करने से सम्बन्धित प्रावधान किये गये।

सातवीं पंचवर्षीय योजना में में 42 प्रतिशत दम्पत्तियों को गर्भ निरोध की सीमा में लाने अशोधित जन्मदर को 29.1 प्रतिशत, अशोधित मृत्युदर को 10.4 प्रतिशत तथा बाल मृत्युदर को 90 प्रतिशत तक लाने, सार्वभौमिक टीकाकरण करने, प्रसवपूर्ण सेवाओं के विस्तार क्षेत्र को 75 प्रतिशत तक बढ़ाने से सम्बन्धित प्रावधान किये गये। इन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु उपस्वास्थ्य केन्द्रों को आधुनिक बनाने, ग्रामीण स्वास्थ्य निदेशकों, बहुउद्देशीय कार्यकर्ताओं तथा अन्य सहायकों को प्रशिक्षित करने, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर सभी रिक्त स्थानों को भरने तथा इन केन्द्रों पर सभी सुविधायें करने, तहसील स्तर पर 400 स्वास्थ्य केन्द्रों को स्थापित करने, स्वयं सेवी संस्थाओं को परिवार नियोजन के लिए प्रोत्साहित करने, शहरों में विशेष प्रकार के कार्यक्रम आयोजित करने तथा पूरे जिले में कम से कम एक चिकित्सालय में नसबन्दी किये हुये मामलों में नस को पुनः जोड़ने की सुविधा उपलब्ध कराने सम्बन्धी प्रावधान किये गये।

आठवीं योजना में परिवार नियोजन की रणनीति के अंतर्गत -

दिसम्बर 1991 में राष्ट्रीय विकास परिषद के सम्मुख पेश किए गए योजना आयोग के प्रलेख "जनसंख्या नियन्त्रण-चुनौतियां एवं रणनीतियाँ" में उल्लेख किया गया : "जनसंख्या विस्फोट जो हमारे देश के सामाजिक – आर्थिक विकास के सभी प्रयासों को निष्फल बनाता जा रहा है, हमारी सबसे महत्वपूर्ण समस्या है। 1991 की जनगणना से यह बात साफ हो गयी है कि जनसंख्या की वृद्धि दर में मात्र कमी हुई है।1971-1981 के दशक के दौरान 2.2 प्रतिशत से 1981-1991 के दशके में 2.11 प्रतिशत, किन्तु 2 प्रतिशत की वृद्धि दर अभी भी बहुत ऊँची है। यदि जनसंख्या की वृद्धिदर वर्तमान स्तर पर बनी रहती है, तो इस शताब्दी के अन्त तक हमारी आबादी लगभग 100 करोड़ हो जायेगी और 2040 तक यह दुगुनी होकर170 करोड़ तक पहुँच जाएगी। इतनी बड़ी जनसंख्या का प्रबंध वस्तुत: असम्भव हो जाएगा और भरसक प्रयास करने के बावजूद इतनी बड़ी जनसंख्या के लिए जीवन की बुनियादी आवश्यकताएं भी उपलब्ध नहीं करायी जा सकेंगी...... अत: यह अनिवार्य हो जाता है कि जनसंख्या नियन्त्रण को सर्वोच्च प्राथमिकता दिए जाने पर जोर दिया गया।"

परिवार कल्याण कार्यक्रमों की प्रगति की समीक्षा से पता चलता है कि सन् 2000 तक राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति द्वारा निर्धारित लक्ष्य प्राप्त करना सम्भव हो सकेगा। चाहे शिशु मृत्युदर को 9 प्रति हजार तक कम करना और शिशु मृत्युदर को स्वास्थ्य सेवाओं और माता एवं बालस्वास्थ्य की देखभाल के कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप कम करके 60 प्रति हजार तक कम करना तो सम्भव हो सकेगा किन्तु जन्मदर में आवश्यक कमी करके इसे 21 प्रति हजार और परिणामत: जनसंख्या वृद्धि दर को 1.2 प्रतिशत तक कम करना व्यवहार्य प्रतीत नहीं होता। यदि ये लक्ष्य सन् 2010 तक भी प्राप्त करने हों, तो भी इसके लिए भारी प्रयास करना होगा जिसका आधार जनसंख्या नियन्त्रण पर सम्पूर्ण दृष्टिकोण होना चाहिए जिसमें परिवार नियोजन उपायों के साथ-साथ सामाजिक-आर्थिक उपाय भी करने होंगे।

अत: आठवीं योजना के अन्त तक शिशु जन्मदर को कम करके 26 प्रति हजार और शिशु मृत्युदर को कम करके 70 प्रति हजार का लक्ष्य प्राप्त कर लिया गया है। यह एक सन्तोषजनक उपलब्धि है।

नौवीं योजना के दौरान परिवार नियोजन

आठवीं योजना की प्रगति संतोषजनक है। इसके दौरान शिशु जन्मदर 1996 में 27.4 प्रति हजार हो गयी और शिशु मृत्युदर 1996 में प्रति हजार हो गयी। इसके अतिरिक्त दम्पत्ति सुरक्षा दर मार्च 1997 तक 45.5 प्रतिशत के स्तर पर पहुँच गयी।

नौवीं योजना (1997-2000) में जनसंख्या वृद्धि में योगदान के लिए तीन कारण तत्वों को उत्तरदायी माना है:

1) प्रजनन आयु वर्ग में जनसंख्या का योगदान बहुत बड़ा है और इसका जनसंख्या की वृद्धि में योदान 60 प्रतिशत आंका गया। ध्यान देने योग्य बात यह है कि जहाँ 15-44 आयु वर्ग में विवाहित स्त्रियों की संख्या 1961 में 788 लाखी थी, इस संख्या के 1,442 लाख हो जाने का अनुमान है।
2) गर्भ निरोधकों की आवश्यकता की पूर्ति न हो सकने के परिणामस्वरूप जनसंख्या की वृद्धि में 20 प्रतिशत योगदान का अनुमान लगाया गया।
3) उच्च शिशु मृत्युदर के परिणामस्वरुप उच्च अनिच्छित प्रजनन-दर हो जाने से जनसंख्या में 20 प्रतिशत योगदान का अनुमान है।

नौवीं योजना में यह आशा की गयी थी कि प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य देखभाल में वृद्धि के फलस्वरूप सन् 2002 तक शिशु मृत्युदर की निम्न सीमा अर्थात् 50 प्रति हजार, रूक्ष जन्मदर 23 प्रति हजार सकल जनन दर 2.6 प्राप्त की जा सकेगी।

प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य देखभाल कार्यक्रम में निम्नलिखित बातों को शामिल किया गया :

1. मातृ एवं बाल स्वास्थ्य देखभाल को प्रभावी बना कर सुरक्षित मातृत्व और बाल जीवन-शेष का आश्वासन देना।
2. अनिच्छित गर्भधारण रोकने के लिए गर्भ निरोधकों की अधिक मात्रा में उपलब्धता।
3. कमजोर वर्गों के लिए प्रभावी पोषण सेवाएं उपलब्ध कराना और
4. यौन-सम्बन्धी संक्रामक रोगों और स्त्रियों के गुप्तरोगों का उपचार करना।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जनसंख्या नीति पत्र में इस बात पर बल दिया गया कि परिवार नियोजन के लिए कुल सार्वजनिक क्षेत्र योजना परिव्यय का लगभग 3 प्रतिशत उपलब्ध कराया जाना चाहिए जबकि पहली योजनाओं में यह केवल 1.8 प्रतिशत ही रहा।

दसवीं योजना के दौरान परिवार नियोजन -

उर्वरता, मृत्युदर और जनसंख्या वृद्धि दर में कमी लाना दसवीं योजना के दौरान प्रमुख लक्ष्य थे।

I. आई एम आर में 2007 तक 45 प्रति हजार और 2012 तक 28 प्रति हजार तक कमी लाना।
II. मातृ-मृत्युदर अनुपात में 2007 तक 2 प्रति हजार जीवित जन्म और 2012 तक 1 प्रति हजार जीवित जन्म तक कमी लाना।
III. 2001-2011 के बीच जनसंख्या की दशाब्दिक वृद्धि दर में कमी करके इसे 16.2 तक लाना।

प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य देखभाल कार्यक्रम में निम्नलिखित शामिल किये गये:

1. जनांकिकीय लक्ष्यों के बजाय सक्षम युगलों को उनके प्रजनन लक्ष्य को प्राप्त करने पर बल देना।
2. परिवार नियोजन और मातृ तथा बाल स्वास्थ्य के सम्बन्ध में अनेक समानान्तर कार्यक्रमों के बजाय महिलाओं और बच्चोंके लिए एकीकृत स्वास्थ्य देखभाल।
3. मात्रात्मक पहुँच के बजाय देखभाल की कोटि और मात्रा पर बल देना।

4. विधि विशिष्ट गर्भ निरोध लक्ष्यों के बजाए अवांछित गर्भ करने के लिए गर्भ निरोध हेतु पूरी न हुई जरूरतों को पूरा करना।

4.3.6 आवास नियोजन -

पहली, दूसरी, तीसरी तथा चौथी पंचवर्षीय योजना में छूट युक्त औद्योगिक आवास योजना, निम्न आय समूह आवास योजना, मलिन बस्ती सफाई एवं सुधार योजना, ग्रामीण आवास योजना, श्रम आवास योजना, प्रयोगात्मक आवास योजना, केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के कार्यालयों एवं आवासों की योजना इत्यादि कई योजनाएं प्रारम्भ की गयीं।

पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में समाज के पिछड़े वर्गों की आवासीय स्थिति में सुधार लाने के लिए राज्य आवास परिषदों द्वारा आवासीय बस्तियाँ बनाने का प्रावधान किया गया। ग्रामीण अंचलों में भूमिहीन श्रमिकों के लिए आवास स्थल प्रदान करने की व्यवस्था की गयी।

छठीं पंचवर्षीय योजना में भूमिहीन श्रमिकों को आवासीय सुविधायें सुनिश्चित करानेका निर्णय लिया गया। इसके लिए आवास स्थल तथा मकान बनाने के लिए आवश्यक सामान उपलब्ध कराने, पीने के पानी की व्यवस्था करने तथा सम्पर्क मार्गों का निर्माण करने का प्रावधान किया गया। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के माध्यम से आवासीय समस्या का समाधान करने पर बल दिया गया। आवास एवं नगर विकास निगम तथा सामान्य बीमा निगम ने ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों में मकान बनाने के लिए ऋण देना प्रारम्भ किया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना में आत्मसहायता पर आधारित आवास निर्माण को प्रोत्साहित देने, आवास स्थल प्रदान किये जाने के लिए चयनित किये जाने के बावजूद इसे न प्राप्त कर पाने वाले ग्रामीण परिवारों को आवास स्थल उपलब्ध कराने तथा कम लागत के आवास बनाने से सम्बन्धित प्रावधान किये गये।

नौवीं पंचवर्षीय योजना में विशेषतया पिछड़े वर्ग के आवास पर विशेष बल दिया गया है जिनके अर्न्तात गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले लोग, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति, अपंग, श्रमिक वर्ग तथा बस्तियां थीं, इन वर्गों के लिए सरकार के द्वारा प्रावधान दिये गये तथा उनके लिए अलग से आवास खण्ड की व्यवस्था की गयी। सार्वजनिक क्षेत्र को गरीबों के आवास के कार्यभार को अपने कन्धों पर उठाने के लिए उन्हें प्रलोभन तथा छूट के माध्यम से आकर्षित किया गया।

दसवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण तथा पिछड़े वर्ग के परिवारों को आवासों को कम लागत में उपलब्ध कराना तथा सार्वजनिक क्षेत्रों का ध्यान इस ओर पूर्णतया आकर्षित करना एवं पर्यावरण का ध्यान रखते हुए सभी के लिए आवास की सुविधा प्रदान करना।

4.3 भारत में सामाजिक नियोजन की समस्याएँ

भारत में सामाजिक नियोजन की प्रमुख समस्याएं निम्नलिखित हैं :

1. योजना निर्माण तथा कार्यान्वयन की पृथक संस्थाओं का पाया जाना।
2. कार्यान्वयन की अपेक्षा योजना निर्माण पर अधिक बल दिया जाना।
3. सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन को पृथकता में देखने के साथ-साथ इनसे सम्बन्धित विभिन्न तत्वों को भी अलग-अलग देखे जाने के कारण बनाई जाने वाली योजनाओं में आवश्यक सम्पूर्णता के विचार का अभाव।
4. प्रौद्योगिक का अंधानुकरण न कर क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सर्वाधिक उपयुक्त प्रौद्योगिक को प्रयोग में लाने के लिए अपेक्षित समुचित मनोवृत्ति का अभाव।

5. यथार्थवादी आँकड़ों का उपलब्ध न हो पाना।
6. ग्रामीण अंचलों में गांवों को तथा नगरीय अंचलों में मुहल्ले को नियोजन की इकाई न मानकर योजनाओं का निर्माण किया जाना।
7. योजनाओं का निर्माण करते समय क्षेत्र में कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं को उचित रूप से सम्मिलित न किया जाना।
8. स्थानीय स्तर के लोगों का योजनाओं के निर्माण में सम्मिलित न किया जाना और इसके परिणामस्वरूप उनके द्वारा योजनाओं को ऊपर से थोपा हुआ समझा जाना, और इन योजनाओं के कार्यान्वयन में सहयोग देने के बजाय इनसे दूर रहने अथवा कतराने की प्रवृत्ति का पाया जाना।
9. योजना निर्माण एवं कार्यान्वयन में अपेक्षित जन सहभागिता की कमी एवं सबसे नीचे के स्तर पर योजना को लागू करने वाले कर्मचारियों को योजना निर्माण की प्रक्रिया में सम्मिलित न किये जाने के परिणामस्वरूप विशिष्ट समस्याओं एवं लोगों की अनुभूत आवश्यकताओं का योजनाओं में समुचित समावेश न हो पाना।
10. योजना निर्माण की प्रक्रिया को नीचे से प्रारम्भ करते हुए ऊपर तक न ले जाकर इसके विपरीत ऊपर से प्रारम्भ कर नीचे कर लाया जाना।
11. योजना निर्माण की प्रक्रिया में जन-प्रतिनिधियों एवं सरकारी तन्त्र की मनोवृत्तियों तथा मूल्यों में पायी जाने वाली विभिन्नताओं के कारण खींचतान होना।
12. योजनाओं में ऐसी शब्दावली का प्रयोग किया जाना जो योजना से लाभान्वित होने वाले व्यक्तियों की समझ से पूरी तरह से परे हो।
13. योजनाओं का निर्माण करते समय ऐसे लक्ष्यों को निर्धारित कर दिया जाना जिनकी प्राप्ति वर्तमान संसाधनों की पृष्ठभूमि में असम्भव होती है।
14. लक्ष्यों की उपलब्धि को आवश्यक शर्त बना दिये जाने तथा इनकी पूर्ति न कर पाने पर ऐसे योग्य एवं निष्ठावान कर्मचारियों के मनोबल का गिरना जो भरसक प्रयास करने के बावजूद कुछ ऐसे अपरिहार्य कारणों से जो उनके नियन्त्रण से परे हैं, इन लक्ष्यों की पूर्ति नहीं कर पाते।
15. योजना के अन्तर्गत सार्वजनिक क्षेत्र से सम्बन्धित अनेक क्रियाओं के सम्पादन का उत्तरदायित्व निजी क्षेत्रों को दिया जाना।
16. देश के वर्तमान सरकारी तन्त्र से सम्बन्धित अधिकारियों में अपने को विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों से अधिक योग्य समझने की दुष्प्रवृत्ति का पाया जाना।
17. योजना के निर्माण एवं कार्यान्वयन दोनों ही स्तरों पर लगी हुई कर्मचारियों की एक बहुत बड़ी फौज द्वारा अपने निर्धारित कर्तव्यों का समुचित निर्वाह न किया जाना और उनके द्वारा अपने पदों का अपने व्यक्तिगत हितों एवं स्वार्थों की पूर्ति हेतु दुरूपयोग करते हुए भ्रष्टाचार किया जाना।
18. समय से वित्तीय संसाधनों का उपलब्ध न हो पाना और एक सीमित अवधि के दौरान ही निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रयास किया जाना और इसके परिणामस्वरूप योजनाओं के कार्यान्वयन की गुणवत्ता में कमी आना।
19. सरकार के विभिन्न कार्यक्रमों के बीच तथा सरकारी विभागों एवं गैर सरकारी संगठनों के बीच समन्वय की कमी और इसके परिणामस्वरूप कार्य की पुनरावृत्ति तथा समय, प्रयास एवं धन की बर्बादी।

20. वर्तमान सरकारी तंत्र में स्थानान्तरण, विशेष रूप से उच्च अधिकारियों के कारण योजनाओं के निर्माण एवं कार्यान्वयन में उत्पन्न होने वाले अवरोध।

4.4 सारांश

प्रस्तुत अध्याय भारत में सामाजिक नियोजन के अंतर्गत सामाजिक नियोजन पर प्रकाश डालते हुए भारत में सामाजिक नियोजन के क्षेत्रों पर चर्चा की गई है। सामाजिक नियोजन के क्षेत्र में खास तौर से स्वास्थ्य नियोजन, पोषाहार नियोजन, शिक्षा नियोजन, परिवार नियोजन, तथा आवास नियोजन पर चर्चा की गयी है। स्वास्थ्य मिशन, राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम, राष्ट्रीय शहरी स्वास्थ्य मिशन, जननी सुरक्षा योजना, प्रधान मंत्री स्वास्थ्य सुरक्षा योजना, आयुर्वेद, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी सिद्ध एवं सम चिकित्सा (आयुष) (AYUSH) इंदिरा गांधी आवास नियोजन के अंतर्गत विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में आवास नियोजन के अंतर्गत शहरी तथा ग्रामणी क्षेत्रों में पर्यावरण का ध्यान रखते हुए, सभी के लिए मकान की सुविधा उपलब्ध कराना तथा आत्म सहायता पर आधारित आवास निर्माण को प्रोत्साहन देना। अंत में भारत में सामाजिक नियोजन के समस्याओं की चर्चा की गई है जिसे विभिन्न बिंदुओं के माध्य से समझाने की कोशिश की गई है।

4.5 बोध प्रश्न -

1. स्वास्थ्य नियोजन की रुपरेखा को समझाएं ।
2. आवास नियोजन पर प्रकाश डालिए।
3. भारत में सामाजिक नियोजन की समस्याओं को स्पष्ट करें।
4. शिक्षा नियोजन पर एक निबंध लिखिए ।

4.6 सन्दर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ -

1. धर्मवीर (2007) : *परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र.* जयपुर :राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी।
2. महीपाल (2012): *ग्राम नियोजन* नई दिल्ली:नेशनल ट्रस्ट बुक।
3. भूषण, बिद्या एवं सचदेवा, डी .आर (2012) : *समाजशास्त्र.* नई दिल्ली : डार्लिंग किंसले (इंडिया) प्रा.लि.।
4. सिंह, सुरेन्द्र एवं मिश्र, पी .डी & सिंह एएन (2006) : *भारत में सामाजिक नीति, नियोजन एवं विकास.* लखनऊ : देवा पब्लिकेशन।
5. Agnihotri , I.K.&Awasthi, A.K (1999) : *Economic Principles.* Allahabad : Alok prakashn.
6 . Kahan, A.J. (1969) : *Studies in social policy and planning*. New Yark, Russel Sage foundation
7. Singh, Tarlok (1968) : *Social policy, Encyclopedia of Social Work in India vol 02.* Planning commission GOI India
8. https://hi.wikipedia.org/wiki
9. शर्मा,जी.एल. (2015).*सामाजिक मुद्दे* जयपुर :रावत पब्लिकेशन।

इकाई – 5

सामाजिक एवं सतत विकास

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 सामाजिक विकास की अवधारणा
5.3 सामाजिक विकास की विशेषताएँ
5.4 सतत विकास की अवधारणा
5.5 सतत विकास का लक्ष्य एवं उद्देश्य
5.6 सतत विकास की आवश्यकताएँ एवं वैश्विक प्रयास
5.7 सतत विकास एवं आर्थिक विकास तथा पर्यावरण
5.8 सतत विकास की रणनीतियाँ तथा उपागम
5.9 सतत विकास के लिए सुझाव
5.10 सारांश
5.11 बोध प्रश्न
5.12 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

5.0 उद्देश्य -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

1. सामाजिक एवं सतत विकास की विशेषताओं की जानकारी प्राप्तकर सकेंगे।
2. सतत विकास के लक्ष्य एवं उद्देश्योंको व्याख्यायित कर सकेंगे।
3. सतत विकास की आवश्यकताएँ एवं उसके वैश्विक प्रयास के साथ-साथ सतत विकास की रणनीतियों तथा उपागमों का वर्णन कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना –

विभिन्न देशों में जब से नियोजित आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया की शुरूआत की गई है तब से, समाज में होने वाले इन सामाजिक परिवर्तनों के मूल्यांकन की भी आवश्यकता महसूस की गई कि इनका प्रभाव कितना और कैसा है? समूह के आकार में वृद्धि, अर्थव्यवस्था में परिवर्तन, अस्थिर जीवन में स्थिर जीवन का प्रारंभ, सामाजिक संरचना में रूपांतरण, धार्मिक विश्वासों एवं क्रियाओं का महत्व, विज्ञान का विकास, नवीन दर्शन आदि इन सामाजिक परिवर्तनों से संबंधित है। प्राचीन काल से वर्तमान समय तक समाज के लगभग हर एक पहलू में परिवर्तन हुआ। यह बात प्राचीन काल के आदिम और आधुनिक दोनों ही समाजों के लिए समान रूप से लागू होती है। दुनिया में पूँजीवादी

औद्योगीकरण की संक्रमण प्रक्रिया से गुजर रहे देशों के विश्लेषण के लिए सामाजिक सिद्धान्तों का प्रयोग ही सामाजिक विकास है।

विकास एक सामाजिक प्रक्रिया है जो ऐसे परिवर्तनों को लक्षित करती है जो प्रगति की ओर उन्मुख रहते हैं। सामाजिक विकास का संबंध आर्थिक पहलू से है लेकिन आर्थिक पहलू के साथ-साथ यह सामाजिक संस्थाओं तथा सांस्कृतिक तत्वों से भी संबंधित होता है।

अगर हम सतत विकास की बात करे तो सतत विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो न केवल प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर बल देती है, बल्कि उन संसाधनों की बर्बादी पर भी रोक लगाती है। साथ ही सतत विकास एक ऐसी आवश्यकता है जो मात्र कुछ लोगों के लिए नहीं बल्कि सम्पूर्ण लोगों के लिए है।

मानव जीवन में अनेक आवश्यकताएँ होती है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति उपलब्धसंसाधनों में सामान्यत: वनस्पति, पेड़, पौधे, जंगल, खनिज, खाद्यान्न इत्यादि कुछ भी हो सकते है। समाज के विकास के प्रारंभिक दौर में, जनसंख्या की अपेक्षा संसाधनों की अधिकता थी। किन्तु वर्तमान समय में स्थिति बिल्कुल विपरीत हो गयी है।जिसका कारण जनसंख्या का तेजी से बढ़ना है। जनसंख्या जिस अनुपात में बढ़ी उस अनुपात में संसाधनों में कोई वृद्धि नहीं हुई। इस संबंध में विकासशील देशों की स्थिति अत्यंत गंभीर है। भारत जैसे देश में जहाँ जनसंख्यातीव्र गति से बढ़ रही है वहीं उस अनुपात में संसाधनों में वृद्धि नहीं हो रही है। इसकेपरिणाम स्वरूप लोगों को विभिन्न समस्याओं जैसे पानी की समस्या, प्रदूषण की समस्या, ग्लोबल वार्मिंग, गरीबी, बेरोजगारी, वेश्यावृत्ति, भिक्षावृत्ति, भूखमरी इत्यादि का सामना करना पड़ रहा है। जल संकट से आज पूरा देश जूझ रहा है।

हम इस अध्याय में सामाजिक विकास एवं सतत विकास की अवधारणा, लक्ष्य, उद्देश्य, उपागम, आर्थिक विकास रणनीतियां इत्यादि को एक-एक कर समझने की कोशिश करेंगे।

5.2 सामाजिक विकास की अवधारणा -

सामाजिक विकास प्रगति की ओर उन्मुख रहने वाले परिवर्तनों को इंगित करता है। सामाजिक विकास में आर्थिक विकास ही नहीं आता बल्कि इसमें विभिन्न सामाजिक तथा सांस्कृतिक तत्व विद्यमान रहते हैं।

वी.एस. डिसूजा ने सामाजिक विकास को परिभाषित करते हुए लिखा है कि *"सामाजिक विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत एक अपेक्षाकृत सरल समाज एक विकसित समाज के रूप में परिवर्तित होता है।"*

जे.ए. पांसिओ के अनुसार– "विकास एक आंशिक अथवा शुद्ध प्रक्रिया है जो आर्थिक पहलू में परिवर्तन के कारण उत्पन्न होती है। आर्थिक जगत में विकास से तात्पर्य प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोतरी से लगाया जाता है। सामाजिक विकास से तात्पर्य जन संबंधी तथा ढ़ाँचे से है जो किसी समाज को इस योग्यबनाती है कि उसके सदस्यों की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।"

सामाजिक विकास विशेष रूप से कुछ अवधारणाओं से संबंधित है जो इस प्रकार है

1. ऐसे साधन जो एक सरल समाज को जटिल समाज में परिवर्तित कर देते हैं।
2. ऐसे साधन जो सामाजिक, सांस्कृतिक आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।
3. ऐसे संबंध व ढ़ाँचे जो समाज को अपनी आवश्यकताओं के अधिकतम पूर्ति के योग्यबनाते हैं।

5.3 सामाजिक विकास की विशेषताएँ –

1) सामाजिक विकास की सबसे पहली और महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि, सामाजिक विकास के परिणामस्वरूप सरल सामाजिक व्यवस्था जटिल सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तित हो जाती है।
2) सामाजिक विकास के फलस्वरूप सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि हो जाती है।
3) सामाजिक विकास के कारण धर्म के प्रभाव में ह्रास होने लगता है।
4) सामाजिक विकास में सामाजिक परिवर्तन प्रगति के अनुरूप होता है।
5) सामाजिक विकास की दिशा निश्चित होती है।
6) सामाजिक विकास निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है।
7) सामाजिक विकास की अवधारणा सार्वभौमिक होती है।
8) सामाजिक विकास का विषय क्षेत्र अत्यंत व्यापक होता है।
9) सामाजिक विकास प्रौद्योगिकीय विकास पर निर्भर करता है। जिसका प्रमुख केन्द्र बिंदु आर्थिक विकास है।
10) सामाजिक विकास की अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें सामाजिक संबंधों का प्रसार होताहै।

5.4 सतत विकास की अवधारणा

सतत विकास के लिए धारणीय, संपोषणीय, निर्वहनीय, टिकाऊ, शाश्वत या वहनीय विकास आदि शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है। सतत विकास का तात्पर्य विकास के उस अनुकूलतम स्तर से है जो पर्यावरण को क्षति पहुँचाएं बगैर संसाधनों के इष्टतम उपयोग से प्राप्त किया जाता है। इसके बाद पूंजी, कुशल, श्रम,तकनीक आदि के प्रयोग के बावजूद भी यदि अधिकतम विकास अर्थात अंधाधुंध विकास का प्रयास किया जाता है तो पर्यावरण को स्थायी रूप से क्षति पहुँचने लगती है। इस प्रकार विकास का यह स्तर लम्बे समय तक नहीं चल सकता।

जनसंख्या की तीव्र वृद्धि के कारण हमारे संसाधनों का अधिक अंधाधुंध दोहन किया जा रहा है।जिसके कारण अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो गयी है। यह दोहन विकसित और विकासशील देशों में अधिक विकास के अवसरों को ध्यान में रखते हुए किया जा रहा है। विकास से अभिप्राय यह है कि अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर संसाधनो के दोहन पर निर्भर करेगी। परंतु प्राकृतिक संसाधन, जिस पर वर्तमान औद्योगिकरण निर्भर है, सीमित है। अत: विकसित एवं विकासशील देशों की, भावी पीढयो के लिए भी संसाधनो को बचाकर रखना होगा। आर्थिक विकास से जहाँ एक ओर प्राकृतिक संसाधनों का नुकसान हुआ है वही पर्यावरण भी असंतुलित हुआ है। परिणामस्वरूप विकास संबंधी विशेषज्ञों ने वर्तमान एवं भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए, विकास संबंधी एक नवीन अवधारणा पर बल दिया जिसे सतत विकास, अक्षय विकास या वहनीय विकास के नाम से जाना जाता है। सतत विकास का अर्थ यह कि आर्थिक विकास की विकास दर को बढाने के लिए प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण एवं परिस्थितिकी के बचाव को ध्यान में रखकर प्राकृतिक संसाधनों की उत्पादन शक्ति को बनाए रखा जाए।

सतत विकास की इस अवधारणा में पर्यावरण के अनुकूल विकास के साथ ही संसाधनों को भावी पीढयों के लिए बचाए रखने पर बल दिया जाता है।

पहली बार सतत विकास शब्द का प्रयोग IUCN (International Union for Conservation of Nature and Natural Composition) ने अपनी रिपोर्ट *'विश्व संरक्षण रणनीति'* में किया। लेकिन इस शब्द की परिभाषा और कार्य पद्धति की व्याख्या 1987 ई. WCED(World Commission on Environment and Development) ने *'Our Common Future'* नामक रिपोर्ट में की।

इस रिपोर्ट के अनुसार सतत या टिकाऊ विकास वह विकास है, जिसके अंतर्गत भावी पीढयों के लिए आवश्कताओं की पूर्ति करने की क्षमताओं से समझौता किए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्कताओं को पूरा किया

जाता है। अत: पर्यावरण संरक्षण के बिना विकास को निर्वहनीय नहीं बनाया जा सकता है। पर्यावरण संरक्षण और आर्थिक विकास के मध्य एक वांछित संतुलन बनाए रखनाही सतत विकास है।

वर्तमान में सतत विकास का एक वैश्विक दृष्टिकोण बन गया है। 1992 ई. के पृथ्वी सम्मेलन में घोषित एजेंडा – 21 में रियो घोषणा पत्र में इसके प्रति पूर्ण समर्थन व्यक्त किया गया। 2002 ई. के जोहांसबर्ग सम्मेलन का मूल मुद्दा ही सतत विकास था।

सतत विकास का अर्थ यह है कि आर्थिक विकास की दर को बढ़ाने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग न करके पर्यावरण और परिस्थितिकी के बचाव को ध्यान में रखकर प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग किया जाना चाहिए जिससे भावी पीढ़ी के लिए, प्राकृतिक संसाधनों की उत्पादन शक्ति को बचाए रखा जा सके। यहाँ एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग न करके विकास कैसे हो सकता है? मानव की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए बहसे हुई जिसमें यह निर्णय लिया गया कि मानव जाति की समकालीन समाज की चुनौतियों का सामना करने के लिए प्राकृतिक संसाधन सहायक है। विकास के साथ-साथ जनसंख्या, आर्थिक वृद्धि, पूँजी तथा प्रौद्योगिकी उत्पादन में वृद्धि होती है। लेकिन माँगों में बढ़ोतरी का आधार प्राकृतिक संसाधन है और प्राकृतिक संसाधन पर्यावरण पर आधारित होता है जो कि विकास में सहायक है। प्राचीन काल से ही मनुष्य ने अपनी विलासिता के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दुरूपयोग किया। मनुष्य के इस कृत्य ने प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ दिया। जैसेजैसे मानव पर जनसंख्या का दबाव बढ़ता गया, मानव जाति ने अपनी समस्याओं को दूर करने के लिए अधिक से अधिक प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण किया जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण का सीमित उपयोग नहीं हो पा रहा है और गंभीर समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं जो मानव जीवन के अस्तित्व के लिए गंभीर चुनौती हैं। आज वर्तमान समय में मानव जाति ने पर्यावरण को स्वयं ही नष्ट किया है जिसके कारण आज वह संकटों के चक्रव्यूह से घिरा है। मानव बिना चेतना, बिना विचारपूर्वक और बिना संगठन के पर्यावरण का अधिक से अधिक दोहन कर रहा है।

नीतियों एवं कार्यक्रमों को बनाने के उद्देश्य से विकासवादी अर्थशास्त्रियों ने सतत या वहनीय विकास की अवधारणा को विभिन्न अंतर्संबंधित घटकों में विभाजित किया है। नीति और कार्यक्रमों का पूर्णरूपेण परिणाम विकास होता है। अत: कहा जाता है कि उद्देश्य पूर्ण नीति विकास में सहायक होती है। जब हम सतत विकास के परिप्रेक्ष्य में बात कर रहे हैं तो कोई इस बात से परहेज नहीं कर सकता कि सतत विकास एक ऐसा विकास है जिसमें संसाधनों के समुचित प्रयोग पर जोर दिया जाता है। सतत विकास के अंतर्गत पर्यावरण संरक्षण पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है।

सतत विकास की अवधारणा में शामिल किये गये अन्तर्सम्बन्ध घटक इस प्रकार है-

I. ऐसी अर्थव्यवस्था जो स्वस्थ वृद्धिमूलक हो।
II. सामाजिक समानता के प्रति वचनबद्धत हो।
III. पर्यावरण सरंक्षण करने वाली हो।

5.5 सतत विकास का लक्ष्य एवं उद्देश्य –

सतत विकास को ध्यान में रखकर इसके लक्ष्यों एवं उद्देश्योंको निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत स्पष्ट किया जा सकता है-

1. पहले से हुए पर्यावरण व जैविक नुकसान की भरपाई करना।

2. भविष्य में देश में विकास के कारण होने वाले नुकसान से रक्षा करना।
3. संसाधनों का सफल प्रबंधन करना ताकि मानव की परिवर्तनशील आवश्यकताओं को संतुष्ट किया जा सके।
4. प्रदूषण एवं पर्यावरण क्षरण पर नियंत्रण करना।
5. सामाजिक समानता और सामाजिक न्याय के प्रति वचनबद्धता।
6. जैविक सह अस्तित्व की रचना करना।
7. विकास के अवसरों में केवल कुछ ही लोगों को भागीदार न बनाकर सभी लोगों को अवसर प्रदान करना।

5.6 सतत विकास की आवश्यकताएँ एवं वैश्विक प्रयास –

पर्यावरण एवं विकास के नाम पर वैश्विक आयोग की स्थापना सभी विकास संघो की सामान्य सभा द्वारा हुई और इस आयोग ने अनेक सम्मेलनों, वार्ताओं का आयोजन वैश्विक स्तर पर किया। विकास के नाम पर पर्यावरण का दोहन बिना सोचे समझे किया गया। इससे सारा परिस्थितिकीय तंत्र प्रभावित हो रहा है। विश्व का प्रत्येक राष्ट्र अपनी आय का एक बड़ा भाग सैन्य शक्ति की वृद्धि में लगा रहा है। इसके लिए परमाणु परीक्षण किया जा रहा है, परमाणु शक्ति में बढ़ोतरी के कारण वातावरण तो प्रभावित हो ही रहा है साथ ही साथ इसके लिए खनिज संसाधनो का दोहन भयावह विषय बनता जा रहा है। प्रत्येक राष्ट्र ऐसा इसलिए कर रहा है क्योंकि उसे इस बात का भय सता रहा कि कहीं पड़ोसी मुल्क हमारी सीमाओं का अतिक्रमण न कर ले। इस प्रकार पूरा विश्व अविश्वास के वातावरण में जी रहा है। ऐसी स्थिति में जबकि पूरा विश्व गरीबी, बेरोजगारी, आर्थिक मंदी, विभिन्न प्रकार की गंभीर बीमारियों एवं आपदाओं से जूझ रहा है, इन सबसे निजात पाने के लिए एक ही विकल्प बचता है वह अच्छे विकास की विचारिता। जिसके लिए सतत विकास की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से हो सकती है-

1. गरीबी उन्मूलन के लिए
2. जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण के लिए
3. संसाधनों के असमान वितरण को दूर करने के लिए।
4. मानव संसाधन का ऐसा विकास करना जो अधिक स्वस्थ, सक्षम और प्रशिक्षित हो।
5. विकेन्द्रीकृत एवं अधिक भागीदारी वाली सरकार के लिए।
6. विभिन्न देशों मे अधिक समानतामूलक व उदार आर्थिक व्यवस्था के लिए ताकि उत्पादन में वृद्धि हो सके तथा स्थानीय स्तर पर उपभोग या खपत में वृद्धि की जा सके।
7. जैव तंत्र की विविधता की बेहतर समझ हेतु ताकि पर्यावरण की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए विकास कार्यक्रम की नीतियाँ बनायी जा सके। पर्यावरण की समस्याओं का समाधान स्थानीय स्तर पर खोजा जा सके तथा पर्यावरण को बेहतर ढंग से नियंत्रित किया जा सके।

सतत विकास हेतु किये गये वैश्विक प्रयास –

सतत विकास हेतु वैश्विक स्तर पर किये गये प्रयासों को निम्नलिखित क्रम में रखकर समझा जा सकता है –

- 1972 ई. में स्वीडन की राजधानी स्टाक होम में, मानवीय पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन का आयोजन किया गया।
- इस सम्मेलन में आम सहमति के आधार पर संयुक्त राष्ट्र संघ के अधीन संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम का आरंभ हुआ।

- 1982 में स्टाकहोम में ही पर्यावरण की बिगड़ती हालत को देखते हुए पर्यावरण एवं विकास पर विश्वआयोग (WCED) की स्थापना की गयी।
- पृथ्वी सम्मलेन 1992 में स्वीकार की गयी नीति के अनुसार हुई प्रगति का आकलन करने के लिए 1997 में न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्र महासभा का अधिवेशन किया गया।
- 1997 में न्यूयार्क में हुये अधिवेशन के आधार पर 2002 में दक्षिण अफ्रीका के जोहान्सबर्ग में सतत विकास पर विश्व शिखर सम्मेलन का आयोजन किया गया।

पृथ्वी सम्मेलन 2002 - पृथ्वी सम्मेलन 2002 का आयोजन दक्षिण अफ्रीका के जोहान्सबर्ग शहर में किया गया जिसमें आम सहमति से मुख्य मुद्दे निकलकर सामने आये-

- ✓ स्वच्छता संबंधित सुविधाओं से वंचित लोगों की संख्या में 2015 तक 50 प्रतिशत तक कमी लाना।
- ✓ पर्यावरण की क्षति को रोकन के लिए सौर ऊर्जा एवं पवन ऊर्जा के स्रोतों के इस्तेमाल को बढ़ाना क्योंकि ये स्रोत पुन: प्राप्त किये जो सकते है तथा ईंधन,पेट्रोल, डीजल तथा कोयला के उपयोग को कम करना जिससे कि इसको भीवी पीढ़ी के लिए बचाकर रख जा सके।
- ✓ ऐसे उच्चस्तरीय तथा उचित प्रबंधन को बढ़ावा देना जिससे खतरनाक कचरे को स्वच्छ तरीके से निस्तारित किया जा सके।
- ✓ 2020 ई. तक रसायनों के उत्पादन एवं प्रयोग को मानव पर्यावरण हेतु सुरक्षित बनाने का लक्ष्य निर्धारित करना।
- ✓ समुद्रीय पारिस्थितिकीतंत्र के संतुलन के लिए विशेष तौर पर निर्धन देशों में भोजन में प्रमुख स्रोत के रूप में मछलियों को महत्व प्रदान करते हुए इनकी स्टाक में आई कमी के पूरा करना।
- ✓ विकास के निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति बढ़ाने के लिए निर्धन देशों की आर्थिक सहायता बढ़ायी जाय।
- ✓ पट्टे संबंधी विश्वव्यापार संगठन का समझौता निर्धन देशों को दवाएँ उपलब्ध कराने से नहीं रोकेगा, जिससे निर्धन देश अपने देशवासियों को गंभीर रोगों की सस्ती दवाएँ उपलब्ध करा सकता है।
- ✓ वैश्वीकरण के अच्छे तथा बुरे दोनों प्रकार के प्रभावों को ध्यान में रखते हुए वैश्विक अर्थव्यवस्था के विकास एवं जीवन स्थितियों में सुधार के लिए समान अवसर मुहैया कराया जाना चाहिए।
- ✓ विकसित देशों में व्यापार संतुलन को असंतुलित करने वाले सब्सिडियों को कम करने की इच्छाशक्ति व्यक्त की जाए जिससे व्यापार एवं पर्यावरण के संबंधो को बढ़ावा दिया जाय।
- ✓ 2010 ई.तक दुर्लभ प्रजाति के प्राणियों तथा वनस्पतियों के विलुप्त होने की दर में कमी लाना।
- ✓ पृथ्वी को संरक्षित करने तथा बचाने का उत्तरदायित्व प्रत्येक राष्ट्रों का है परंतु इस पर होने वाले खर्च का बोझ, विकसित राष्ट्रों को उठाना चाहिए।

5.7 सतत विकास एवं आर्थिक विकास व पर्यावरण –

सतत विकास एवं आर्थिक विकास –

सतत विकास का तात्पर्य केवल पर्यावरण का संरक्षण करना ही नहीं बल्कि इसने विकास एवं वृद्धिकी नवीन अवधारणा को उत्पन्न किया है। यह विश्व के सीमित प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट किये बगैर तथा विश्व की

धारणीयता क्षमता के साथ समझौता किये बगैर यह केवल विशेष लोगों को अधिकार नहीं देता हैं बल्कि सभी के लिए निष्पक्ष एवं समान अवसर प्रदान करता है। सतत विकास एक प्रक्रिया है जिसमें आर्थिक, राजस्व संबंधी, व्यवसाय, कृषि, तथा औद्योगिक नीतियों को इस प्रकार निर्मित करने की कोशिश की जाती है जिससे विकास को सामाजिक, आर्थिक तथा परिस्थितिकीय रूप से संतुलित किया जा सके तथा इन संसाधनों की अक्षयता भी बनी रहे। इसकायह भी अर्थ है कि वर्तमान जनसंख्या की शिक्षा तथा स्वास्थ्य के लिए पर्याप्त निवेश भी किया जाना चाहिए तथा संसाधनों का प्रयोग ऐसे ढंग से किया जाना चाहिए कि पृथ्वी की धारण करने तथा उत्पादक क्षमता के अत्यधिक दोहन द्वारा पारिस्थितिकीय असंतुलन न पैदा हो।

सतत विकास एवं पर्यावरण –

सतत विकास अर्द्धविकसित देशों के लिए अत्यधिक अनिवार्य है। विकास की गतिशील प्रक्रिया के रूप में इसको देखा जाता है। सतत विकास प्रकृति के साथ तटस्थ तथा स्वप्रेरित होता है। सतत विकास को और अधिक समुचित रूप से कहा जाए तो, इसे आर्थिक वृद्धि प्राप्त करने हेतु संरक्षण से युक्त एक प्रगति के रूप में दखा जा सकता है। पर्यावरणीय अर्थशास्त्र को एक ऐसे अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो संसाधनों को उनके एक के बाद एक के उपयोग के बीच इस ढंग से बँटवारा या स्थान का निर्धारण करना सम्मिलित होता है ताकि पर्यावरण के प्रति प्राकृतिक संसाधनों के अवशिष्ट पदार्थों के विसर्जन करने में कमी आती है जिसके फलस्वरूप कल्याण में वृद्धि होती है।

पर्यावरण अर्थव्यवस्था के लिए उर्जा तथा वस्तुओं एवं सुख की अनुभूतियों के लिए अपरिष्कृत प्रकृति प्रदान करता है। इस प्रणाली को पारिस्थितिक तंत्र कहा जाता है।

5.8 सतत विकास की रणनीतियाँ तथा उपागम -

किसी भी देश में सतत विकास की रणनीतियों का नियोजन इस प्रकार होना चाहिए कि उस देश में गरीबी एवं भूखमरी, भविष्य में कभी भी न आ सके। भविष्य को ध्यान में रखकर विकास की रणनीति तय करनी चाहिए। जिससे भविष्य में भी उस देश में खुशहाली बनी रहे और इसे धारणीय विकास के रूप में धारण किया जा सके। इसके लिए निम्नलिखित पूर्व शर्तें आवश्यक है, जिन्हें रणनीतियों के रूप में देखा जाना चाहिए-

1. पर्यावरणीय असंतुलन की कीमत पर सम्पन्नता और उत्पादन स्वीकार नहीं है।
2. देश की सामाजिक संरचना और व्यवस्था इस प्रकार की होनी चाहिए कि वह दलितों एवं गरीबों का कल्याण कर सके तथा समाज के सभी वर्गों को, एक साथ लेकर चल सके। उनमें आपसी वैमनस्य नहीं होना चाहिए।
3. विदेशी या बाहरी प्रौद्योगिकी पर निर्भरता को समाप्त किया जाना चाहिए तथा देश के अंदर स्वदेशी प्रौद्योगिकी के विकास पर बल दिया जाना चाहिए।
4. आर्थिक व्यवस्था स्वार्थी एवं शोषक दृष्टि की नहीं होनी चाहिए।
5. राजनैतिक व्यवस्था कल्याणकारी राज्य और प्रजातंत्र के सिद्धांतों पर आधारित होनी चाहिए।
6. शिक्षा व्यवस्था कौशल युक्त, व्यावहारिक और उपयोगी होनी चाहिए।
7. ऐसी सरकार जिसे सभी वर्गों का समर्थन प्राप्त हो तथा यह सरकार भ्रष्टाचार मुक्त हो।
8. समाज में एक सुदृढ़ पारिवारिक व्यवस्था पायी जानी चाहिए तथा परिवार और व्यक्ति की स्वतंत्रता को स्वीकार की जाती हो।

9. सतत विकास के अंतर्गत मुख्यत: पाँच क्षेत्रों पर बल दिये जाने की आवश्यकता रियो सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव कोफी अन्ना ने व्यक्त की। ये पाँच क्षेत्र-जल एवं सफाई, ऊर्जा, स्वास्थ्य, कृषि तथा जैव विविधता है।

5.9 सतत विकास के लिए सुझाव -

i. मानवीय आवश्यकताओं पर नियंत्रण लगाया जाना चाहिए।
ii. विश्व के सभी देशों को अपने यहाँ गरीबों को समाप्त करने के लिए गरीबी निवारण कार्यक्रम को प्रमुखता से चलाना चाहिए।
iii. विकास के सभी कार्यक्रमों में पर्यावरण संरक्षण पर विशेष बल दिया जाना चाहिए।
iv. सतत विकास के लिए विकसित और विकासशील देशों के बीच संसाधनों का समानतापूर्ण बंटवारा, समानता और सामाजिक न्याय पर आधारित होना चाहिए।

5.10 सारांश –

प्रस्तुत अध्याय में सामाजिक एवं सतत विकास की चर्चा की गई है। जिसमें सामाजिक विकास की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए बताया गया है कि सामाजिक विकास का संबंध केवल आर्थिक पहलू से नहीं है बल्कि इसमें सामाजिक संस्थाओं तथा सांस्कृतिक तत्वों का भी समावेश है। सामाजिक विकास वह प्रक्रिया है जिसके कारण अपेक्षाकृत सरल समाज एक विकसित समाज के रूप में परिवर्तित होता है। सामाजिक विकास के विशेषताओं की चर्चा भी की गयी है। सतत विकास के सन्दर्भ में बताया गया है की यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमताओं में समझौता किये बगैर वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है। तत्पश्चात सतत विकास के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को भी स्पष्ट किया गया है। वर्तमान संदर्भ में सतत विकास की आवश्यकताओं की चर्चा करते हुए सतत विकास के लिए किये गये वैश्विक प्रयासों को भी इसमें सम्मिलित किया गया है। सतत विकास का आर्थिक विकास एवं पर्यावरण विकास के साथ भी संबंध स्थपित किया गया है। सतत विकास की रणनीतियों की भी चर्चा की गई है।

ज्ञान शांति मैत्री

5.11 बोध प्रश्न –

1. सामाजिक विकास की अवधारणा से आप क्या समझते हैं?
2. सामाजिक विकास की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3. सतत विकास की अवधारणा का उल्लेख कीजिए।
4. सतत विकास की रणनीतियों पर प्रकाश डालें।
5. सतत विकास की आवश्यकता को स्पष्ट करें।

5.12 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. सिंह, सुरेन्द्र एवं मिश्र,पी .डी & सिंह ए.एन. (2006): *भारत में सामाजिक नीति*, नियोजन एवं विकास, लखनऊ :देवा पब्लिकेशन।

2. भूषण, बिद्या एवं सचदेवा, डी.आर. (2012): *समाजशास्त्र* नई दिल्ली:डार्लिंग किंग्सले (इंडिया)प्रा.लि.

3. Agnihotri, I.K. & Awasthi, A.K. (1999): *Economic Principles*, Allahabad : Alok prakashn.

4. Kahan, A.J. (1969): *Studies in social policy and planning*, NewYork : Russel Sage Foundation.

5. Singh,Tarlok(1968); Social policy ,Encyclopedia of Social Work in India vol 02 Delhi : Planning Commission GOI.

6. Singh, S.K. & P.K (2000) : *Economic Development and Planning*. New Delhi : S.K. Chand and Company Ltd.

ज्ञान शांति मैत्री